रोमा समुदायः
प्रवासित भारतीय
(उत्पत्ति, भाषा एवं संस्कृति)

डॉ रिमझिम सिन्हा

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Dr Rimjhim Sinha 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-81-69956-00-0

Cover design: Deepak Katheria
Typesetting: Manisha Rawat

First Edition: July 2026

प्राक्कथन

मानव सभ्यता का विकास केवल राजसत्ताओं, साम्राज्यों एवं युद्धों की घटनाओं तक सीमित नहीं रहा है, अपितु यह निरन्तर गतिशील मानव-समुदायों, उनके प्रव्रजन, सांस्कृतिक समन्वय तथा सामाजिक रूपान्तरण की दीर्घ ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम भी है। आदिकाल से ही विभिन्न मानव-समुदाय समय, परिस्थिति, आजीविका, राजनीतिक अस्थिरता एवं बाह्य आक्रमणों के प्रभाव में अपने मूल निवास-स्थानों से विस्थापित होकर दूरस्थ प्रदेशों में नवीन जीवन-व्यवस्थाओं का निर्माण करते रहे हैं। इस प्रकार मानव-प्रवास का इतिहास वस्तुतः मानव सभ्यता के विस्तार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान तथा सामाजिक विकास का इतिहास है।

विश्व के विविध प्रवासी समुदायों में रोमा समुदाय का विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह समुदाय अपनी विशिष्ट जीवन-पद्धति, लोक-संस्कृति, संगीत-परम्परा, भाषिक संरचना तथा सामुदायिक चेतना के कारण समस्त विश्व में विशेष पहचान रखता है। यद्यपि वर्तमान समय में रोमा समुदाय मुख्यतः यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों जैसे रोमानिया, हंगरी, स्पेन, बुल्गारिया तथा सर्बिया, में निवास करता है, तथापि उसकी सांस्कृतिक स्मृतियों, लोक-परम्पराओं एवं भाषिक तत्त्वों में भारतीयता की गहन छाप आज भी विद्यमान है। इसी कारण रोमा समुदाय को भारतीय मूल के प्रवासी समुदाय के रूप में मान्यता प्राप्त है।

इतिहास, भाषा-विज्ञान, मानवशास्त्र तथा समाजशास्त्र के विविध अध्ययनों से यह तथ्य प्रतिपादित हुआ है कि रोमा समुदाय की मूल उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों से संबद्ध थी। विशेषतः राजस्थान, पंजाब, हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश के कन्नौज क्षेत्र को उनके प्राचीन सांस्कृतिक संबंधों की दृष्टि से उल्लेखनीय माना जाता है। लगभग दशवीं शताब्दी के मध्य राजनीतिक संघर्षों, विदेशी आक्रमणों, आर्थिक संकटों तथा आजीविका की खोज के परिणामस्वरूप यह समुदाय भारत से पश्चिम दिशा की ओर प्रव्रजित हुआ। क्रमशः ईरान, तुर्की एवं

बाल्कन प्रदेशों से होकर यह समुदाय यूरोप के विभिन्न भागों में विस्तृत हो गया। दीर्घकालीन प्रवास एवं बहुसांस्कृतिक सम्पर्कों के उपरान्त भी रोमा समुदाय ने अपनी अनेक सांस्कृतिक विशेषताओं, पारिवारिक संरचनाओं एवं पारम्परिक जीवन-मूल्यों को सुरक्षित बनाए रखा।

रोमा समुदाय की भाषा "रोमानी" भारतीय आर्यभाषा-परिवार से संबद्ध मानी जाती है। भाषावैज्ञानिकों के अनुसार इस भाषा में हिंदी, संस्कृत, पंजाबी तथा उत्तर भारतीय बोलियों के अनेक शब्द, ध्वनियाँ एवं व्याकरणिक तत्त्व आज भी विद्यमान हैं। "पानी", "मनुष", "दन्त", "काली" आदि शब्द भारतीय भाषिक परम्परा से उनकी निकटता को स्पष्ट रूप से प्रमाणित करते हैं। यह भाषिक साम्यता रोमा समुदाय की भारतीय उत्पत्ति का एक महत्त्वपूर्ण प्रमाण मानी जाती है।

सांस्कृतिक दृष्टि से भी रोमा समुदाय अत्यन्त समृद्ध एवं कलाप्रिय रहा है। संगीत, नृत्य, लोककथाएँ, उत्सव-परम्पराएँ तथा सामुदायिक जीवन उनकी सांस्कृतिक पहचान के प्रमुख आधार हैं। विशेषतः स्पेन के प्रसिद्ध "फ्लेमेंको" संगीत एवं नृत्य पर रोमा परम्पराओं का गहरा प्रभाव स्वीकार किया जाता है। उनके लोकगीतों एवं वाद्य-संगीत में भारतीय लोकधुनों की अनुगूँज आज भी अनुभव की जा सकती है। परिवार-केन्द्रित जीवन, वयोवृद्धों के प्रति आदर, सामुदायिक एकता एवं परम्पराओं के संरक्षण की भावना रोमा समाज की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

प्रख्यात रोमा- अध्येता वीर राजेन्द्र ऋषि ने रोमा समुदाय को भारतीय मूल का प्रवासी समुदाय स्वीकार करते हुए उसकी सांस्कृतिक निरन्तरता पर विशेष बल दिया है। इसी प्रकार इयान हैनकॉक ने भी रोमा समुदाय की भारतीय उत्पत्ति को ऐतिहासिक एवं भाषिक आधारों पर प्रमाणित किया है। रोमा समुदाय भारतीय सांस्कृतिक चेतना का वह जीवित स्वरूप है, जिसने दीर्घ प्रवास के उपरान्त भी अपनी मूल सांस्कृतिक स्मृतियों को सुरक्षित रखा है।

इस ग्रन्थ की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि इसकी विषय-वस्तु केवल पुस्तकाधारित स्रोतों अथवा सैद्धान्तिक अध्ययनों पर आधारित नहीं है, अपितु लेखिका द्वारा विविध देशों की यात्राओं, प्रत्यक्ष क्षेत्रीय अध्ययन तथा रोमा समुदाय

के मध्य निवास एवं सांस्कृतिक सहभागिता के आधार पर भी निर्मित हुई है। लेखिका ने रोमा समाज के पारिवारिक जीवन, सांस्कृतिक व्यवहार, लोक-परम्पराओं, भाषिक अभिव्यक्तियों तथा सामाजिक संरचनाओं का निकट से अवलोकन करते हुए उनके जीवन-संसार को समझने का प्रयास किया है। इस कारण प्रस्तुत कृति में रोमा समुदाय का स्वरूप केवल ऐतिहासिक तथ्यों तक सीमित न रहकर अनुभवजन्य एवं जीवन्त रूप में भी अभिव्यक्त हुआ है।

प्रस्तुत ग्रन्थ **"रोमा समुदाय : प्रवासित भारतीय (उत्पत्ति, भाषा एवं संस्कृति)"** रोमा समुदाय के ऐतिहासिक प्रवास, भारतीय मूल, भाषिक संरचना एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का सम्यक् एवं सुविस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास है। इस ग्रन्थ का उद्देश्य केवल रोमा समुदाय के इतिहास का वर्णन करना नहीं, अपितु भारतीय संस्कृति की वैश्विक उपस्थिति, सांस्कृतिक निरन्तरता तथा मानव सभ्यता के बहुआयामी विकास को समझने की दृष्टि प्रदान करना भी है।

आशा है कि यह कृति शोधार्थियों, इतिहासकारों, भाषा-विज्ञान के अध्येताओं, समाजशास्त्रियों तथा भारतीय संस्कृति में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी तथा रोमा समुदाय के प्रति व्यापक बौद्धिक एवं सांस्कृतिक संवेदनशीलता के विकास में सहायक बनेगी।

डॉ. रिमझिम सिन्हा

Heartiest congratulations to Dr. Rimjhim Sinha on the publication of her significant scholarly work, **"रोमा समुदाय: प्रवासित भारतीय (उत्पत्ति, भाषा एवं संस्कृति)".** The book represents an important contribution to the fields of Roma studies, linguistics, comparative dance and music, and social and cultural heritage.

What makes this work particularly valuable is not only its academic rigor but also its experiential depth. Dr. Sinha's research is enriched by extensive travel across several countries and her close interaction with Roma communities. By living among them, observing their social life, cultural practices, linguistic expressions, and collective memories, she has gone beyond conventional archival and library-based research to present a vivid and authentic account of the Roma people and their enduring connection with India.

From a researcher's perspective, this book serves as an important bridge between India and the Roma world. It offers compelling insights into the historical migration, linguistic affinities, and cultural continuities that connect the Roma community to the Indian subcontinent. In doing so, it not only helps the Roma people reconnect with their ancestral roots but also enables Indians to understand the global reach and resilience of their cultural heritage.

The significance of this work extends beyond academic inquiry. At a time when questions of identity, heritage, and cultural belonging are increasingly important, this book has the potential to foster greater understanding, dialogue, and cooperation between India and Roma communities across the world. It may contribute

meaningfully to strengthening cultural ties, encouraging future research collaborations, and promoting a deeper sense of shared historical consciousness between the two communities.

This remarkable achievement reflects years of dedication, fieldwork, intellectual commitment, and cultural sensitivity. I sincerely congratulate Dr. Rimjhim Sinha on this outstanding contribution and wish her continued success in her academic and research endeavours. It is my hope that this book will emerge as an important reference work and help establish a lasting bond of understanding and harmony between India and the global Roma community.

Orhan Galjus, President
Eurasian Romani Academic Network
CEO, Radio Patrin News Network

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन

अनुशंसा

अध्याय - 1 रोमा समुदाय का इतिहास..... 1

रोमा कौन?

रोमा : स्मृतियों में बसा भारत, पगडंडियों में बिखरा यूरोप

ग़ज़नवी के आक्रमण : ऐतिहासिक क्रम और रोमा विस्थापन का संदर्भ

शाहनामा में रोमा: भारत से यूरोप तक की सांस्कृतिक यात्रा

कन्नौज से यूरोप तक : रोमा समुदाय का प्रव्रजन

भारत से यूरोप तक : रोमा की अंतहीन यात्रा

आर्मेनिया और प्रारंभिक रोमानी प्रवासन, सामाजिक संरचना और सामूहिक पहचान, घुमंतूपन और दीर्घकालिक पहचान, रोमानी समुदाय का यूरोप में फैलाव (13वीं – 16वीं सदी)

सांस्कृतिक योगदान और जीवनशैली

अध्याय - 2 रोमानी भाषा: अध्ययन और दस्तावेजीकरण का प्रारंभिक इतिहास..... 26

रोमा और रोमानी भाषा

रोमानी भाषा और भारतीय भाषाएँ

हिंदी और रोमानी भाषा का संबंध

रोमा समुदाय के मूल और भाषा की उत्पत्ति की खोज

अध्याय - 3 यूरोप में रोमा समुदाय और उनकी सामाजिक स्थिति 45

गोबादिन की रोमा बस्ती एक जीवंत दस्तावेज़

रोमा समाज में आज भी चूल्हे की संस्कृति

“घर” एक अधूरा सपना

रोमा महिलाओं की स्थिति

रोमानी महिलाओं का स्वास्थ्य

अध्याय - 4 रोमा समुदाय में विवाह एवं पारिवारिक संरचना.....59

जेंस (Gens), फ्रैट्री (Phratry),फिस (कबीला)

युगोस्लाविया में विवाह प्रथा,अपहरण द्वारा विवाह

फ़िनलैंड रोमा परिवार और सामाजिक स्थिति

रोमा समुदाय में विवाह और दहेज प्रथा,दहेज निर्धारित करने के प्रमुख आधार,दोनों परिवारों की आर्थिक स्थिति,सगाई की रस्म (तुम्मिनिमोस), विवाह संस्कार (अबियाव), घूँघट का महत्व (डिक्लो)

दुल्हन की विदाई (ज़ेइता), भोज और सम्मान, रोमानिया में रोमा समुदाय का विवाह: परंपरा, परिवर्तन और सामूहिक जीवन का उत्सव

अध्याय - 5 रोमा समुदाय : भारतीय मूल की कला और संस्कृति की जीवंत परंपरा 72

मध्य यूरोपीय संगीत संस्कृति, रोमानी संगीत संस्कृति, रोमानी संगीत क्या है? रोमा संगीत और संगीत-नृविज्ञान के सिद्धांत, कालबेलिया नृत्य और संगीत-नृविज्ञान के सिद्धांत, ध्वनि और देह का सांस्कृतिक अर्थ, संगीत-नृविज्ञान के आधार पर कालबेलिया नृत्य और रोमा नृत्य/संगीत का विश्लेषण

अध्याय - 6 संगीत और वाद्ययंत्र.....99

अनुष्ठान और वाद्य परंपरा में रोमानी संगीत, वायु वाद्ययंत्र (फूँक से बजने वाले वाद्य), तंत्री वाद्ययंत्र (तार वाले वाद्य)

अन्य वाद्ययंत्र, रोमा समुदाय के संगीत में भारतीय प्रभाव, रोमानी और भारतीय वाद्ययंत्रों में समरूपता, रोमानी संगीत की संस्कृतियाँ, देह, ध्वनि और समय : नृत्य और वाद्ययंत्र

अध्याय - 7 रोमानी नृत्य में भारतीय तत्वों का समावेश 131

रोमानी नृत्य की उत्पत्ति और भारतीय सांस्कृतिक संबंध

भारतीय लोकनृत्य परंपराओं का रोमानी नृत्य पर प्रभाव

उपसंहार..... 161

पाद-टिप्पणियाँ..... 165

ग्रन्थ सूची 166

रोमा कौन?

रोमा समुदाय यूरोप का सर्वाधिक बड़ा अल्पसंख्यक समुदाय माना जाता है, जिसकी विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान उसकी पारंपरिक खानाबदोश जीवन-प्रणाली तथा समृद्ध लोक-संगीत एवं नृत्य परंपरा से निर्मित होती है। ऐतिहासिक रूप से मुख्यधारा के गैर-रोमा सामाजिक ढाँचों से बहिष्कृत अथवा पृथक् रहने की परिस्थितियों ने रोमा समाज को अपनी सांस्कृतिक अस्मिता के संरक्षण हेतु कलात्मक माध्यमों, विशेषतः संगीत, पर निर्भर रहने के लिए प्रेरित किया। रोमा परंपरा में संगीत केवल सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि सामुदायिक स्मृति, नैतिक मूल्यों के संप्रेषण, सांस्कृतिक निरंतरता तथा सामाजिक दमन के प्रतिरोध का माध्यम भी है। इस प्रकार संगीत रोमा समाज में सांस्कृतिक स्वायत्तता और अस्तित्व-चेतना का केन्द्रीय तत्त्व बनकर उभरता है।

भाषावैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में रोमानी भाषा को इंडो-यूरोपीय भाषा परिवार की इंडो-आर्य शाखा से संबंधित माना जाता है। इसकी शब्दावली, ध्वन्यात्मक संरचना, रूपात्मक प्रणाली तथा व्याकरणिक विन्यास भारतीय आर्य भाषाओं के साथ गहन साम्य प्रदर्शित करते हैं।

रोमानी भाषा की मूल संरचना भारतीय उपमहाद्वीप की मध्यकालीन इंडो-आर्य भाषिक परंपरा से संबद्ध है। रोमानी में सुरक्षित भारतीय मूल के शब्द, संज्ञा-रूपांतरण, क्रियात्मक प्रत्यय-प्रणाली तथा वाक्य-विन्यासात्मक विशेषताएँ इसके भारतीय स्रोत की पुष्टि करती हैं।

रोमा शब्द अपने वर्तमान स्वरूप तक पहुँचने से पहले ‘डोम–रोम–रोमा’ की एक लंबी भाषिक और सांस्कृतिक यात्रा तय करता है। रोमानी भाषा में ‘रोमा’ का अर्थ केवल ‘मनुष्य’ भर नहीं, बल्कि ‘स्वामी’ भी है,ऐसा मनुष्य जो स्वयं को धरती का स्वाभाविक अधिकारी मानता है। यही कारण है कि रोमा समुदाय के लोग सदियों तक सीमाओं, बंधनों और स्थायी निवास की अवधारणाओं से परे, स्वच्छंद रूप से विचरण करते रहे।

खुले आकाश के नीचे जीवन जीना,अनजानी राहों पर चलना और हर भूमि को अस्थायी घर बना लेना,यही उनकी जीवन-शैली थी। वे ख़ानाबदोश थे, बंजारे थे, और उनकी जीविका कला, संगीत, नृत्य, भविष्यवाणी, धातु-कार्य और अन्य पारंपरिक कौशलों पर आधारित थी। समाज की मुख्यधारा से अलग रहते हुए भी वे अपनी सृजनात्मक क्षमताओं के माध्यम से हर संस्कृति से संवाद करते रहे।

भाषिक,नृजातीय और आनुवंशिक साक्ष्यों से अब यह लगभग निर्विवाद रूप से स्थापित हो चुका है कि रोमा समुदाय की उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप में हुई। किंतु इस ऐतिहासिक सत्य के बावजूद उनके मूल स्थान, पारंपरिक वृत्तियों, प्रवासन के कारणों और उस प्रवास के दौरान झेली गई सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों को लेकर विद्वानों में आज भी मतभेद बने हुए हैं। यही अनिश्चितताएँ रोमा इतिहास को और अधिक रहस्यमय, जीवंत और शोधोन्मुख बनाती हैं।

रोमा : स्मृतियों में बसा भारत, पगडंडियों में बिखरा यूरोप

रोमा केवल एक समुदाय नहीं, बल्कि समय और स्मृति की वह अनवरत यात्रा है, जो भारत की मिट्टी से उठकर यूरोप की पगडंडियों में बिखर गई। यह भारतीय मूल का घुमंतू समुदाय आज यूरोप का सबसे बड़ा अल्पसंख्यक समूह है। सदियों पहले अपनी जन्मभूमि से दूर हो जाने के बावजूद रोमा आज भी अपनी संस्कृति, भाषा, रक्त, आत्मा और संवेदनाओं में भारत को जीवित रखे हुए हैं।

यूरोप में रोमा को प्रायः 'जिप्सी' कहा जाता है। 'जिप्सी' शब्द की जड़ें 'इजिप्त' से जुड़ी मानी जाती हैं और इसका प्रचलन सत्रहवीं शताब्दी से आरंभ हुआ। किंतु इस नाम से कहीं अधिक गहरी है उनकी पीड़ा और उनका इतिहास। मध्यकालीन आक्रमणों के दौर में महमूद ग़ज़नवी मथुरा और कन्नौज से अनेक लोगों को बंदी बनाकर अफ़ग़ानिस्तान ले गया। यही लोग आगे चलकर समय की धारा में बहते हुए मध्य पूर्व, बाल्कन और अंततः यूरोप तक जा पहुँचे। यह पलायन केवल भूगोल का नहीं था, बल्कि अपनी जड़ों से बिछुड़ने की एक करुण कथा थी।

पुनर्जागरण काल के विद्वान सेबेस्टियन मुंस्टर ने सन् 1550[i] में पहली बार इस विस्मृत इतिहास की ओर संकेत किया। उन्होंने रोमा के पूर्वजों का मूल स्थान सिंधु और गंगा के उपजाऊ मैदानी क्षेत्रों को माना। बाद में वेनिस के प्रसिद्ध चित्रकार और उत्कीर्णक सेसारे वेसेलियो[ii] ने अपनी बहुपठित कृति *'डी ग्लि हेब्ती एंटिची ई मोडेरनी डी डाइवर्सी पार्टो डि मोंडो'* (1590)[iii] में इन तथ्यों की पुष्टि की। वेसेलियो लिखते हैं कि रोमा का जीवन निरंतर गतिमान है,वे किसी एक स्थान पर तीन दिनों से अधिक नहीं ठहरते, मानो धरती भी उनके लिए एक अस्थायी ठिकाना हो।

आधुनिक विज्ञान ने भी इस ऐतिहासिक स्मृति को सशक्त प्रमाण दिए हैं। स्पेन के पोम्पेयु फाब्रा विश्वविद्यालय के जीव-विज्ञान संस्थान के वैज्ञानिकों ने रोमानी समुदाय के आनुवंशिक स्रोतों पर गहन अध्ययन किया। संस्थान के प्रमुख वैज्ञानिक प्रोफेसर डेविड कोमास के अनुसार यूरोप का रोमानी समुदाय वहाँ की जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण किंतु उपेक्षित हिस्सा है। लिखित इतिहास के अभाव में वैज्ञानिकों ने यूरोप में फैले तेरह रोमानी समूहों के आनुवंशिक आँकड़ों का विश्लेषण किया।

इन अध्ययनों ने निर्विवाद रूप से यह सिद्ध कर दिया कि रोमानी समुदाय का मूल भारत में निहित है। उनकी शिराओं में आज भी उसी धरती का रक्त प्रवाहित है, जहाँ से कभी उनके पूर्वज चले थे। इस प्रकार रोमा की कहानी केवल इतिहास नहीं, बल्कि स्मृति, पीड़ा और पहचान की वह जीवित गाथा है, जो भारत से यूरोप तक फैली हुई है।



चित्र : 1 गजनवी की सेना का सैन्य अभियान, स्रोत : रोमते महमूदस गजनी हिस्टॉरिकल फोएम–एपोस अरथें तो मदर इंडिया, 1996, पृष्ठ 92 (करलिस रुडिविकोस)

ग़ज़नवी के आक्रमण : ऐतिहासिक क्रम और रोमा विस्थापन का संदर्भ

ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में महमूद ग़ज़नवी के निरंतर भारत अभियानों ने उत्तर भारतीय राजनीति ही नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना और जनसंख्या के स्वरूप को भी गहराई से प्रभावित किया। इन्हीं अभियानों की परिणति के रूप में रोमा समुदाय के विस्थापन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि निर्मित होती है। इस संदर्भ को समझने के लिए महमूद ग़ज़नवी के आक्रमणों को कालक्रम में देखना आवश्यक है।

महमूद ग़ज़नवी का पहला निर्णायक आक्रमण 1001 ईस्वी में हुआ, जब उसका सामना हिंदूशाही वंश के शासक जयपाल से हुआ। जयपाल का शासन 964 से 1001 ईस्वी तक विस्तृत था और उसका राज्य कश्मीर से सरहिंद तथा मुल्तान तक फैला हुआ था, जिसकी राजधानी पेशावर थी। बारीकोट शिलालेख में उल्लिखित *'परम भट्टरक महाराजाधिराज श्री जयपालदेव'* की उपाधि उसके राजनीतिक महत्व को दर्शाती है। इस युद्ध में पराजय के पश्चात हिंदूशाही सत्ता का पतन आरंभ हो गया।

1008 ईस्वी के अभियान में महमूद ने जयपाल के उत्तराधिकारी आनंदपाल को पराजित किया। इसके बाद उसने कांगड़ा की पहाड़ियों में स्थित नगरकोट दुर्ग पर आक्रमण किया, जहाँ से उसे अपार धन और संपत्ति प्राप्त हुई। यह विजय केवल

आर्थिक लूट तक सीमित नहीं थी, बल्कि इससे ग़ज़नवी की सैन्य प्रतिष्ठा भी स्थापित हुई।

1013 ईस्वी में आनंदपाल के उत्तराधिकारी त्रिलोचनपाल ने कश्मीर क्षेत्र में ग़ज़नवी सेना का सामना किया, किंतु वह इस प्रतिरोध में असफल रहा। इसके दो वर्षों बाद, 1015 ईस्वी में महमूद ने लाहौर पर अधिकार कर लिया और झेलम नदी तक अपने साम्राज्य का विस्तार कर लिया। इसी काल में मुल्तान, जो पहले एक मुस्लिम शासक के अधीन था और आनंदपाल का सहयोगी था, ग़ज़नवी सत्ता के अधीन आ गया। इस प्रकार पूर्वी अफ़ग़ानिस्तान से लेकर पंजाब और मुल्तान तक महमूद की स्थिति सुदृढ़ हो गई।

1017 ईस्वी में महमूद ग़ज़नवी ने मथुरा पर आक्रमण किया। यह नगर धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध था। इस अभियान में न केवल मंदिरों और संरचनाओं को नष्ट किया गया, बल्कि बड़ी संख्या में स्थानीय निवासियों को बंदी भी बनाया गया। यह घटना आगे चलकर कन्नौज अभियान की भूमिका बनी।

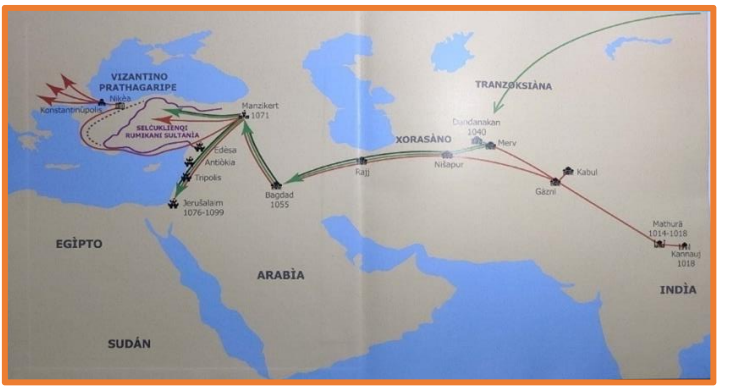
ग़ज़नवी के भारतीय अभियानों का निर्णायक मोड़ 1018 ईस्वी में आया, जब उसने कन्नौज पर आक्रमण किया। समकालीन इतिहासकार उतबी के अनुसार, इस अभियान के पश्चात कन्नौज और मथुरा से लगभग पचास हज़ार स्त्री-पुरुषों को बंदी बनाकर ग़ज़नी ले जाया गया। आधुनिक इतिहासकारों और भाषावैज्ञानिकों का मत है कि इन बंदियों में रोमा समुदाय के लोग भी सम्मिलित थे। यही घटना रोमा समुदाय के संगठित विस्थापन की सबसे ठोस ऐतिहासिक कड़ी मानी जाती है। इसी अभियान में बुलंदशहर के शासक हरदत्त को भी पराजित किया गया।

1021 ईस्वी में त्रिलोचनपाल की मृत्यु के साथ ही हिंदूशाही सत्ता का प्रभाव लगभग समाप्त हो गया। इसके पश्चात 1022 ईस्वी में महमूद ने ग्वालियर और कालिंजर पर सफल आक्रमण किए तथा राजनीतिक लाभ के लिए संधि की नीति अपनाई।

1025 ईस्वी में सौराष्ट्र स्थित सोमनाथ मंदिर पर आक्रमण ग़ज़नवी अभियानों का सबसे चर्चित प्रसंग बना। इसके अगले ही वर्ष, 1026 ईस्वी में उसने गुजरात के

चालुक्य शासक भीम प्रथम पर आक्रमण किया और सोमनाथ तथा आसपास के नगरों को गंभीर क्षति पहुँचाई। इन दौरान व्यापक जनहानि हुई और बड़ी संख्या में लोगों को बंदी बनाकर ग़ज़नी ले जाया गया।

इन ऐतिहासिक घटनाओं से यह स्पष्ट होता है कि महमूद ग़ज़नवी के अभियानों का प्रभाव केवल तत्कालीन राजनीतिक सत्ता तक सीमित नहीं था। इन अभियानों ने उत्तर भारत की जनसंख्या संरचना को भी प्रभावित किया। बंदी बनाए गए कारीगरों, कलाकारों और योद्धाओं में रोमा समुदाय के लोग सम्मिलित थे, जिन्हें ग़ज़नी ले जाकर विभिन्न निर्माण और सांस्कृतिक कार्यों में लगाया गया। कालांतर में यही रोमा समुदाय ग़ज़नी, फारस और अनातोलिया होते हुए यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में प्रवासित हुए। अपने दीर्घ प्रवास के बावजूद उन्होंने अपनी भाषा, संगीत और सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखा। यही कारण है कि आज भी रोमा भाषा में भारतीय भाषाओं से साम्य और रोमा संस्कृति में भारतीय सांस्कृतिक तत्व स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।



चित्र 3.2 : रोमा का पलायन मार्ग, स्रोत : रोमते महमूदस गजनी हिस्टॉरिकल फोएम–एपोस अरथें तो मदर इंडिया (1996), पृष्ठ 1 (करलिस रुडिविकोस)

आज दुनिया में रोमा समुदाय की कुल जनसंख्या का अनुमान लगभग 10–15 मिलियन (1–1.5 करोड़) लोगों तक किया जाता है, जिनमें से अधिकांश यूरोप में रहते हैं। यूरोप में रोमा की संख्या के अनुमानों के विभिन्न स्रोतों के अनुसार लगभग

9–11 मिलियन तक होने के संकेत हैं; कुछ अधिक उदार अनुमानों में यह 12 मिलियन के पास भी आ जाती है।

रोमा समुदाय की उत्पत्ति से जुड़े दो ऐतिहासिक घटनाक्रम विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं—

पहला: सासानी साम्राज्य के शासक शाह बहराम पंचम (420–438 ई.) ने हिंदुस्तान के राजा राव शंगल से कला, संगीत, नृत्य और विभिन्न कौशल में दक्ष लोगों की माँग की। राजा के अनुरोध पर लगभग 10,000–12,000 कलाकार फारस भेजे गए।

दूसरा: 1018–19 ईस्वी में महमूद ग़ज़नवी द्वारा मथुरा और कन्नौज पर आक्रमण, जिसमें सैनिक, शिल्पकार, कलाकार और आम लोग बंदी बनाकर ले जाए गए। इसके बाद 1020–1064 के मध्य सेल्जुकों का उदय और एशिया माइनर पर उनका अधिकार रोमा प्रवास के अगले चरण को प्रभावित करता है।

शाहनामा में रोमा: भारत से यूरोप तक की सांस्कृतिक यात्रा

प्रारंभिक काल में ब्रिटेन सहित यूरोप के कई देशों में यह धारणा प्रचलित थी कि रोमा लोग मिस्र से आए हैं, इसलिए उन्हें 'जिप्सी' कहा गया। हालांकि, यूरोपीय इतिहास के प्रारंभिक उल्लेखों में रोमा समुदाय को खानाबदोश और कुशल कलाकारों के रूप में चित्रित किया गया है। उनके संगीत, नृत्य और घुड़सवारी में दक्षता की जड़ें भारतीय सांस्कृतिक परिवेश में स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।

इन घटनाओं का उल्लेख फिरदौसी की शाहनामा में भी मिलता है। फिरदौसी महमूद ग़ज़नवी के दरबार में फ़ारसी लिपिक और कवि थे। शाहनामा का अंग्रेज़ी अनुवाद आर्थर जॉर्ज वार्नर और एडमंड वार्नर ने 1905 में किया, जो भारत से रोमा समुदाय के प्रवास को समझने का महत्वपूर्ण स्रोत बन गया। इसके अतिरिक्त, अरब इतिहासकार अल-तालिबी और फ़ारसी विद्वान हम्ज़ा अल-इस्फ़हानी (961 ई.) ने भी उल्लेख किया कि शाह बहराम गुर ने महाराज राव शंकल से गायक-वादक और नर्तक फारस भेजने का अनुरोध किया।

इस रूप में स्पष्ट है कि रोमा समुदाय एक विजातीय और कुशल समूह था—जिसमें कारीगर, संगीतकार और नर्तक शामिल थे। पहले राजा राव शंगल द्वारा उन्हें फारस भेजा गया, और बाद में ग़ज़नवी द्वारा बंदी बनाकर ले जाया गया। ग़ज़नवी के पतन के बाद, सेल्जुकों से मुक्त होकर रोमा एशिया के विभिन्न हिस्सों से होते हुए यूरोप पहुँचे।

पलायन के दौरान उन्हें अत्याचार, शोषण और अमानवीय व्यवहार का सामना करना पड़ा। द्वितीय विश्वयुद्ध में होलोकास्ट की त्रासदी भी झेली। फिर भी, रोमा समुदाय ने जीवित रहने की अपनी जिजीविषा बनाए रखी और सदियों तक अपनी संस्कृति और खानाबदोश जीवनशैली को संरक्षित रखा।

खानाबदोश जीवन और बाहरी समाज के अविश्वास के कारण रोमा बच्चों की शिक्षा सीमित रही, जिससे उनकी भाषा और इतिहास मौखिक परंपरा तक सीमित रहे। इसके बावजूद, रोमा की संस्कृति, संगीत और स्मृतियाँ आज भी उनके गीतों और कथाओं में जीवित हैं।

रोमा समुदाय के उद्गम और भारत से प्रवास पर कई विद्वानों ने अध्ययन किया है। डॉ. एस. एस. शशि ने अपनी पुस्तक *'रोमा: द जिप्सी वर्ल्ड'* (1990) में लिखा है कि रोमा भारतीय बंजारा समुदाय से मिलते-जुलते थे। वे विभिन्न जातीय समूहों के कुशल कारीगर, संगीतकार और नर्तक थे। वेकेर्डी (1988) के अनुसार रोमा के पूर्वज सातवीं शताब्दी में उत्तर-पश्चिम भारत को छोड़ना प्रारंभ हुए। आचिम (2004) के अनुसार उनका आगमन पाँचवीं शताब्दी में फारस में हुआ और उन्हें वहाँ 'लूली' या 'लूरी' कहा गया। उनका भारत से यूरोप की ओर प्रवास नौवीं से चौदहवीं शताब्दी के बीच हुआ।

'रोमा' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'डोम्ब' या 'डोम' शब्द से मानी जाती है। डोम समाज को जाति-व्यवस्था में निम्न स्थान प्राप्त था। डोम से 'रोम' और फिर 'रोमा' शब्द विकसित हुआ। पूया हेममती के अनुसार रोमा या डोमरी लोग पंजाब, हरियाणा और राजस्थान से आए थे। यद्यपि रोमानी भाषा में आज विभिन्नताएँ हैं, लेकिन इसके मूल शब्द भारतीय हैं। वर्तमान में फारस में लगभग दस लाख डोम (रोमा)

निवास करते हैं, जिन्होंने इस्लाम अपनाने और फ़ारसी समाज में समाहित होने के बावजूद अपनी भारतीय सांस्कृतिक जीवनशैली बनाए रखी।

श्याम सिंह शशि (2008) के अनुसार 'रोमा' शब्द का अर्थ 'मनुष्य' होता है। समय के साथ 'जिप्सी' नाम प्रचलित हुआ और विभिन्न देशों में रोमा को अलग-अलग नामों से जाना गया—जर्मनी में 'ज़िगुनेर' और 'सिंथि', फ्रांस में 'बोहिमियन' और 'मानुस', स्वीडन में 'तातर', स्पेन में 'गीतानों', तुर्की और ग्रीस में 'ट्शिंगेन', बुल्गारिया और रोमानियामें 'सिगान', और ब्रिटेन, यूरोप तथा अमेरिका में 'जिप्सी'।

जॉर्ज एम. एफ. बर्नाल ने 31 मार्च 2021 को अर्जेंटीना में स्पष्ट किया कि यद्यपि रोमा यूरोप में जिप्सी नाम से जाने जाते हैं, उनका जन्मस्थान भारत है। रोमा अपने भारतीय मूल, भाषा और संस्कृति को अपने जीवन की आधारशिला मानते हैं।

कन्नौज से यूरोप तक : रोमा समुदाय का प्रव्रजन
(इतिहास, सत्ता और सांस्कृतिक विस्थापन की दीर्घ यात्रा)

रोमा समुदाय के प्रव्रजन के इतिहास में ग्यारहवीं शताब्दी की घटनाएँ अत्यंत निर्णायक मानी जाती हैं। यह वह ऐतिहासिक क्षण था जब उत्तर भारत में घटित राजनीतिक उथल-पुथल ने केवल राजवंशों की नियति ही नहीं बदली, बल्कि एक ऐसे समुदाय को भी इतिहास की धारा में प्रवाहित कर दिया, जिसकी पहचान आगे चलकर महाद्वीपों में फैल गई। इस परिवर्तन का केंद्र था—कन्नौज, और इसका प्रेरक तत्व थे—सुल्तान महमूद ग़ज़नवी के आक्रमण।

अरबी इतिहासकार अबू नसर मुहम्मद इब्न मुहम्मद अल-उतबी की कृति 'तारिख-ए-यामिनी' में महमूद ग़ज़नवी के कन्नौज अभियान का संक्षिप्त किंतु अत्यंत महत्त्वपूर्ण विवरण मिलता है। उतबी के अनुसार, दिसंबर 1018 ईस्वी में महमूद ग़ज़नवी ने कन्नौज पर आक्रमण किया और इस अभियान के पश्चात लगभग पचास हज़ार स्त्री-पुरुषों को **बंदी** बनाकर ग़ज़नी ले जाया गया। रोमा विस्थापन के इतिहास में यह विवरण एक केंद्रीय ऐतिहासिक साक्ष्य के रूप में उभरता है।

सर रिचर्ड फ्रांसिस बर्टन के अनुसार, ईस्ट इंडिया कंपनी के कप्तान हॉकिंस ने भी ग्यारहवीं शताब्दी के आरंभ में कन्नौज से रोमा समुदाय के संभावित विस्थापन की ओर संकेत किया था। इसी विचार को आगे बढ़ाते हुए चार्ल्स गॉडफ्रे लेलैंड ने अपनी पुस्तक *'The Gypsies'* (1882:24) में महमूद ग़ज़नवी के आक्रमण और उत्तर भारत से रोमा समुदाय के विस्थापन के बीच घनिष्ठ संबंध को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया।

उन्नीसवीं शताब्दी में कर्नल जॉन स्टेपल्स हैरियट ने अपने प्रसिद्ध लेख *'Observations on the Oriental Origin of the Romnichal or the Tribe Miscalled Gypsy and Bohemian'* (1830:531) में जिप्सी रोमा को मूलतः कन्नौजवासी माना और उनके लिए 'कनौजी' शब्द का प्रयोग किया। यह शब्द केवल एक भाषिक संकेत नहीं था, बल्कि एक ऐतिहासिक स्मृति का अवशेष था, जो यूरोप में बसे समुदाय की जड़ों को भारत से जोड़ता था।

बीसवीं शताब्दी के अनेक विद्वानों ने अपने शोधों में यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि रोमा समुदाय के विस्थापन का एक प्रमुख कारण महमूद ग़ज़नवी का कन्नौज अभियान था। पोलिश शोधकर्ता एडम बार्टोज़ (1996:34) लिखते हैं कि ग़ज़नवी के कन्नौज पर आक्रमण के पश्चात ही रोमा का भारत से पलायन आरंभ हुआ। इसी क्रम में रायको युरिक *'The Roma's Migration'* (1987:142) में उल्लेख करते हैं कि महमूद ग़ज़नवी ग़ज़नी को मध्य-पश्चिम एशिया के वैभवशाली नगरों की भाँति विकसित करना चाहता था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने कन्नौज जैसे समृद्ध नगरों से बड़ी संख्या में कुशल कारीगरों, कलाकारों और योद्धाओं को बंदी बनाया।

भाषावैज्ञानिक इयान हैनकॉक (1989:75) का संशोधित भाषिक अध्ययन भारत से रोमा समुदाय के प्रस्थान को एक ऐतिहासिक रूप से यथार्थवादी समय-सीमा में स्थापित करता है। उनके अनुसार, रोमा का भारत से पलायन दसवीं या ग्यारहवीं शताब्दी में हुआ। इसी संदर्भ में 1989 में मिस्र के विद्वान **अब्देलली अलमी** द्वारा *'तारिख-ए-यामिनी'* का अनुवाद रोमा इतिहास के अध्ययन में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ। इस अनुवाद से यह तथ्य और अधिक स्पष्ट हुआ कि दिसंबर 1018

ईस्वी में कन्नौज से बंदी बनाए गए लोग साधारण कृषक नहीं थे, बल्कि सांस्कृतिक और तकनीकी रूप से दक्ष समुदाय थे।

इनाल्को की प्रोफेसर एरिका मेयर ने *'तारिख-ए-यामिनी'* की समीक्षा करते हुए यह स्पष्ट किया है कि ये बंदी भारतीय सांस्कृतिक परिवेश के निवासी थे। जे. रेनॉल्ड्स द्वारा अंग्रेज़ी में अनूदित संस्करण में भी यह उल्लेख मिलता है कि कन्नौज और मथुरा से लाए गए बंदियों में रोमा समुदाय की उल्लेखनीय उपस्थिति थी। ये रोमा ग़ज़नवी के अंतिम दासों के एक बड़े वर्ग में सम्मिलित थे और अपनी निष्ठा सिद्ध करने के लिए युद्धों में भी भाग लेते थे।

27 सितंबर 1018 को सुल्तान महमूद ग़ज़नवी कन्नौज की ओर रवाना हुआ। उसकी सेना में 11,000 नियमित सैनिक और 20,000 स्वयंसेवक सम्मिलित थे। 2 दिसंबर को यमुना पार कर उसने मथुरा पर आक्रमण किया और 20 दिसंबर को कन्नौज पहुँचा। फ़िरिश्ता के अनुसार, कन्नौज एक अत्यंत समृद्ध नगर था, जहाँ लगभग दस हज़ार मंदिर थे और जो धार्मिक, आर्थिक तथा रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। किंतु कन्नौज का राजा राज्यपाल भयभीत होकर गंगा पार कर भाग गया। हालाँकि, बारहवीं शताब्दी के इतिहासकार अली इब्न अल-अथीर के अनुसार, खजुराहो के शासक विद्याधर चंदेल ने इस कायरता के लिए राज्यपाल को दंडित किया और उसके पुत्र त्रिलोचनपाल को सामंत राजा नियुक्त किया। आगे चलकर विद्याधर चंदेल ही वह भारतीय शासक सिद्ध हुए जिन्होंने महमूद ग़ज़नवी की सैन्य महत्वाकांक्षाओं को निर्णायक चुनौती दी। डी.सी. गांगुली (1957:18) के अनुसार, महमूद को अंततः संधि करनी पड़ी, और यह अभियान वस्तुतः उसकी असफलता का संकेत देता है।

इन राजनीतिक घटनाओं के समानांतर एक अन्य ऐतिहासिक प्रक्रिया भी चल रही थी। 1025 के बाद ग़ज़नी में निर्मित प्रसिद्ध जामी मस्जिद, जिसे 'स्वर्ग की दुल्हन' कहा गया, तथा उससे संबद्ध विश्वविद्यालय और संग्रहालय के निर्माण में रोमा बंदियों की कला और श्रम का महत्त्वपूर्ण योगदान था। महमूद शीघ्र ही यह समझ गया कि

संगीत, नृत्य और सांस्कृतिक कलाओं में निपुण रोमा को लंबे समय तक कैद में रखना संभव नहीं था। इसी बिंदु से रोमा समुदाय का एक नया प्रवास आरंभ होता है।

फ्रांसीसी इंडोलॉजिस्ट लुई फ्रेडरिक ने पुष्टि की है कि कन्नौज की आबादी में कलाकारों, शिल्पकारों और योद्धाओं की बहुलता थी। यही सामाजिक संरचना रोमा को एक विशिष्ट सांस्कृतिक समुदाय के रूप में चिह्नित करती है।

इतिहासकार पॉल फ्रेंकोइस डी वॉक्स डी फोलेटियर (1984:13) के अनुसार, रोमा का यूरोप में आगमन पंद्रहवीं शताब्दी तक स्पष्ट रूप से दर्ज होने लगता है। जेलेना वोरोविक (2009) लिखती हैं कि सर्बिया में जिप्सियों का पहला लिखित उल्लेख 1348 ईस्वी में मिलता है। उस्मानी शासन के अंतर्गत रोमा एक पृथक जातीय समूह के रूप में विभिन्न मोहल्लों और गाँवों में बसे। यूगोस्लाविया के विघटन के बाद उत्पन्न राजनीतिक अस्थिरता ने रोमा समुदाय को और अधिक हाशिए पर धकेल दिया, जिसके परिणामस्वरूप वे आज भी पूरे यूरोप में बिखरे हुए हैं।

प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर मार्सेल कौरथियदे ने *'The Romani People's Origins'* (2002) तथा अपने बाद के लेख (2016) में कन्नौज को रोमा समुदाय का संभावित उद्गम स्थल माना है। उनके अनुसार, यह निष्कर्ष अब तक उपलब्ध सबसे ठोस ऐतिहासिक और भाषिक प्रमाणों पर आधारित है।

भारत से यूरोप तक : रोमा की अंतहीन यात्रा

यात्रा को केवल व्यक्ति अथवा समूह के भौगोलिक स्थानांतरण के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। प्रत्येक प्रवासन के साथ भाषा, संस्कृति और सामाजिक संरचना भी गतिशील हो जाती है। भाषा नए परिवेश में प्रवेश करते हुए स्थानीय भाषाओं से संपर्क करती है, उनसे प्रभाव ग्रहण करती है और स्वयं भी उन्हें प्रभावित करती है। इसी प्रकार सांस्कृतिक परंपराएँ नए सामाजिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित होती हैं, जबकि सामाजिक संबंध और पहचान की संरचनाएँ परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप नए रूप ग्रहण करती हैं। इस दृष्टि से यात्रा एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें

भौगोलिक गति के साथ-साथ भाषायी, सांस्कृतिक और सामाजिक रूपांतरण अनिवार्य रूप से जुड़े होते हैं।

ऐंगस फ़्रेज़र द जिप्सीज़ पुस्तक में बताते हैं "जिप्सी" शब्द का प्रयोग ऐतिहासिक रूप से विभिन्न मूल और अपेक्षाकृत निम्न सामाजिक स्थिति वाले समुदायों के लिए किया गया है, यद्यपि सामान्यतः इसका प्रयोग भारत क्षेत्र से उत्पन्न घुमंतू समुदायों के संदर्भ में किया जाता है। भारत में उपलब्ध भाषायी साक्ष्य *जाट परिकल्पना* को पर्याप्त समर्थन नहीं देते। इसके अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण आपत्ति यह भी है कि यदि प्रवासन मुख्यतः दक्षिणी फ़ारस में केंद्रित रहा हो, तो वह मार्ग उन संभावित प्रसार-मार्गों से पूरी तरह मेल नहीं खाता, जिनका अनुमान फ़ारसी क्षेत्र में रोमानी भाषा के विकास के आधार पर लगाया जा सकता है।

यह भी स्वीकार करना आवश्यक है कि भाषायी निष्कर्षों की विश्वसनीयता इस तथ्य से सीमित हो जाती है कि जिस प्रकार नव-इंडो-आर्य भाषाओं के उद्भव के विषय में हमारा ज्ञान कई शताब्दियों तक के अभिलेखों के अभाव के कारण अस्पष्ट बना रहता है, उसी प्रकार यह निश्चित करना कठिन है कि उस काल में भाषायी पुनर्गठन कितनी तीव्र गति से हुआ, जब जिप्सी समुदाय फ़ारस में निवास कर रहा था।

642 ईस्वी में हुए अरब आक्रमण ने फ़ारस के लिए केवल धार्मिक परिवर्तन ही नहीं, बल्कि भाषायी परिवर्तन भी लेकर आया। इसके परिणामस्वरूप फ़ारसी का आधिकारिक प्रयोग समाप्त हो गया और साहित्यिक भाषा के रूप में उसका उपयोग गंभीर रूप से घट गया। इसके पश्चात् एक दीर्घकालिक प्रक्रिया आरंभ हुई, जिसमें फ़ारसी भाषा ने अरबी तत्वों को बड़ी मात्रा में आत्मसात किया। यह प्रक्रिया आधुनिक अंग्रेज़ी में लैटिन तथा फ़्रांसीसी तत्वों के समावेश से तुलनीय है।

दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक फ़ारसी, जो अब अरबी लिपि में लिखी जाने लगी थी, पुनः एक प्रमुख साहित्यिक भाषा के रूप में उभरी, किंतु तब तक उसका स्वरूप काफ़ी बदल चुका था। इस नए रूप में लिखे गए सबसे प्राचीन ग्रंथ नौवीं शताब्दी के हैं और यही आधुनिक फ़ारसी की औपचारिक शुरुआत माने जाते हैं। मध्य फ़ारसी और आधुनिक फ़ारसी के बीच का अंतर स्पष्ट है, किंतु उपलब्ध अभिलेख यह नहीं

बताते कि अरबी प्रभाव ने विभिन्न क्षेत्रों अथवा उच्च वर्गों के नीचे के सामाजिक स्तरों में कितनी शीघ्रता और कितनी गहराई से प्रवेश किया।

फ़ारस में जिप्सी समुदाय बाहरी था। उन्हें अपने आसपास के लोगों से संवाद स्थापित करने के लिए स्थानीय भाषा सीखनी पड़ी। उनका भाषायी संपर्क मुख्यतः किसानों और सामान्य जन की जीवंत बोलियों से रहा होगा, न कि उन स्थिर साहित्यिक भाषाओं से, जो शब्दकोशों में संरक्षित रहती हैं। उनके द्विभाषिक होने के प्रभाव को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं आँकना चाहिए, क्योंकि वस्तुओं या सेवाओं के प्रदाताओं और उनके ग्राहकों के बीच का संबंध सामान्यतः गहन भाषायी आदान-प्रदान तक नहीं पहुँचता।

पूर्णतः द्विभाषी समुदायों में जैसी स्थिति उत्पन्न होती है, वैसी स्थिति जिप्सियों के साथ नहीं थी। इसके बावजूद, भारत से बाहर निकलने के पश्चात् रोमानी भाषा ने अपने कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण और विशिष्ट लक्षण विकसित किए।

रोमानी बोलियों के पूरे समूह को तीन प्रमुख शाखाओं में विभाजित किया जा सकता है—यूरोपीय, आर्मेनियाई और एशियाई (आर्मेनियाई को छोड़कर)। टर्नर ने सुविधा की दृष्टि से इन्हें *रोम*, *लोम* और *डोम* कहा, जो संस्कृत मूल के शब्द *डोम्ब* से व्युत्पन्न माने जाते हैं। इस आधार पर गैर-यूरोपीय रोमानी रूपों को *लोमाव्रेन* (आर्मेनियाई) और *डोमारी* (एशियाई) कहा जा सकता है।

सैम्पसन ने यह दर्शाया कि यूरोपीय रोमानी और लोमाव्रेन में मूल संस्कृत की घोष ध्वनियाँ (*bh, dh, gh, jh*) अघोष ध्वनियों में परिवर्तित हो गईं, जबकि एशियाई रोमानी में इसके विपरीत प्रक्रिया देखने को मिलती है। यही परिवर्तन एशियाई रोमानी की एक प्रमुख पहचान बन गया। सैम्पसन का मत था कि ये भाषिक परिवर्तन फ़ारसी क्षेत्र में मार्गों के विभाजन के पश्चात उत्पन्न हुए। इसी आधार पर उन्होंने *ben* (डोमारी) और *phen* (यूरोपीय रोमानी तथा लोमाव्रेन) समूहों की संकल्पना प्रस्तुत की, जो 'बहन' शब्द के विभिन्न रूपों पर आधारित है।

संस्कृत	डोमारी	लोमाव्रेन	यूरोपीय रोमानी	अंग्रेज़ी
bhaginī	ben	phen	phen	sister
bhrātṛ	bar	phal	phral	brother

वर्तमान में सैम्पसन की इस वर्गीकरण-पद्धति को अपनाना सुविधाजनक प्रतीत होता है, यद्यपि *phen* समूह को एक पूर्णतः एकीकृत इकाई मानने की उनकी अवधारणा अभी भी विवाद का विषय बनी हुई है।

ben जिप्सियों (डोमारी) की भाषा में फ़िलिस्तीन और सीरिया के *नवार*, उत्तरी सीरिया के *कुर्बात* तथा एशिया माइनर, ट्रांसकॉकसिया और फ़ारस के *कराची* समूहों की बोलियाँ सम्मिलित हैं। डोमारी बोलियों का ह्रास यूरोपीय रोमानी की तुलना में अधिक व्यापक रहा है और जिन समयों में उनका अध्ययन किया गया, तब तक वे अरबी से अत्यधिक प्रभावित हो चुकी थीं तथा उनके अवशेष सीमित रूप में ही उपलब्ध थे।

यद्यपि सैम्पसन का आग्रह है कि *ben* और *phen* दोनों समूह एक ही मूल स्रोत से उत्पन्न हुए, फिर भी यूरोपीय रोमानी और डोमारी के बीच पाई जाने वाली कुछ असमानताएँ इस धारणा पर संदेह उत्पन्न करती हैं कि मूल समुदाय पूर्णतः एकरूप था।

जब कोई मूल भाषा नई शाखाओं में विभाजित होती है, तो उसके विभिन्न अंश समान अथवा भिन्न मार्गों पर अलग-अलग गति से विकसित होते हैं। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि *ben* और *phen* समूहों में परिवर्तन कितनी शीघ्रता से हुए, उनका पारस्परिक विभाजन कब हुआ, अथवा वे फ़ारस में कितने समय तक टिके रहे। तथापि, उनके बीच का अंतर अपेक्षाकृत प्रारंभिक विभाजन की ओर संकेत करता है।

ben जिप्सियों की बोलियों में कुछ महत्वपूर्ण फ़ारसी उधार-शब्दों का अभाव इस संभावना की ओर संकेत करता है कि वे फ़ारस छोड़ने वाले पहले समूह थे। वे किस

प्रकार और कब सीरिया पहुँचे, यह ज्ञात नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी तक उनके विषय में बहुत कम विशिष्ट जानकारी उपलब्ध होती है, सिवाय कभी-कभार मिलने वाले अस्पष्ट उल्लेखों के—जैसे चौदहवीं शताब्दी की अरबी कृति *मसालिक अल-अबसार*, जिसे अल-उमरि ने लिखा था, जिसमें मिस्र और विशेष रूप से सीरिया में 'लोर' नामक जनजातियों का उल्लेख किया गया है और उन्हें कुशल करतबी के रूप में वर्णित किया गया है।

इसके विपरीत, यूरोपीय जिप्सियों की भाषाओं में पाए जाने वाले फ़ारसी तत्वों की संख्या यह संकेत देती है कि उनका फ़ारस में प्रवास अपेक्षाकृत लंबा और स्थायी रहा।

फ़ारस से प्रस्थान के काल के विषय में कुछ विद्वानों का मत है कि यूरोपीय जिप्सियों के पूर्वज प्रथम अरब आक्रमणों से पूर्व ही फ़ारस छोड़ चुके होंगे, क्योंकि रोमानी भाषा में अरबी शब्द अपेक्षाकृत कम हैं। इसका तात्पर्य यह होगा कि उन्होंने सातवीं शताब्दी के मध्य से पहले फ़ारस त्याग दिया था। किंतु यह तर्क दो प्रमुख कठिनाइयों से घिरा हुआ है। पहली, यह मान लेना कि अरब विजय के तुरंत बाद भाषा का प्रभाव समाज के सभी स्तरों पर समान रूप से फैल गया होगा, भाषायी प्रक्रिया का अत्यधिक सरलीकरण होगा। दूसरी, यूरोपीय रोमानी में कुछ अरबी मूल के शब्द स्पष्ट रूप से मिलते हैं—जैसे *berk* ('छाती'), *xumér / xumél* ('आटा' अथवा 'रोटी के टुकड़े'), *kiši* ('थैली'), तथा संभवतः *lav* ('शब्द'), जो अरबी *lafẓ* से व्युत्पन्न या उससे प्रभावित प्रतीत होता है।

ये उदाहरण भले ही संख्या में कम और आंशिक रूप से विवादास्पद हों, फिर भी वे इस ओर संकेत करने के लिए पर्याप्त हैं कि यूरोपीय जिप्सियों के पूर्वज अरब विजय से पूर्व फ़ारस नहीं छोड़ सकते थे, क्योंकि उस समय तक सामान्य जनभाषा में सेमिटिक तत्व पर्याप्त मात्रा में प्रवेश कर चुके थे।

आर्मेनिया और प्रारंभिक रोमानी प्रवासन

आर्मेनिया वह क्षेत्र है जहाँ फ़ेन (phen) जिप्सी समुदाय फ़ारस से प्रस्थान के पश्चात पहुँचा। सातवीं शताब्दी में यह प्रदेश अरब शासन के अधीन आ गया था, किंतु इस राजनीतिक परिवर्तन का प्रभाव आर्मेनियाई भाषा पर उतना गहरा नहीं पड़ा, जितना फ़ारसी भाषा पर पड़ा। जिप्सियों की आर्मेनिया में उपस्थिति क्षणिक नहीं रही होगी—इसका स्पष्ट संकेत यूरोपीय रोमानी बोलियों में पाए जाने वाले आर्मेनियाई मूल के शब्दों से मिलता है। इनमें bòv (ओवन), dudúm (तरबूज), gourd (कद्दू), dzolano (खच्चर), kotór (टुकड़ा), kóčo (बटन), mortí (त्वचा/छिपाना) तथा संभवतः grai (घोड़ा) जैसे शब्द सम्मिलित हैं, जिसे आर्मेनियाई *grast* ('बोझ ढोने वाला पशु') से संबद्ध किया जाता है।

आर्मेनिया के उत्तरवर्ती क्षेत्रों में बोली जाने वाली ओसेटिक भाषा से संभवतः vordón ('गाड़ी') शब्द रोमानी में प्रविष्ट हुआ। आगे चलकर यह शब्द जिप्सियों के घोड़ा-गाड़ी आधारित जीवन और उनकी निरंतर गतिशीलता का प्रतीक बन गया। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि ये शब्द न तो एशिया की ben बोलियों में मिलते हैं और न ही लोमावरेन (Lomavren) में—जो बोसा (Boša) कहलाने वाले जिप्सी समुदाय की भाषा है। यह समुदाय कई शताब्दियों बाद आर्मेनिया, तुर्की, फ़ारस और दक्षिणी काकेशस के क्षेत्रों में भ्रमणशील अवस्था में पाया जाता है।

उन्नीसवीं शताब्दी में जब बोसा समुदाय की रोमानी भाषा का व्यवस्थित अध्ययन आरंभ हुआ—जिसे बोलने वाले स्वयं को Lom कहते थे—तब तक वह भाषा पर्याप्त रूप से विकृत हो चुकी थी। यद्यपि उस पर आर्मेनियाई प्रभाव स्पष्ट था, फिर भी उसमें यूरोपीय रोमानी के साथ साझा किए गए आर्मेनियाई मूल के शब्द लगभग अनुपस्थित हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि फ़ेन जिप्सियों का विभाजन आर्मेनियाई प्रभाव के पूर्ण रूप से स्थापित होने से पहले ही हो गया था, अथवा यह कि लोमावरेन और यूरोपीय रोमानी में पाए जाने वाले समान भाषिक नवाचार स्वतंत्र रूप से विकसित हुए।

आर्मेनिया से जिप्सियों के पलायन के कारणों के विषय में कोई निश्चित निष्कर्ष उपलब्ध नहीं है, किंतु उस कालखंड में विघटनकारी ऐतिहासिक शक्तियों की कोई कमी नहीं थी। बीज़ैन्टाइन साम्राज्य में उनका प्रवेश संभवतः क्रमिक प्रक्रिया के रूप में हुआ, जिसकी पृष्ठभूमि बीज़ैन्टाइन-अरब प्रतिद्वंद्विता से उत्पन्न राजनीतिक अस्थिरता थी। इस अवधि में बीज़ैन्टाइन सेना द्वारा दमन के भी प्रमाण मिलते हैं और अंततः ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में आर्मेनिया को औपचारिक रूप से साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। किंतु यह विजय स्थायी सिद्ध नहीं हुई। शीघ्र ही मध्य एशिया से आए सेल्जुक तुर्कों के आक्रमणों ने इस क्षेत्र को पुनः अस्थिर कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप केवल भूमध्यसागरीय तटवर्ती सिलिसिया क्षेत्र ही आर्मेनियाई नियंत्रण में रह सका।

सामाजिक संरचना और सामूहिक पहचान

रोमानी भाषा की ऐतिहासिक जड़ों को माउंट अरारात की तलहटी तक खोज लेने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि भाषावैज्ञानिक अनुसंधान में निहित अतिसरलीकरण की प्रवृत्तियों से सावधान रहा जाए। भाषा में क्रमिक "विभाजनों" और पृथक-पृथक "समूहों" की चर्चा जिप्सी प्रवासन की एक अत्यधिक सुव्यवस्थित छवि निर्मित कर देती है, मानो लोग भारत से संगठित झुंडों में निकल पड़े हों और मार्ग के कुछ निश्चित बिंदुओं पर स्पष्ट रूप से विभाजित हो गए हों। वास्तविक ऐतिहासिक प्रक्रिया संभवतः इससे कहीं अधिक जटिल, बहुआयामी और अनियमित रही होगी।

प्रारंभिक जिप्सियों की सामाजिक संरचना और संस्कृति के विषय में प्रत्यक्ष प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं; अतः हमें विवेकपूर्ण अनुमानों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। फिर भी यह मानना तर्कसंगत प्रतीत होता है कि इन समुदायों की संरचना भारतीय सामाजिक प्रतिमानों से प्रभावित रही होगी। भारतीय समाज की एक प्रमुख विशेषता जातीय उप-वर्गों अथवा जातियों (जाति = 'जन्म') का केंद्रीय महत्व रहा है, जहाँ दैनिक जीवन और श्रम-विभाजन में इन उप-जातियों की भूमिका मुख्य वर्णों से अधिक प्रभावी थी।

उप-जातियों के मध्य संबंध प्रायः कार्य-विशेषीकरण पर आधारित थे। किसी एक पेशे से जुड़ी जातीय पहचान आर्थिक पारस्परिक निर्भरता को जन्म देती थी, साथ ही उस पेशे से संबंधित कौशल के लिए निरंतर माँग बनाए रखने हेतु क्षेत्रीय गतिशीलता को भी आवश्यक बनाती थी। इसी कारण भारतीय उपमहाद्वीप में पाए जाने वाले अनेक घुमंतू (peripatetic) समुदायों में जिप्सियों के तुलनीय उदाहरण सहज रूप से खोजे जा सकते हैं।

जाति व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता अंतर्विवाह की प्रथा रही है, जिसके अंतर्गत विवाह प्रायः उसी सामाजिक समूह के भीतर संपन्न होते थे। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप समुदाय के भीतर सामाजिक एकता और संगठन की भावना सुदृढ़ बनी रहती थी, साथ ही अन्य समूहों के साथ स्पष्ट सामाजिक सीमाएँ भी निर्मित और संरक्षित रहती थीं। शुद्धता एवं अशुद्धता से संबंधित वैचारिक धारणाएँ इन सामाजिक सीमाओं को वैधता प्रदान करती थीं और समूह की आंतरिक पहचान को सुदृढ़ एवं स्थायी बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं।

इन सामाजिक विशेषताओं तथा जिप्सियों के ऐतिहासिक विकास की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रारंभिक जिप्सी समुदायों ने विशिष्ट वस्तुओं एवं सेवाओं की आपूर्ति के माध्यम से व्यापक समाज के भीतर एक सीमित किंतु आवश्यक आर्थिक स्थान का निर्माण किया। वे प्रायः छोटी संख्या में कार्य करते थे और निरंतर गतिशील बने रहते थे, क्योंकि किसी एक स्थान पर दीर्घकाल तक ठहरने से उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली वस्तुओं और सेवाओं के लिए उपलब्ध बाजार के संतृप्त होने की संभावना उत्पन्न हो सकती थी। उनके ग्राहक नगरों के निवासी, ग्रामीण कृषक, स्थायी किसान, पशुपालक घुमंतू समुदाय अथवा इनका कोई मिश्रित रूप हो सकते थे। इस प्रकार वे विभिन्न सामाजिक-आर्थिक समूहों के साथ संपर्क स्थापित करते हुए अपनी आजीविका का निर्वाह करते थे।

घुमंतूपन और दीर्घकालिक पहचान

जिप्सियों की घुमंतू जीवन-शैली उस कालखंड के पश्चिमी तथा मध्य एशियाई समाजों में कोई असामान्य घटना नहीं थी। ईरान तथा उसके पड़ोसी क्षेत्रों में घुमंतूपन व्यापक रूप से प्रचलित था और बीसवीं शताब्दी के मध्य तक, जनजातीय समुदायों को स्थायी रूप से बसाने के अनेक प्रयासों के बावजूद, ईरान की कुल जनसंख्या का लगभग दस प्रतिशत भाग घुमंतू जीवन-पद्धति से जुड़ा रहा। तथापि, जिप्सियों और सामान्य पशुपालक घुमंतू समुदायों के बीच एक मौलिक अंतर विद्यमान था। जिप्सियों के लिए स्थान-परिवर्तन मुख्यतः उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं और प्रदान की जाने वाली सेवाओं के विपणन का साधन था, जबकि अन्य घुमंतू समुदायों के लिए यह आवागमन प्रायः मौसमी चक्रों तथा आजीविका से संबंधित आवश्यकताओं से प्रेरित होता था।

घुमंतू व्यापारी समुदायों और पशुपालक घुमंतुओं के बीच प्रायः सहजीवी संबंध विकसित हो जाते थे। समकालीन समय में भी तुर्की, ईरान तथा बलूचिस्तान के अनेक क्षेत्रों में यह देखा जा सकता है कि पशुपालक समूहों के साथ कम-से-कम एक घुमंतू व्यापारी समुदाय जुड़ा रहता है, जो विविध प्रकार की वस्तुओं की छोटी-मोटी बिक्री अथवा विभिन्न सेवाओं की आपूर्ति करता है। अनेक अवसरों पर इन घुमंतू व्यापारियों के ग्राहक स्थायी ग्रामीण समुदाय भी होते हैं। इस प्रकार घुमंतू व्यापारी और पशुपालक समुदायों के बीच पारस्परिक निर्भरता पर आधारित एक विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक संबंध संरचना विकसित हो जाती है।

इन परिस्थितियों—घुमंतूपन, व्यापक भौगोलिक बिखराव, अल्पसंख्यक स्थिति तथा सामाजिक संबंधों की संभावित दुर्बलता—के बावजूद यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जिप्सी समुदाय ने दीर्घकाल तक अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित बनाए रखा। इस निरंतरता के मूल में उनकी असाधारण अनुकूलन-क्षमता तथा सशक्त सामूहिक चेतना निहित थी।

कभी-कभी जिप्सियों के प्रवास की तुलना यहूदियों के विस्थापन से की जाती है, किंतु यह तुलना केवल सीमित अर्थों में ही उपयुक्त प्रतीत होती है। जिप्सियों के पास

न तो कोई संगठित पुरोहित वर्ग था, न ही उनकी भाषा का कोई सर्वमान्य मानक विकसित हो सका; साथ ही उनके पास धार्मिक ग्रंथों की सुदृढ़ परंपरा या जातीय स्मृति के औपचारिक संरक्षक भी नहीं थे। भारत से विस्थापन तथा सतत गतिशील जीवन-पद्धति की प्रक्रिया में उनकी सामुदायिक पहचान का रूपांतरण लगभग अपरिहार्य था। इस दौरान उन्होंने अनेक ऐसे सांस्कृतिक तत्वों को आत्मसात किया जिनका भारत से प्रत्यक्ष संबंध नहीं था, और कालांतर में वे किसी ठोस अर्थ में भारतीय नहीं रह गए।

फिर भी, इन सभी रूपांतरणों के बावजूद उनकी पहचान और संस्कृति उनके चारों ओर निवास करने वाले gadžé (ग़ैर-जिप्सी) समुदायों से—जिन पर उनका आर्थिक अस्तित्व आंशिक रूप से निर्भर था—स्पष्ट रूप से भिन्न बनी रही। उनके पास न तो किसी "प्रतिज्ञात देश" की अवधारणा थी और न ही कोई स्थायी भौगोलिक केंद्र। समय के साथ उन्होंने अपने भारतीय पूर्वजों तथा प्रारंभिक इतिहास की स्मृति को लगभग विस्मृत कर दिया। उनके अतीत और वंशावली की पुनः खोज तथा उसके व्यवस्थित अध्ययन का कार्य कई शताब्दियों बाद मुख्यतः gadžé विद्वानों द्वारा प्रारंभ किया गया, जिसे वर्तमान समय में भारत सहित विभिन्न देशों के विद्वानों द्वारा आगे बढ़ाया जा रहा है।

रोमानी समुदाय का यूरोप में फैलाव (13वीं -16वीं सदी)

रोमा (जिप्सी) लोग 13वीं से 16वीं सदी के बीच पूरे यूरोप में फैलने लगे। उनके आगमन और बस्तियाँ बनाने का क्रम कई ऐतिहासिक स्रोतों में दर्ज है। यह फैलाव व्यापार, यात्रा, शरण और सामाजिक परिस्थितियों के कारण हुआ।

प्रमुख वर्ष और स्थल

वर्ष	स्थल	टिप्पणी
1240	यूक्रेन, काकेशस	यूरोप में रोमानी लोगों की पहली ज्ञात उपस्थिति। उन्होंने मुख्य रूप से व्यापार और संगीत के माध्यम से समाज में प्रवेश किया।
1332	क्रीट द्वीप	भूमध्य सागर के व्यावसायिक केंद्रों में आने वाले रोमा। यहाँ उनका संगीत और हस्तकला समुदाय में पहचाना गया।
1332	ग्रीस	रोमा व्यापारी और कलाकार के रूप में एथेन्स और अन्य शहरों में बसे।
1333	बुल्गारिया	व्यापार और कारीगरी में संलग्न, कुछ समूह घोड़ों और वाहनों के व्यापार में शामिल थे।
1374–1378	रोमानिया	वालाचियन और मोल्दावियन क्षेत्रों में स्थायी बस्तियाँ।
1375	क्रोएशिया (ज़ाग्रेब)	शहरों और कस्बों में छोटे व्यापार और संगीत पेशे।
1378	इटली (वेनेशिया)	अस्थायी बस्तियाँ और कला-व्यापार केंद्र।
1417	हंगरी	वालाचियन जिप्सी घोड़ों के व्यापार और पारंपरिक अनुष्ठानों के लिए प्रसिद्ध।
1417	जर्मनी	विभिन्न शहरों में संगीत और हाथ के व्यापार के लिए आगमन।
1418	स्लोवाकिया	पर्वतीय और नगर क्षेत्रों में छोटे समूहों में बसावट।

1418	**चेक गणराज्य**	**व्यापार, संगीत और हस्तकला के पेशे।**
1419	**स्विट्ज़रलैंड**	**अल्पाइन क्षेत्रों में व्यापार और कला।**
1419	**फ्रांस**	**संगीत, नृत्य और कारीगरी के माध्यम से समाज में प्रवेश।**
1420	**बेल्जियम और नीदरलैंड**	**व्यापारी और कलाकार समुदाय।**
1425–1447	**स्पेन (बार्सिलोना)**	**शहरी केंद्रों में संगीत और हस्तकला।**
1525	**इंग्लैंड**	**अंतिम पश्चिमी यूरोप के देशों में रोमानी लोगों का प्रवेश।**

पूर्व से पश्चिम और दक्षिण से उत्तर: रोमा समुदाय यूरोप में मुख्यतः यूक्रेन और काकेशस से शुरू होकर भूमध्य सागर, बॉल्कन, मध्य यूरोप और पश्चिमी यूरोप तक फैला।

व्यापार और कला: उनका फैलाव केवल बसावट के लिए नहीं था; व्यवसाय, संगीत, नृत्य और कारीगरी उनके समुदाय की पहचान बने।

स्थायी और अस्थायी बस्तियाँ: कुछ रोमा समूह स्थायी रूप से बस गए (जैसे हंगरी और रोमानियामें), जबकि कई समूह अस्थायी बस्तियों और घूमते व्यापार में लगे रहे।

सांस्कृतिक योगदान: फैलाव के साथ ही रोमानी लोग यूरोप के हर हिस्से में संगीत, नृत्य और हस्तकला के माध्यम से सांस्कृतिक प्रभाव छोड़ते गए।

(यूरोपीय उपनिवेशों के साथ) 1650 के बाद फ्रांस -अल्जीरिया, सूडान नीदरलैंड - दक्षिण अफ्रीका ब्रिटेन -जमैका ब्रिटेन- वर्जीनिया (अमेरिका) उपनिवेशवाद के कारण रोमानी लोग अफ्रीका और अमेरिका पहुँचे।

अफ्रीका और अमेरिका में रोमा ने संगीत, नृत्य, हस्तशिल्प और छोटे व्यापार के माध्यम से जीवनयापन किया। वे नई परिस्थितियों के बावजूद अपने सांस्कृतिक रीति-रिवाज, पारिवारिक संरचना और परंपरागत कौशल को बनाए रखने में सफल रहे। हालाँकि उन्हें भेदभाव, सामाजिक अलगाव और सीमित अवसरों का सामना करना पड़ा, फिर भी रोमा ने अपनी पहचान, संस्कृति और कौशल के माध्यम से समाज में योगदान दिया।

सांस्कृतिक योगदान और जीवनशैली

रोमा समुदाय ने हर जगह अपने सांस्कृतिक कौशल, व्यापारिक फैलाव, संगीत और नृत्य के माध्यम से पहचान बनाई। उनका जीवन व्यापार, कला, सामाजिक संगठन और परंपरा पर आधारित था। यूरोप, अफ्रीका और अमेरिका में उनका प्रवास यह दर्शाता है कि कैसे एक समुदाय नई परिस्थितियों के बावजूद अपनी संस्कृति और पहचान बनाए रख सकता है।

रोमा समुदाय दुनिया के सबसे पुराने और व्यापक रूप से फैले घूमंतू समुदायों में से हैं। उनका यूरोप में आगमन 13वीं सदी में हुआ, और 16वीं–17वीं सदी में उन्होंने पूरे यूरोप में अपनी जगह बनाई। हंगरी, रोमानीया, इटली, स्वीडन, फ़िनलैंड, ग्रीस, बुल्गारिया, बेल्जियम, जर्मनी और ब्रिटेन में रोमा समुदाय ने संगीत, नृत्य, हस्तशिल्प और व्यापार के माध्यम से जीवनयापन किया।

हंगरी में वालाचियन जिप्सी घोड़ों के व्यापार में माहिर थे, और लोवार जनजाति के लोग बीमार या दुबले घोड़ों को स्वस्थ बेचने में निपुण थे। रोमानियामें रोमा ने संगीत और कारीगरी के माध्यम से अपने परिवार और समुदाय का जीवनयापन किया। इटली, स्वीडन और फ़िनलैंड में वे संगीत, नृत्य और छोटे व्यापार में सक्रिय रहे। हर जगह उनका जीवन परंपरा, कौशल, सामाजिक संगठन और समुदाय के आधार पर आधारित था।

17वीं सदी में यूरोपीय उपनिवेशवाद ने रोमा समुदाय को अफ्रीका और अमेरिका तक पहुँचाया। फ्रांस के रोमा अल्जीरिया और सूडान में गए, नीदरलैंड के रोमा दक्षिण

अफ्रीका में, और ब्रिटिश रोमा वर्जीनिया (अमेरिका) में बस गए। इन जगहों पर भी वे अपने पारंपरिक कौशल और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों को बनाए रखने में सफल रहे। हालांकि, उन्हें भेदभाव और सीमित अवसरों का सामना करना पड़ा।

आज भी रोमा समुदाय अपनी पारंपरिक प्रवासी जीवनशैली बनाए रखते हैं। उनके पास स्थायी घर या आधिकारिक ठिकाना अक्सर नहीं होता। कई जगहों पर उन्हें रहने के लिए भूमि या मूल प्रमाणपत्र मिल चुका है, लेकिन बहुत से रोमा आज भी बिना स्थायी निवास के रहते हैं। वे एक शहर से दूसरे शहर और एक देश से दूसरे देश यात्रा करते हैं। इस कारण, रोमा समुदाय की पहचान स्थानीय और वैश्विक दोनों स्तरों पर नजर आती है।

आज का रोमा जीवन इतिहास, परंपरा और आधुनिकता का मिश्रण है। वे संगीत, नृत्य, हस्तशिल्प और छोटे व्यापार के जरिए आज भी जीविकोपार्जन करते हैं। बच्चों को शिक्षा के अवसर देने की कोशिश जारी है, और समुदाय के भीतर सामाजिक सहयोग और पारिवारिक संरचना अब भी मजबूत है। जबकि कई रोमा आज भी समाज में अलगाव और आर्थिक कठिनाइयों का सामना करते हैं, उनकी संस्कृति और जीवनशैली ने उन्हें समय की चुनौतियों के बावजूद मजबूत और पहचानपूर्ण समुदाय बनाए रखा है। और यह प्रवासन आज भी जारी है और अंतहीन है, क्योंकि रोमा की स्वतंत्र जीवनशैली और यात्रा की परंपरा समय और सीमाओं के बंधन को नहीं मानती।

अध्याय - 2
रोमानी भाषा: अध्ययन और दस्तावेजीकरण का प्रारंभिक इतिहास

भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन की आत्मा है। किसी भी संस्कृति को जानने, समझने और महसूस करने के लिए उसकी भाषा को जानना अत्यंत आवश्यक होता है। भाषा के माध्यम से ही मनुष्य अपने मन की गहराइयों में छिपी भावनाओं, संवेदनाओं और विचारों को संसार के सामने प्रकट करता है। यह जीवन का वह अनमोल अंग है, जो हमारी आंतरिक सुंदरता को बाहरी रूप देता है,शब्दों, हाव-भाव और भाव-भंगिमाओं के माध्यम से।

भाषा के बिना मनुष्य मौन है, और मौन में न तो अनुभूतियों का विस्तार हो पाता है, न ही विचारों का आदान-प्रदान। भाषा ही वह सेतु है, जो व्यक्ति को व्यक्ति से, समाज को समाज से और पीढ़ी को पीढ़ी से जोड़ती है। माँ की लोरी से लेकर गुरु के उपदेश तक, मित्र की हँसी से लेकर कवि की कविता तक — जीवन के हर क्षण में भाषा हमारी साथी बनकर उपस्थित रहती है।

प्रत्येक भाषा अपने भीतर एक संपूर्ण सभ्यता को समेटे होती है। उसमें उस समाज का इतिहास, उसकी पीड़ाएँ, संघर्ष, आशाएँ और सपने सजीव रहते हैं। लोकगीतों की मधुरता, कहावतों की सरलता और साहित्य की गहराई — सब कुछ भाषा के माध्यम से ही जीवित रहता है। जब कोई भाषा लुप्त होती है, तो केवल शब्द ही नहीं मिटते, बल्कि एक पूरी संस्कृति, उसकी स्मृतियाँ और उसकी पहचान भी धुंधली पड़ जाती है।

भाषा मानव को केवल बोलना ही नहीं सिखाती, बल्कि सोचने की दिशा भी देती है। यह विचारों को आकार देती है और व्यक्तित्व को निखारती है। मधुर, शुद्ध और सशक्त भाषा व्यक्ति को संवेदनशील, आत्मविश्वासी और सुसंस्कृत बनाती है। भाषा

के द्वारा ही मनुष्य अपने अस्तित्व को समाज में स्थापित करता है और अपने अनुभवों को अमर बना देता है।

अंततः कहा जा सकता है कि भाषा संस्कृति की आत्मा और जीवन की धड़कन है। इसका संरक्षण और संवर्धन करना हमारा नैतिक दायित्व है, क्योंकि भाषा के बिना न संस्कृति जीवित रह सकती है और न ही मानवता।

भारत और रोमानी भाषा का संबंध भी बहुत रोचक है। रोमा समुदाय की उत्पत्ति प्राचीन काल में भारत से मानी जाती है। भाषाई और सांस्कृतिक अनुसंधानों से पता चलता है कि रोमानी भाषा (Romani) में कई शब्द और ध्वनियाँ संस्कृत, प्राचीन हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं से मिलती-जुलती हैं। जैसे संख्या, परिवारिक पद और कुछ रोज़मर्रा के शब्द आज भी भारतीय भाषाओं से समान रूप में रोमानी भाषा में पाए जाते हैं। यह बताता है कि भारत ही रोमा समुदाय की सांस्कृतिक और भाषाई जड़ों का मूल स्थल रहा है।

रोमानी भाषा आज भी रोमा समुदाय द्वारा जीवित रखी गई है। भले ही वे दुनिया के विभिन्न हिस्सों में बसे हैं — यूरोप, अमेरिका और मध्य पूर्व — रोमानी भाषा उनके जीवन का केंद्र बनी हुई है। समुदाय के लोग अपनी कहानियाँ, गीत, पारंपरिक लोकगीत और इतिहास रोमानी भाषा में ही साझा करते हैं। त्योहार, परिवारिक समारोह और रोज़मर्रा की बातचीत में यह भाषा जीवंत रहती है। इस तरह, भाषा उनके सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक एकता का प्रतीक बनी हुई है।

अंततः कहा जा सकता है कि भाषा संस्कृति की आत्मा और जीवन की धड़कन है। रोमानी भाषा का जीवित रहना इस बात का प्रमाण है कि कैसे एक समुदाय अपनी जड़ों, पहचान और संस्कृति को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित कर सकता है। भाषा का सम्मान, संरक्षण और संवर्धन हमारा नैतिक दायित्व है।

भाषा-अध्ययन और दस्तावेजीकरण की दृष्टि से रोमानी भाषा का सबसे प्राचीन ज्ञात लिखित प्रमाण एक शब्द-सूची के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें कुछ संक्षिप्त वाक्य भी सम्मिलित हैं। यह सूची एक बेनिदिक्ताइन भिक्षु **Johannes ex Grafing** की

पांडुलिपि में सुरक्षित थी। इस पांडुलिपि की पहचान भाषाविद् **Georg Knauer** द्वारा उस समय की गई, जब वे मानवतावादी विद्वान Johannes Reuchlin (1455–1522) द्वारा रचित *Batrachomyomachia* के लैटिन संस्करण का संपादन कर रहे थे। जिन पांडुलिपियों का Knauer ने उपयोग किया, उनमें Grafing द्वारा संकलित यह सामग्री भी सम्मिलित थी।

इस पांडुलिपि में रोमानी भाषा के शब्दों और वाक्यों के साथ-साथ अन्य भाषाओं के उदाहरण भी मिलते हैं। Knauer का अनुमान है कि Grafing ने इन शब्दों को 1510 से 1515 के बीच विएना में अपने प्रवास के दौरान संकलित किया होगा। इस लैटिन–रोमानी सूची में कुछ राशियों के नाम, पशुओं, शरीर के अंगों, व्यक्तिगत संज्ञाओं, भोजन से संबंधित आधारभूत शब्द, तीन संक्षिप्त वाक्य तथा संख्याएँ दर्ज हैं। राशियों के नामों की उपस्थिति इस व्यापक धारणा से भी जुड़ी मानी जाती है कि उस समय रोमा समुदाय को भविष्यवक्ता या ज्योतिषी के रूप में देखा जाता था।

रोमानी भाषा का दूसरा महत्वपूर्ण लिखित साक्ष्य Andrew Borde (1542) की पुस्तक *The Fyrst Boke of the Introduction of Knowledge* में मिलता है। इसके *"The xxxviii Chapter treteth of Egypt, and of theyr mony and of theyr speche"* शीर्षक वाले अध्याय में Borde ने रोमानी भाषा के तेरह वाक्य उनके अंग्रेज़ी अनुवाद सहित प्रस्तुत किए हैं। चूँकि Borde रोमानी भाषा की ध्वन्यात्मक संरचना से परिचित नहीं थे, इसलिए उन्होंने रोमन लिपि में ध्वनियों का अनुमानात्मक लिप्यंतरण किया। *Journal of the Gypsy Lore Society* (1907) में यह स्पष्ट किया गया है कि Borde ने जिन ध्वनियों को लिपिबद्ध किया, उनके अर्थ से वे पूर्णतः अवगत नहीं थे, और उनके निधन के बाद प्रकाशित पाठ में अनेक त्रुटियाँ रह गईं। यह भी संभव माना गया है कि उनके सूचना-दाता स्वयं रोमा न होकर कोई ऐसा ब्रिटिश व्यक्ति था, जिसकी रोमानी भाषा पर पकड़ सीमित थी।

Borde के पश्चात Johan van Ewsum (मृत्यु 1570) ने अपने जर्नल में *Clene gijpta sprake* शीर्षक के अंतर्गत रोमानी भाषा के पचास शब्दों और तीन वाक्यों को फ्रिसो-सैक्सन (जर्मन की एक उपभाषा) में अनुवाद सहित दर्ज किया। इस सूची

को विद्वान Kluwer ने "Gypsy language का एक छोटा नमूना" कहा है। सूची का अंतिम शब्द *atschaeij* बिना किसी अनुवाद के ही रह गया।

इसके बाद डच मानवतावादी विद्वान Bonaventura Vulcanius ने 1597 में *De literis et lingua Getarum sive Gothorum* शीर्षक से रोमानी भाषा के पचास शब्दों की एक सूची प्रकाशित की। यह सूची रोमानी भाषा के अध्ययन में अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध हुई और बाद के विद्वानों द्वारा सर्वाधिक उद्धृत की गई। Vulcanius ने इन उदाहरणों के संकलन में अपने सहकर्मी Joseph Justus Scaliger की सहायता ली थी, जिसके कारण इसे कभी-कभी *Scaliger's List* भी कहा जाता है, हालाँकि यह सामान्यतः *Vulcanius' List* के नाम से ही जानी जाती है।

1691 में Job Ludolf ने भी रोमानी शब्दों की एक सूची प्रकाशित की, किंतु उसका प्रयोग व्यवस्थित भाषिक विश्लेषण के लिए नहीं किया गया। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक अनेक विद्वानों ने रोमानी शब्दावलियाँ संकलित कीं, परंतु इनका किसी विशिष्ट भाषा-परिवार से संबंध स्थापित करने का प्रयास नहीं किया गया।

इस स्थिति में निर्णायक मोड़ Johann Christian Christoph Rüdiger, जर्मनी के Halle विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, के कार्य से आता है। 1777 में उन्होंने अपने सहकर्मी Hartwig Bacmeister को लिखे पत्र में यह संभावना व्यक्त की कि रोमानी भाषा का संबंध भारतीय भाषाओं से हो सकता है। यह अनुमान Bacmeister और उनके शिक्षक Christian Büttner के संकेतों के साथ-साथ Rüdiger के स्वयं के अध्ययन पर आधारित था।

1782 में Rüdiger ने *On the Indic Language and Origins of the Gypsies* शीर्षक से लेख प्रकाशित किया, जिसमें रोमानी भाषा और हिंदुस्तानी के बीच शब्दावली और व्याकरणिक समानताओं को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया। उनका तर्क था कि किसी समुदाय की उत्पत्ति को समझने के लिए उसकी भाषा सबसे विश्वसनीय साधन है, क्योंकि रूप-रंग, आचार और रीति-रिवाज़ समय, जलवायु

और सांस्कृतिक संपर्क से बदल सकते हैं, किंतु भाषा दीर्घकाल तक अपनी पहचान सुरक्षित रखती है।

Rüdiger ने एक रोमा महिला Barbara Makelin की सहायता से Bacmeister के प्रतिदर्श पाठों का रोमानी भाषा में अनुवाद कराया और फिर मिशनरी B. Schulze की *Grammatica Hindostanica* की सहायता से उन्हें हिंदुस्तानी में रूपांतरित किया। इस तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि रोमानी भाषा की उत्पत्ति भारतीय भाषाओं में निहित है और इसमें भारतीय शब्दावली तथा व्याकरणिक संरचनाएँ विद्यमान हैं।

हालाँकि Rüdiger ने यह स्थापित किया कि रोमा समुदाय भारत से प्रवास कर यूरोप पहुँचा, परंतु उन्होंने इस प्रवास के कारणों पर कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं दिया। उल्लेखनीय है कि उन्होंने यूरोप में रोमा समुदाय के प्रति निष्पक्ष व्यवहार और संरक्षण की भी वकालत की, जो उस समय के संदर्भ में एक प्रगतिशील दृष्टिकोण था (Matras 2015)।

इस प्रकार Rüdiger का कार्य न केवल रोमा समुदाय की भारतीय उत्पत्ति को प्रमाणित करता है, बल्कि रोमानी भाषा के व्यवस्थित भाषावैज्ञानिक अध्ययन की भी आधारशिला रखता है। उनके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि रोमा समुदाय का प्रवास केवल भौगोलिक नहीं, बल्कि भाषिक और सांस्कृतिक यात्रा भी था—जिसके दौरान उनकी भाषा ने अनेक संस्कृतियों के संपर्क में आने के बावजूद अपनी भारतीय जड़ों को सुरक्षित रखा।

भारतीय भाषाओं और रोमानी भाषा के संरचनात्मक तथा ध्वन्यात्मक संबंधों की विवेचना से पूर्व, ऐतिहासिक साक्ष्यों के आलोक में रोमा समुदाय की उत्पत्ति, प्रवास की परिस्थितियों तथा यूरोप में उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति को समझना आवश्यक है, जिससे इस भाषिक संबंध की व्यापक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि स्पष्ट हो सके।

रोमानी भाषा इंडो-यूरोपीय भाषा परिवार की इंडो-आर्यन शाखा से संबंधित है और इसका उद्गम भारतीय भाषाओं से जुड़ा हुआ माना जाता है। भारतीय भाषाओं और रोमानी भाषा के बीच घनिष्ठ भाषिक संबंध स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। विभिन्न विद्वानों ने तुलनात्मक और आनुभविक भाषावैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि रोमानी भाषा की संस्कृत, प्राकृत तथा आधुनिक भारतीय भाषाओं—जैसे हिंदी-उर्दू, राजस्थानी, पंजाबी, बंगाली, भोजपुरी, ब्रजभाषा और अवधी—के साथ उल्लेखनीय समानताएँ विद्यमान हैं।

रोमानी भाषा और भारतीय भाषाओं के बीच यह साम्य इतना स्पष्ट है कि बिना किसी औपचारिक भाषाई प्रशिक्षण के भी सामान्य लोग अनेक रोमानी शब्दों और भारतीय भाषाओं के शब्दों के बीच समानता पहचान सकते हैं। रोमानी भाषा की अपनी स्वतंत्र शब्दावली, व्याकरणिक संरचना और ध्वनि-प्रणाली है, जो इसे एक पूर्ण विकसित और सुसंगत भाषा के रूप में स्थापित करती है। यद्यपि रोमानी को विभिन्न बोलियों के विषम समूह के रूप में देखा जाता है, फिर भी यह एक भाषिक इकाई के रूप में पहचानी जाती है। विभिन्न देशों में बसे रोमा समुदाय अपनी-अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के अनुरूप रोमानी भाषा के अलग-अलग रूप बोलते हैं, जिनमें शब्दावली, उच्चारण और अभिव्यक्ति में भिन्नताएँ पाई जाती हैं। इसके बावजूद, इन सभी बोलियों के बीच पारस्परिक बोधगम्यता बनी रहती है।

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रोफेसर जोहान क्रिश्चियन क्रिस्टोफ रुडिगर (1782)[iv] ने पहली बार यह सैद्धांतिक स्थापना की कि रोमानी भाषा भारतीय मूल की है। उन्होंने संस्कृत, हिंदी, पंजाबी और राजस्थानी के साथ रोमानी भाषा की शब्दावली और व्याकरणिक संरचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन कर यह सिद्ध किया कि रोमानी की उत्पत्ति भारतीय भाषाओं से हुई है। उनके अनुसार रोमानी और भारतीय भाषाओं के व्याकरणिक वर्गों—जैसे कर्ता कारक और व्यक्तिवाचक सर्वनाम—में स्पष्ट समानता है। रुडिगर ने रोमानी भाषा में पाए जाने वाले संरचनात्मक परिवर्तनों को भाषा-संपर्क का परिणाम माना।

अलेक्ज़ांद्र जी. पसापति (1870) ने अपने फ्रांसीसी ग्रंथ *Etudes sur les Tchinghianes ou Bohémiens de l'Empire Ottoman*[v] में रोमानी भाषा की इंडो-आर्यन उत्पत्ति को पुष्ट किया और इसे संस्कृत से संबद्ध बताया।

अगस्त फ्रेडरिक पोट[vi] (1844–45) को आधुनिक रोमानी भाषाविज्ञान का जनक माना जाता है। उन्होंने रोमानी भाषा की विभिन्न यूरोपीय बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इसके भारतीय उद्गम को प्रमाणित किया तथा रोमानी में पाए जाने वाले पूर्व-यूरोपीय ऋण-शब्दों की परतों को चिह्नित किया। मिक्लोशिच[vii] सहित अनेक विद्वानों ने पोट के निष्कर्षों का समर्थन किया।

जॉर्ज हेनरी बॉरो[viii] के अनुसार, रोमानी भाषा विश्व की अन्य किसी भी भाषा की तुलना में संस्कृत के सर्वाधिक निकट है। उन्होंने उल्लेख किया कि रोमानी शब्दावली के अधिकांश शब्द संस्कृत और अन्य भारतीय भाषाओं से संबंधित हैं, जबकि शेष शब्द रोमा समुदाय द्वारा प्रवास के दौरान ग्रहण किए गए हैं।

राल्फ लिली टर्नर (1926) ने अपने शोध *The Position of Romani in Indo-Aryan* [ix]में रोमानी को आधुनिक भारतीय भाषाओं के केंद्रीय समूह से संबद्ध बताया और ब्रजभाषा, हिंदी तथा रोमानी के बीच गहन भाषिक संबंध स्थापित किया।

जॉन सैंपसन ने रोमानी भाषा की एकल उत्पत्ति (मोनोजेनेसिस) का सिद्धांत प्रस्तुत किया, किंतु टर्नर और इयान हैनकॉक जैसे विद्वानों ने यह स्पष्ट किया कि रोमानी और डोमरी भाषाओं की उत्पत्ति भिन्न-भिन्न भारतीय भाषिक समूहों से हुई है।

भाषावैज्ञानिक अनुसंधानों से यह भी सिद्ध होता है कि रोमानी भाषा ने भारतीय भाषाओं की मूल शब्दावली के साथ-साथ जटिल रूपात्मक संरचना, विभक्ति-प्रणाली और ध्वन्यात्मक विशेषताओं को भी सुरक्षित रखा है। रोमानी में प्रयुक्त महाप्राण व्यंजन (/ph/, /th/, /ch/, /kh/), प्रश्नवाचक सर्वनाम (‘kon’, ‘kaj’, ‘kana’), लिंग-वचन व्यवस्था तथा प्रत्यय-प्रणाली भारतीय भाषाओं से स्पष्ट रूप से मेल खाती है।

रोमानी भाषा की वाक्य संरचना भी भारतीय भाषाओं के समान है, जैसा कि निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट होता है—

मे पियेल शुद्रो पानी — **मैं ठंडा पानी पीता हूँ।**

तू पी शुद्रो पानी — **तुम ठंडा पानी पीते हो।**

अमेन पिया शुद्रो पानी — **हम ठंडा पानी पीते हैं।**

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि रोमानी भाषा की संरचना, शब्द निर्माण और व्याकरणिक प्रणाली भारतीय भाषाओं से गहरे रूप में जुड़ी हुई है।

अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रोमानी भाषा न केवल ऐतिहासिक रूप से भारतीय भाषाओं से उत्पन्न हुई है, बल्कि आज भी अपनी भाषिक संरचना में भारतीय भाषाओं की मूल विशेषताओं को संजोए हुए है।

रोमा और रोमानी भाषा

ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि रोमा समुदाय होमोजेनस समुदाय न होकर हेटरोजेनस समुदाय है। इसे 'रोमा' शब्द की यात्रा 'डोम-रोम-रोमा' और राव शंगल द्वारा फारस भेजे गए लोगों तथा गजनवी द्वारा बंदी बनाए गए विजातीय समूहों से समझा जा सकता है। रोमा समुदाय टोकरी, ईंट और बर्तन बनाने वाले, संगतराश और धातु कारीगर तथा संगीत व नर्तन से लोगों का मनोरंजन करने वालों का समूह था। स्पष्ट है कि वे अलग-अलग समूह या कुल के थे और बातचीत के लिए भाषा रूपों या भाषा समूहों का प्रयोग करते थे, जिनका भारत से घनिष्ठ संबंध है तथा उनकी जड़ें संस्कृत भाषा के साथ हिंदी, पंजाबी, उर्दू और बांग्ला में हैं। प्रवास के क्रम में समय के साथ रोमा ने कई बोलियाँ विकसित कीं, जो उनकी बसावट के देश और स्थानीय भाषाओं से प्रभावित हैं। रोमा समुदाय द्वारा बोले जाने वाले इन्हीं भाषा समूहों को समूहिक रूप से रोमानी भाषा कहा गया। आरंभ में यह वाचिक थी और हाल ही में इसका लिखित रूप विकसित हुआ। अतः कहना न होगा कि रोमा समुदाय

की भाषा रोमानी वस्तुतः कोई एक भाषा नहीं, बल्कि भाषाओं का समूह है, जो इंडो-आर्यन भाषा परिवार से संबंधित है।

Halwachs (2012) ने रोमानी भाषा को औपचारिक रूप से "एक विषम रूपों के समूह, जिसमें एक समान केंद्रीय संरचनाएँ होती हैं, किंतु उनमें किसी भी प्रकार का सर्वमान्य मानकीकरण नहीं है" के रूप में वर्णित किया है। वह मानते हैं कि इसका उपयोग मुख्यतः मौखिक होता था। इसमें न तो कोई एकभाषिक (केवल रोमानी बोलने वाला) वक्ता होता है, न कोई लिखित मानक, और न ही कोई नियामक व्याकरणिक नियम। रोमानी के मूल वक्ता सभी द्विभाषी या बहुभाषी होते हैं और वे रोमानी का उपयोग प्रायः जातीय पहचान के लिए करते हैं—रोमा और गाजो यानी गैर-रोमा के बीच अंतर करने हेतु, तथा अपने समुदाय से संबंधित मुद्दों पर चर्चा करने के लिए (Bakker & Kyuchukov, 2000; Leggio, 2011)। Friedman (1996) का मानना है कि विभिन्न उपभाषाएँ बोलने वाले वक्ता—जो बहुत अधिक संख्या में हैं—एक-दूसरे को जब पहचान लेते हैं कि वे रोमा हैं, तो बातचीत के लिए किसी आपसी समझ वाली मुख्यधारा की भाषा को चुन लेते हैं।

कुछ रोमानी उपभाषाएँ (भाषा रूप) निम्नानुसार हैं—

- बाल्कन उपभाषाएँ (The Balkan dialects): इन्हें साउदर्न बाल्कन या साउदर्न बाल्कन 1 भी कहा जाता है। ये उपभाषाएँ तुर्किए, ग्रीस, बुल्गारिया, मैसिडोनिया, अल्बानिया, सर्बिया (कोसोवो), रोमानी या, यूक्रेन और ईरान में बोली जाती हैं।
- बाल्कन ज़िस-उपभाषाएँ (The Balkan zis-dialects): इन्हें साउदर्न बाल्कन 2 भी कहा जाता है। ये उपभाषाएँ उत्तरी और मध्य बुल्गारिया और मैसिडोनिया में बोली जाती हैं।
- साउदर्न व्लाक्स उपभाषाएँ (The Southern Vlax dialects): ये उपभाषाएँ सर्बिया और मोन्टेनेग्रो, क्रोएशिया, बोस्निया-हर्ज़ेगोविना,

मैसेडोनिया, दक्षिणी रोमानी या, बुल्गारिया, ग्रीस, अल्बानिया और तुर्की में बोली जाती हैं।

- नॉदर्न व्लाक्स उपभाषाएँ (Northern Vlax dialects): ये उपभाषाएँ रोमानी या, मोल्दोवा, हंगरी, सर्बिया में बोली जाती हैं, साथ ही प्रवासी समुदायों में भी दुनिया भर में इसका प्रयोग होता है।
- साउदर्न सेंट्रल उपभाषाएँ (Southern Central dialects): ये उपभाषाएँ हंगरी, स्लोवाकिया, उत्तरी स्लोवेनिया, पूर्वी ऑस्ट्रिया, यूक्रेन और रोमानियामें बोली जाती हैं।
- नॉदर्न सेंट्रल उपभाषाएँ (Northern Central dialects): ये उपभाषाएँ स्लोवाकिया, चेक गणराज्य, पोलैंड और यूक्रेन में बोली जाती हैं।
- नॉर्थ-वेस्टर्न उपभाषाएँ (Northwestern dialects): इन उपभाषाओं का प्रयोग जर्मनी, ऑस्ट्रिया, फ्रांस, इटली, नीदरलैंड, बेल्जियम और फ़िनलैंड में किया जाता है।
- नॉर्थ-ईस्टर्न उपभाषाएँ (Northeastern dialects): इन उपभाषाओं का प्रयोग पोलैंड, लिथुआनिया, लातविया, एस्टोनिया, रूस, बेलारूस और यूक्रेन में किया जाता है।
- अन्य उपभाषाएँ (Other dialect groups): इनमें ब्रिटिश रोमानी, वेल्श रोमानी, इबेरियन (Iberian) रोमानी, स्लोवेनी (Slovene) रोमानी आदि हैं।

रोमा समुदाय के लोग अपने समुदाय के लोगों से अपनी दैनिकचर्या में रोमानी भाषा के रूप में इन्हीं भाषा रूपों का प्रयोग करते हैं। रोमा एकाधिक भाषी होते हैं और वे अपने समूह के बाहर उस देश-काल की भाषा का प्रयोग करते हैं, जहाँ वे रहते हैं। भाषिक साक्ष्यों से यह स्थापित है कि इनकी उत्पत्ति भारत से हुई है, किंतु इन भाषा रूपों पर देश-काल पर्याप्त प्रभाव पड़ा है, जिससे इनमें भेद आ गए हैं। फिर भी यहाँ

ध्यान देने योग्य है कि ये भेद उस प्रकार के नहीं हैं, जिससे भाषिक साक्ष्यों के आधार पर रोमानी भाषा की उत्पत्ति का पता नहीं लगाया जा सके।

रोमानी भाषा और भारतीय भाषाएँ

भाषा पर समय और स्थान का प्रभाव पड़ता है एवं उसके स्वरूप और संरचनाओं में परिवर्तन आता है। भाषा की उत्पत्ति और उसके ऐतिहासिक विकासक्रम का पता डायक्रोनिक भाषिक अध्ययन या ऐतिहासिक भाषिक अध्ययन के माध्यम से लगाया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि उसके साक्ष्य उपलब्ध हों। रोमानी भाषा के संबंध में भाषिक साक्ष्य 16वीं सदी में प्राप्त होते हैं। किंतु, वे साक्ष्य भी बहुत सीमित हैं; जबकि ऐतिहासिक विवरणों के अनुसार भारत से उनके प्रव्रजन को 5वीं सदी और 10वीं सदी के बीच माना जाता है। इस रूप में स्पष्ट है कि रोमानी भाषा के उपलब्ध साक्ष्यों और उनके प्रव्रजन के ऐतिहासिक साक्ष्यों में समय का बहुत अंतर है। इस अवधि में देश-काल से प्रभावित होते हुए रोमानी भाषा के स्वरूप में परिवर्तन अपरिहार्य रूप से हुआ होगा। फिर भी, रोमानी भाषा और भारतीय भाषाओं में विभिन्न स्तरों पर पर्याप्त समानताएँ हैं। ये समानताएँ ध्वन्यात्मक, शाब्दिक संरचनात्मक स्तर पर हैं। भाषिक साक्ष्यों के आधार पर विद्वानों ने माना है कि रोमानी भाषा की उत्पत्ति संस्कृति, प्राकृत, हिंदी-उर्दू, बांग्ला, राजस्थानी, पंजाबी से प्रभावित है। किंतु, ध्वन्यात्मक, शब्द रूप, रूप रचना, विभक्ति और व्याकरणिक संरचना के स्तर पर रोमानी भाषा हिंदी और संस्कृत के अधिक निकट है। इसे तुलनात्मक अध्ययन के के माध्यम से देखा जा सकता है।

1. ध्वन्यात्मक समानता : हिंदी और रोमानी दोनों में स्वर और व्यंजन संरचना में समानता है। उदाहरण के लिए, हिंदी में 'पानी' और रोमानी में 'pani' तथा हिंदी में 'दुख' और रोमानी में 'dukha' शब्द समान हैं।
2. शब्द रूप, रूप रचना संबंधी व्याकरणिक समानताएँ : हिंदी और रोमानी दोनों में संज्ञा और विशेषण का विभक्ति रूप पाया जाता है। उदाहरण के लिए हिंदी में 'मेरा घर' और रोमानी में 'muro khere' संरचनात्मक रूप

से समान हैं। साथ ही, हिंदी में 'तुम' और रोमानी में 'tu' समान रूप से प्रयुक्त होते हैं।

हिंदी और रोमानी भाषा का संबंध

हिंदी की भांति, रोमानी भाषा भी एक नव-भारोपीय भाषा है, जिसकी उत्पत्ति उत्तर भारतीय उपमहाद्वीप के मध्यवर्ती भाग से मानी जाती है। इसका तात्पर्य है कि दोनों भाषाएँ एक ही मध्य भारोपीय भाषा से विकसित हुईं, जो स्वयं पुरानी भारोपीय से विकसित हुई थी। ब्रिटिश भारतविद राल्फ एल. टर्नर ने 1926 में प्रकाशित अपने लेख 'The Position of Romani in Indo-Aryan' में इस संबंध को उद्घाटित और विश्लेषित किया है। Bakker एवं Monrad (2011: 41-43) मानते हैं कि रोमा समुदाय भारत से मध्य भारोपीय काल में, लगभग छठी शताब्दी ईस्वी में प्रव्रजित हुआ, अतः दसवीं शताब्दी में नव-भारोपीय भाषाओं के विकसित होने से पूर्व ही रोमा समुदाय जा चुका था। इस कारण, आधुनिक रोमानी की व्याकरणिक संरचना हिंदी तथा अन्य नव-भारोपीय भाषाओं से कई दृष्टियों से भिन्न है। ये भिन्नताएँ कुछ पुरानी संरचनाओं के संरक्षण के कारण हैं और वे संरचनाएँ पुरानी भारोपीय के अधिक निकट हैं, जबकि कुछ नव संरचनाएँ भाषा-संपर्क के प्रभाव के कारण उत्पन्न हुई हैं (Turner 1926: 159–176)।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि रोमानी और हिंदी दोनों भाषाएँ एक मध्य भारोपीय भाषा से उत्पन्न हुई हैं। इसकी खोज 20वीं शताब्दी के आरंभ में राल्फ एल. टर्नर (1926) ने की, जिन्होंने दोनों भाषाओं में ध्वन्यात्मक समानताओं को पहचाना—जो एक ही प्रकार के ध्वनि-परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुईं। ये परिवर्तन, भारोपीय भाषाओं में ध्वनि-परिवर्तनों की सुविख्यात कालानुक्रम के अनुसार, पुरानी भारोपीय भाषाओं से मध्य भारोपीय भाषाओं के विकास के प्रारंभिक चरण (चतुर्थ शताब्दी ईसा पूर्व से पहले) में घटित हुए। पुरानी भारोपीय भाषाओं में जहाँ तीन लिंग (पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग) तथा तीन वचन (एकवचन, द्विवचन, बहुवचन) पाए जाते थे, वहीं हिंदी और रोमानी—अन्य अधिकांश नव भारोपीय (NIA) भाषाओं की भाँति—केवल दो लिंग (पुल्लिंग और स्त्रीलिंग) तथा

दो वचन (एकवचन और बहुवचन) होते हैं। पुरानी भारोपीय और मध्य भारोपीय काल के दौरान व्याकरणिक संरचना में हुए परिवर्तनों के फलस्वरूप नपुंसकलिंग का लोप हुआ, क्योंकि यह पुल्लिंग के साथ विलीन हो गया (Bubenik 1996: 69; Bloch 1934/1965: 150–151; Oberlies 2005: 12)। मध्य भारोपीय काल के दौरान कुछ पुल्लिंग और नपुंसकलिंग संज्ञाएँ स्त्रीलिंग में भी परिवर्तित हो गईं। उदाहरणार्थ, OIA के अक्षि (नपुंसकलिंग) और 'अग्नि'(पुल्लिंग) हिंदी में क्रमशः आँख और आग बन गए, जबकि रोमानी में ये jakh और jag के रूप में प्रचलित हैं—और दोनों ही भाषाओं में ये स्त्रीलिंग हैं (Lesný 1916: 422; Turner 1932: 116; Bloch 1934/1965: 151–152; Oberlies 2005: 12)।

इटली के गुलियो सोरकिया केंटेनिया विश्वविद्यालय में भाषाविज्ञान के प्राध्यापक ग्यूलियार सोरकिया, फ्रांस के सुप्रसिद्ध रोमा भाषावैज्ञानिक डॉ. कोखो-नोस्की तथा भारतीय विद्वान ऋषि ने रोमानी भाषा का अध्ययन किया है। उन्होंने भी अपने अध्ययन में रोमानी और हिंदी में समानता को रेखांकित किया है। जैसे- रूख-पेड़ (रुख), कालो-काला, सोव-सो, लोन-नमक (लोन) आदि।

एथनोलॉग के अनुसार, दुनिया भर में लगभग 2.5 मिलियन रोमानी भाषी हैं। रोमानी कोलंबिया, जर्मनी, हंगरी, कोसोवो, उत्तरी मैसेडोनिया, स्वीडन और यूक्रेन में एक मान्यता प्राप्त अल्पसंख्यक भाषा है जो रोमा समुदाय द्वारा बोली जाती है। रोमानी बोलने वाले लोग तेरहवीं शताब्दी के मध्य में एशिया माइनर से बाल्कन गए। उनकी भाषा से स्पष्ट पता चलता है कि वे मूल रूप से भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी भागों से आये थे। पारंपरिक रोमानी भाषाओं में लगभग 60% शब्द और अधिकांश व्याकरणिक संरचनाएँ इंडो-आर्यन भाषाओं से आई हैं। इनमें पंजाबी, गुजराती, हिंदी, उर्दू, नेपाली और बांग्ला शामिल हैं।

यूरोपीय रोमानी में मूल शब्द (बिना उधार लिए गए शब्द) यह स्थापित करते हैं कि भाषाओं का समूह उत्तरी भारत में उत्पन्न हुआ, जबकि ऋण शब्द इंगित करते हैं कि लोगों ने जहाँ-जहाँ यात्रा की वहाँ के शब्दों को अपने रोजमर्रा के जीवन में उपयोग करने लगे। भारत से बाल्कन जाते समय रास्ते में, रोमानी ने फ़ारसी, ओस्सेटियन,

अर्मेनियाई और ग्रीक से ऋण शब्द लिए, इसलिए यह स्पष्ट है कि रोमानी भाषी रोमा समुदाय उन क्षेत्रों में रहे होंगे या वहाँ से यात्रा की होगी जहाँ ये भाषाएँ बोली जाती थीं। इसलिए उनकी बोलियों में भारतीय भाषा के साथ अन्य देशों के शब्द शामिल हो गए। परंतु आज भी मूल रोमानियानिवासी रोमा समुदाय की भाषा में भारतीय मूल के शब्द देखने को मिलते हैं।

चौदहवी सदी और उसके बाद रोमा समुदाय की भाषा विभिन्न यूरोपीय देशों में जहाँ भी वे 'भ्रमण' पर गए वहाँ कि भाषा ग्रहण करते चले गए। आर.एल. टर्नर बनाए सिद्धांत के अनुसार उनकी भाषा की दृष्टि से बंजारों के मूल की खोज मध्य भारत से होनी चाहिए। डॉ. शशि के अनुसार बाल्कन रोमा में हिंदी और रोमानी भाषा की समानता लिंग, वचन और कारक के स्तरों पर भी होती है। उदाहरण के लिए 'फ्रल' (भाई) शब्द के बहुवचन 'फ्रला'को देखा जा सकता है—

कर्ता कारक : फ्रला (भाइयों)
संबंध कारक : फ्रेलेंगो (भाइयों का)
संप्रदान कारक : फ्रलेंगे (भाइयों के लिए)
कर्म कारक : फ्रलेम (भाइयों को)
संबोधन कारक : फ्रलाले (भाइयों)
अपादान कारक : फ्रलेंडर (भाइयों द्वारा)
अधिकरण कारक : फ्रलेंस्टे (भाइयों में)
करण : फ्रलेंट्रसा (भाइयों का साथ)

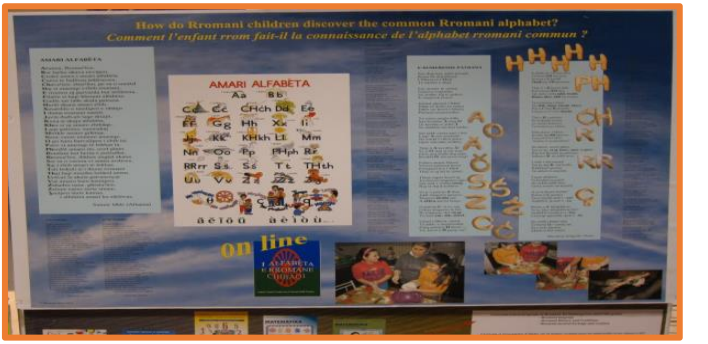
क्रियाओं के पाँच काल हैं :

वर्तमान : केराव (मैं करता हूँ)
अपूर्ण : केरावास (मैं कर रहा हूँ)
भूत : केरडेम (मैंने किया)
पूर्ण : केरडेमस (मैंने किया हूँ)
भविष्य : कम -केराव (मैं करुंगा)

इससे यह स्पष्ट होता है कि रोमा की भाषा में हिंदी और संस्कृत के शब्द आज भी विद्यमान हैं, परंतु एक घुमंतू समुदाय होने के कारण इनके प्रव्रजन के साथ-साथ इनकी भाषा तथा रीति-रिवाज में भी बदलाव देखने को मिलता है। 2022 में यूरोप के देशों रोमानीया, सर्बिया की यात्रा के दौरान रोमा समुदाय के बीच रहकर यह जानकारी प्राप्त हुई कि हिंदी के शब्द आज भी रोमानी भाषा में विद्यमान हैं। जैसे – पानी-पानी, छुरी -छुरी, बरो-बड़ा, बकरी-बकरी, अनाव-नाम, डोरी-डोरी, पुस्तिक-पुस्तक, डिम-दिन, सुकर-सुंदर, सालो-साला, साली-साली, तू-तुम, वह-वह, मिसलके-मसला, बराबर-बराबर आदि। इसके अतिरिक, वहाँ रहकर संकलित की गई शब्दों की एक सूची नीचे दी गई है, जो शाब्दिक समानता को रेखांकित करते हैं।

रोमानी भाषा	भारतीय भाषाएँ	अंग्रेजी	रोमानी भाषा	सभारतीय भाषाएँ	अंग्रेजी
संज्ञा/ सर्वनाम शब्द					
Churi	छुरी	Knife	Mui	मुँह	Face
Macho	माछो	Fish	Tut	दूध	Milk
Rich	रीछ	Bear	Rat	रक्त	Blood
La3	लाज	Shame	Rati	रात्रि/रात	Night
Talo	तालाब	Pond	Diwes	दिवस	Day
Derav	दरिया	Sea	Pani	पानी	Water
Barshind	बारिश	Rain	Berś	वर्ष	Year
Ame	हमें	We	Biav	विवाह	Wedding
Balorr	बाल	Hair	Acar	असर	Effect
Abiav	अविवाहित	Unmarrid	Mata	मातृ/माता	Mother
Bib/i	चाची/मासी/बिब्बो	Aunt	devel	देव/देवता	God
bokk	भूख	hunger	mas	मास/मांस	meat
manus	मनुष्य	human being	tjår	चोर	thief

sapp	साँप	snake	tatjo	सच	true
Cheeb	जीभ	Tongue	Sero	सिर	Head
विशेषण शब्द					
but	बहुत	Much, Many	Barabar	बराबर	Equal
purrano	पुराना	Old	Kalo	काला	Black
dur	दूर	Long	Lolo	लाल	Red
Andre	अन्दर	Inside	Amaro	हमारा	Our
क्रिया शब्द					
Sunel	सुनना	To hear	Barăkăr	बड़ा कर	To enlarge
Daravel	डराना	To make scare	Av	आना	To Come
3anel	जानना	To know	Jav	जाना	To Go
Puchel	पुछना	To ask	Le	लेना	To Take
Dikhel	देखना	To see	Pusj-	पूछ	To Ask
Phirel	फिरना/ घूमना	To walk	Piyel	पी	To Drink
Sungal	सूंघना	To Smell	Daral	डर	To Fear
Anav	आराम	To Rest			
संख्या					
EK	एक	one	Duy/ dy	दो	two
trinn	तीन	three	sjtar	चार	four
pansj	पाँच	five	shov	छह	Six



चित्र : 3.3 : रोमानी वर्णमाला, स्रोत : ज़मीर अनवर

रोमानी भाषा पूरे यूरोप, बाल्कन और उत्तरी और दक्षिण अमेरिका में फैले रोमा समुदाय द्वारा बोली जाती है। बहुसंख्य विशेष रूप से इबेरियन प्रायद्वीप में कुछ कुलों को छोड़कर अपनी मातृभाषा को अच्छी तरह से संरक्षित किया है। जिन्होंने इसे न्यायिक जाँच के परिणाम के रूप में खो दिया, जिसने उन्हें कास्टिलियन भाषा का उपयोग करने, ईसाई नामों को अपनाने और ईसाई धर्म अपनाने के लिए मजबूर किया। अवज्ञा करने पर उन्हें जलाकर मौत की सजा दी जाती थी। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि ऐसी परिस्थितियों में इबेरियन प्रायद्वीप के रोमा समुदाय ने भारतीय मूल के केवल कुछ शब्दों को ही संरक्षित किया है।

यह वास्तव में रोमा समुदाय का सही इतिहास खोजना इसकी भाषा के अध्ययन में निहित है। निर्विवाद रूप से भाषाई साक्ष्य भारतीय मूल के साथ-साथ अध्ययन के निष्कर्ष, विकास और परिवर्तनों को चिह्नित करते हैं जो विभिन्न देशों और राज्यों में उनके प्रवास के दौरान समय के साथ वाक्यात्मक टाइपोलॉजी और व्याकरणिक तंत्र के संदर्भ में रोमानी भाषा में हुए थे। रोमा अपनी दूर-दराज और लंबी यात्रा के दौरान अपनी अधिकांश भाषा को खोने और बदलने के लिए उत्तरदायी थे। इसलिए, अनिवार्य रूप से कुछ समानताएँ खो गई होंगी, अन्यथा रोमानी भाषा मूल रूप से भारतीय भाषाओं के समान है। इसका ठीक ढंग से अध्ययन पर दोनों भाषाओं में साम्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

रोमा समुदाय के मूल और भाषा की उत्पत्ति की खोज

रोमा समुदाय की उत्पत्ति और उनकी भाषा के मूल की खोज में सबसे पहली गंभीर कोशिश भाषाई तुलना के आधार पर की गई थी। यह प्रयास हंगरी के एक पादरी वायलि इस्तवान (Vályi István)[x] द्वारा किया गया, जिन्हें कुछ स्रोतों में वली स्टीफन के नाम से भी जाना जाता है। परंपरागत रूप से रोमानी समुदाय की भारतीय उत्पत्ति की पहचान का श्रेय इन्हीं को दिया जाता है।

1760 के दशक के प्रारंभ में, जब वायलि इस्तवान नीदरलैंड स्थित लीडेन विश्वविद्यालय में अध्ययनरत थे, तब उनकी भेंट भारत के मलाबार तट (वर्तमान केरल) से आए तीन भारतीय छात्रों से हुई। इन छात्रों की भाषा, रूप-रंग और सांस्कृतिक व्यवहार ने उन्हें हंगरी और स्लोवाकिया के कोमार्नो क्षेत्र में रहने वाले रोमा समुदाय की याद दिला दी।

वायलि इस्तवान एक ज़मींदार परिवार से संबंध रखते थे और उनके यहाँ रोमा समुदाय के लोग श्रमिक के रूप में कार्य करते थे। इस सामाजिक संपर्क के कारण वे रोमा समुदाय की बोली से परिचित थे। उन्होंने मलाबारी छात्रों द्वारा प्रयुक्त एक हज़ार से अधिक शब्दों की सूची तैयार की और उनकी तुलना रोमा शब्दावली से की, जिससे दोनों भाषाओं के बीच गहरी समानता स्पष्ट हुई।

चूँकि वायलि इस्तवान औपचारिक भाषाविद नहीं थे, इसलिए उन्होंने अपने निष्कर्षों को प्रकाशित करने के बजाय अपने मित्र और मुद्रक स्टीफन पैप स्ज़ात्मार नेमेथ को साझा किया। यह जानकारी आगे काउंट स्ज़ेकेली वॉन डोबा और फिर ऑस्ट्रियाई विद्वान जॉर्ज प्रे तक पहुँची।

जॉर्ज प्रे ने इस खोज को 1763 में वियना के समाचार-पत्र *Wiener Anzeigen* (Vienna Gazette) में संक्षिप्त सूचना के रूप में प्रकाशित किया। यह प्रकाशन पश्चिमी विद्वानों के लिए रोमानी समुदाय की भारतीय उत्पत्ति का पहला लिखित संकेत माना जाता है।

इसके कुछ ही समय बाद, सैमुअल ऑगस्टिन आब हॉर्टिस ने "*On the Present State, Special Manners, Way of Life and Other Properties and Gifts of the Gypsies in Ugria*" (1775–1776) शीर्षक से लेखों की एक श्रृंखला प्रकाशित की, जिसमें रोमानी लोगों की भारतीय उत्पत्ति को और अधिक स्पष्ट किया गया।

इसके पश्चात् जर्मनी के हाले विश्वविद्यालय के प्राध्यापक जोहान क्रिश्चियन क्रिस्टोफ़ रुडिगर ने 1782 में रोमानी भाषा और भारतीय भाषाओं के बीच व्याकरण और शब्दावली की तुलनात्मक समीक्षा प्रस्तुत की। उन्होंने यह प्रमाणित किया कि रोमानी भाषा की जड़ें पूर्वी भारत की भाषाओं में निहित हैं। विशेष रूप से संज्ञाओं के कारक-प्रत्यय और सर्वनाम प्रणाली में भारतीय मूल स्पष्ट दिखाई देता है।

रुडिगर[xi] ने यह भी स्पष्ट किया कि रोमानी भाषा में आए संरचनात्मक परिवर्तन विभिन्न भाषाओं के संपर्क का परिणाम हैं। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि भाषाई दृष्टि से रोमा और भारतीय समुदाय एक ही भाषिक परंपरा से जुड़े हुए हैं।[xii]

इस प्रकार, अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भाषावैज्ञानिक प्रमाणों के आधार पर यह स्थापित हुआ कि रोमानी समुदाय और उनकी भाषा की उत्पत्ति भारत से संबंधित है।

यूरोप में जिप्सी समुदाय का आगमन और उनके प्रति समाज की प्रतिक्रियाएँ ऐतिहासिक दस्तावेज़ों में मिलती हैं। तथापि, उनके आंतरिक सामाजिक जीवन, जीवन-पद्धतियों और सांस्कृतिक प्रथाओं के बारे में विस्तृत जानकारी सीमित है। उपलब्ध जानकारी मुख्यतः उनके बाह्य स्वरूप और समाज पर पड़े प्रभाव के संदर्भ में है।

जिप्सियों के गहरे त्वचा-वर्ण, लंबे केश, कानों के आभूषण और असामान्य वेशभूषा को तत्कालीन यूरोपीय समाज ने नकारात्मक रूप में देखा। इस कारण उन्हें अक्सर 'विदेशी', असामाजिक और कभी-कभी निंदनीय माना गया।

अध्याय - 3
यूरोप में रोमा समुदाय और उनकी सामाजिक स्थिति

परंपरागत रूप से रोमा समुदाय का कोई स्थायी निवास नहीं था। वे लंबे समय तक खानाबदोश जीवन शैली अपनाए हुए थे। हालांकि, 1960 के दशक में मध्य और पूर्वी यूरोप के कई देशों में लागू किए गए सेटलमेंट (स्थायी बसावट) कानूनों के बाद, रोमा समुदाय के अधिकांश लोग अब घुमंतू जीवन नहीं जीते। आज वे अपेक्षाकृत स्थायी आवासों में रहने लगे हैं।

अनुमानों के अनुसार, पूरे यूरोप में लगभग 10 से 12 मिलियन रोमा लोग निवास करते हैं। इनकी सबसे बड़ी आबादी बुल्गारिया, रोमानीया, स्लोवाकिया, सर्बिया और हंगरी जैसे देशों में पाई जाती है, जहाँ ये कुल जनसंख्या का लगभग 7 से 10 प्रतिशत हिस्सा हैं। इतनी बड़ी संख्या में होने के बावजूद, रोमा समुदाय की सामाजिक-आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय बनी हुई है। वे निरंतर गरीबी, अभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना कर रहे हैं, जिसके कारण उन्हें अक्सर झुग्गी-झोपड़ियों और स्लम बस्तियों में रहने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

रोमा समुदाय को अपने दैनिक जीवन में व्यापक स्तर पर रूढ़िवादिता, भेदभाव और नस्लवाद का सामना करना पड़ता है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षिक क्षेत्रों में वे गंभीर चुनौतियों से जूझ रहे हैं। उनके बच्चों को प्रायः सामान्य विद्यालयों से अलग, विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं वाले स्कूलों में भेजा जाता है, जिससे उनका मुख्यधारा की शिक्षा से संपर्क सीमित हो जाता है। इसके अतिरिक्त, स्वास्थ्य सेवाओं, रोजगार के अवसरों और सामाजिक अधिकारों तक उनकी पहुँच अत्यंत सीमित है। परिणामस्वरूप, रोमा समुदाय और व्यापक समाज के बीच संबंध सामान्यतः तनावपूर्ण, असंवेदनशील और भेदभावपूर्ण बने रहते हैं।



रोमा समुदाय और उनकी आवासीय स्थिति, कोबाडिन (रोमानिया),
यूरोप, 2023, स्रोत : रिमझिम सिन्हा

रोमानिया के कॉन्स्टेंटा शहर से लगभग 30 किलोमीटर दूर स्थित गोबादिन क्षेत्र में रोमा समुदाय की लगभग 2000 की आबादी अनौपचारिक बस्तियों और झुग्गी-झोपड़ियों में निवास करती है। यह बस्ती शहर के बाहरी क्षेत्र में स्थित है, जहाँ जीवन की परिस्थितियाँ अत्यंत दयनीय हैं और बुनियादी सुविधाओं का गंभीर अभाव है। आज भी यहाँ के लोग रोजगार की तलाश में भटकते रहते हैं तथा अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अस्थायी मजदूरी, छोटे-मोटे कार्यों और कारवाँ के साथ घूमकर किए जाने वाले कामों पर निर्भर रहते हैं।



रोमा समुदाय और उनकी आवासीय स्थिति, कोबाडिन (रोमानिया),
यूरोप, 2023, स्रोत : रिमझिम सिन्हा

गोबादिन की रोमा बस्ती — एक जीवंत दस्तावेज़

रोमानिया के कॉन्स्टेंटा शहर से लगभग तीस किलोमीटर दूर, कोबाडिन के नाम से जानी जाने वाली यह जगह किसी मानचित्र की प्रमुख रेखा नहीं है। यह एक ऐसी बस्ती है जो शहर के शोर से बाहर और समाज की निगाहों से दूर साँस लेती है। यहाँ रोमा समुदाय के लगभग दो हज़ार लोग रहते हैं—या कहें, हर दिन जीवन को फिर से जीने की कोशिश करते हैं। यह बस्ती स्थायित्व की नहीं, बल्कि लगातार चलते रहने की कहानी है।

टीन की चादरों और लकड़ी के टुकड़ों से बनी झुग्गियाँ हवा और धूप के बीच खड़ी हैं। इन झुग्गियों की दीवारें पतली हैं, लेकिन इनके भीतर बसे लोगों का धैर्य गहरा है। हर झोपड़ी एक छोटे-से ब्रह्मांड की तरह है—जहाँ बीता हुआ कल, अनिश्चित आज और धुँधला-सा कल एक साथ मौजूद रहते हैं। सुबह यहाँ किसी घड़ी की आवाज़ से नहीं, बल्कि ज़रूरत की पुकार से होती है। आग जलती है, धुएँ के साथ दिन की चिंता उठती है और लोग अपने-अपने रास्तों की ओर बढ़ जाते हैं।

रोज़गार यहाँ इंतज़ार नहीं करता—उसे ढूँढना पड़ता है। रोमा पुरुष और महिलाएँ शहर की ओर निकल पड़ते हैं, मज़दूरी की तलाश में। कभी कोई काम मिल जाता है, कभी खाली हाथ लौटना पड़ता है। कई परिवार आज भी कारवाँ के साथ चलते हैं—एक जगह से दूसरी जगह, जैसे ज़मीन से उनका रिश्ता स्थायी नहीं, बल्कि चलायमान हो। यह कारवाँ केवल सफ़र नहीं, बल्कि उनकी विरासत है—पीढ़ियों से चला आ रहा वह जीवन, जिसे आधुनिक दुनिया ने और भी कठिन बना दिया है।

स्त्रियों का जीवन इस बस्ती की सबसे मज़बूत रीढ़ है। वे घर संभालती हैं, बच्चों को पालती हैं और ज़रूरत पड़ने पर मज़दूरी भी करती हैं। उनके चेहरे पर लिखी थकान शब्दों की मोहताज नहीं, लेकिन उसी थकान में एक अडिग साहस छिपा है। वे जानती हैं कि हर दिन एक परीक्षा है—और हर दिन पास होना ज़रूरी है।

बच्चे यहाँ जल्दी समझदार हो जाते हैं। उनका बचपन झुग्गियों की सीमाओं में सिमट जाता है, लेकिन उनकी आँखों में अभी भी सपनों की चमक बची रहती है। वे हँसते

हैं, खेलते हैं और पल भर के लिए इस दुनिया को भूल जाते हैं, जो उन्हें बार-बार हाशिये पर धकेलती है। उनकी हँसी इस बस्ती की सबसे सच्ची भाषा है—जो बताती है कि जीवन, तमाम कठिनाइयों के बावजूद, अब भी ज़िंदा है।

शाम ढलते ही कोबाडिन की बस्ती थोड़ी धीमी हो जाती है। लोग झोपड़ियों के बाहर बैठते हैं, दिन भर की थकान को शब्दों में ढालते हैं। बातचीत में दुख भी है, उम्मीद भी। कोई आने वाले कल की बात करता है, कोई बीते हुए बेहतर दिनों को याद करता है। यहाँ दुख अकेले का नहीं होता—वह साझा होता है, जैसे रोटी या पानी।

यह बस्ती केवल अभावों की सूची नहीं है। यह आपसी रिश्तों, स्मृतियों और सामूहिक संघर्ष की जगह है। कोबाडिन के रोमा लोग हमें यह याद दिलाते हैं कि मनुष्य केवल उसकी परिस्थितियों से नहीं पहचाना जाना चाहिए। उनके पास भी इतिहास है, संस्कृति है और अपनी तरह से दुनिया को देखने की दृष्टि है।

कोबाडिन की झुग्गियाँ शायद अस्थायी हों, लेकिन यहाँ रहने वालों की जिजीविषा स्थायी है। हर सुबह एक नई चुनौती लेकर आती है और हर शाम इस उम्मीद के साथ ढलती है कि शायद अगला दिन थोड़ा बेहतर होगा। यही उम्मीद इस बस्ती की सबसे मजबूत नींव है—जो दिखाई नहीं देती, लेकिन हर साँस में महसूस की जा सकती है।



चूल्हा में मांस पकते हुए, स्रोत : रिमझिम सिन्हा



रोमा परिवार के रहने का एवं खाना बनाने का स्थान (चूल्हा), ज़िज़िन ब्रासोव काउंटी, 2023, स्रोत : रिमझिम सिन्हा

रोमा समाज में आज भी चूल्हे की संस्कृति

ज़िज़िन, ब्रासोव काउंटी का एक छोटा-सा गाँव है, लेकिन यह गाँव यूरोप में रोमा समुदाय की वास्तविक स्थिति को समझने की एक बड़ी खिड़की खोलता है। यहाँ की कुल आबादी में लगभग 65 प्रतिशत हिस्सा रोमा समुदाय का है। पहली नज़र में यह एक सामान्य ग्रामीण इलाका लग सकता है, लेकिन इसके भीतर छिपा जीवन गहरे अभाव, उपेक्षा और संघर्ष की कहानी कहता है।

ज़िज़िन में अधिकांश रोमा परिवार बिजली जैसी बुनियादी सुविधा के बिना जीवन यापन कर रहे हैं। उनके घर कुछ प्लाईवुड, लकड़ी और अस्थायी सामग्रियों से बनी झोंपड़ियाँ हैं, जो न तो मौसम से पूरी सुरक्षा देती हैं और न ही मानवीय गरिमा का एहसास। सर्दियों में ठंड, बारिश में रिसता पानी और गर्मियों में असहनीय तपन इन सभी परिस्थितियों को ये परिवार रोज़ झेलते हैं। ऐसे माहौल में जीवन केवल जीने का नहीं, बल्कि टिके रहने का संघर्ष बन जाता है।

यहाँ बेरोज़गारी की स्थिति अत्यंत भयावह है। ज़िज़िन के रोमा समुदाय में लगभग 75 प्रतिशत लोग बेरोज़गार हैं। जिन गिने-चुने लोगों को काम मिल भी पाता है, उनकी हालत भी संतोषजनक नहीं है। वे ज़िज़िन में स्थित मिनरल वॉटर प्लांट में दिहाड़ी मजदूर के रूप में काम करते हैं,कम मज़दूरी, अस्थायी काम और बिना किसी सामाजिक सुरक्षा के। यह रोजगार उन्हें गरीबी से बाहर नहीं निकालता, बल्कि केवल भूख को थोड़े समय के लिए टाल देता है।

इस आर्थिक अभाव का सीधा प्रभाव उनके दैनिक जीवन पर पड़ता है। गैस, बिजली या आधुनिक रसोई उपकरण उनके लिए विलासिता हैं। ऐसे में चूल्हा उनके जीवन का केंद्र बन जाता है,लेकिन यह केंद्र परंपरा या सांस्कृतिक गर्व का नहीं, बल्कि मजबूरी का है। लकड़ी जलाकर खाना बनाना उनकी पसंद नहीं, बल्कि विकल्पहीनता का परिणाम है।

चूल्हे के सामने बैठी रोमा महिला केवल भोजन नहीं पकाती, वह अपने परिवार के अस्तित्व को बचाने की कोशिश कर रही होती है। धुएँ से भरी आँखें, जलन भरी

साँसें और थके हुए हाथ, ये उसके रोज़मर्रा के साथी हैं। बच्चे इसी माहौल में बड़े होते हैं, जहाँ शिक्षा से पहले उन्हें अभाव समझ में आ जाता है। स्कूल जाना कई बच्चों के लिए अनियमित या असंभव है, क्योंकि परिवार की प्राथमिकता जीवित रहना होती है, भविष्य बनाना नहीं।

चिकित्सा सुविधाओं की कमी इस स्थिति को और गंभीर बना देती है। बीमारी होने पर इलाज कराना आसान नहीं है। न पर्याप्त धन है, न नियमित स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच। ऐसे में छोटी बीमारियाँ भी गंभीर रूप ले लेती हैं। यह स्थिति दर्शाती है कि रोमा समाज केवल आर्थिक रूप से ही नहीं, बल्कि सामाजिक रूप से भी हाशिए पर है।

ज़िज़िन का यह रोमा समुदाय यूरोप की उस सच्चाई को उजागर करता है, जिसे अक्सर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है। यूरोप को विकास, समानता और मानवाधिकारों का प्रतीक माना जाता है, लेकिन इसी यूरोप के भीतर रोमा समुदाय आज भी शिक्षा, चिकित्सा और रोजगार जैसी आधारभूत सुविधाओं के लिए संघर्ष कर रहा है। इसके साथ ही वे अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पहचान के लिए भी लगातार लड़ रहे हैं।

यह संघर्ष केवल सुविधाओं का नहीं, सम्मान का भी है। रोमा समाज को अक्सर बाहरी, अवांछित और हाशिए का समझा जाता है। इस सामाजिक बहिष्कार ने उनकी गरीबी को और गहरा किया है। यदि अवसर, संसाधन और समान व्यवहार मिले होते, तो शायद ज़िज़िन का दृश्य कुछ और होता।

एक संवेदनशील पाठक के लिए ज़िज़िन के रोमा परिवारों का चूल्हा केवल एक दृश्य नहीं, बल्कि एक सवाल है,क्या यह जीवन सच में उनकी पसंद है, या हमने उन्हें इसी जीवन तक सीमित कर दिया है? यह चूल्हा हमें याद दिलाता है कि जब तक समान अवसर और बुनियादी सुविधाएँ सभी तक नहीं पहुँचतीं, तब तक विकास अधूरा है।

अंततः, ज़िज़िन का यह छोटा-सा गाँव यूरोप के भीतर छिपी एक बड़ी असमानता का प्रतीक बन जाता है। यहाँ जलता चूल्हा परंपरा की नहीं, बल्कि मजबूरी की आग

है,जो रोमा समाज के संघर्ष, पीड़ा और अदृश्य कर दिए गए जीवन की गवाही देता है।



ज़िज़िन रोमा मुस्लिम महिला, ब्रासोव काउंटी, 2023 स्रोत रिमझिम सिन्हा

"घर" — एक अधूरा सपना

साहित्य और समाज के बीच खड़ी सबसे सशक्त अवधारणाओं में से एक है—"घर"। घर केवल ईंट, लकड़ी या दीवारों का जोड़ नहीं होता; वह स्मृति होता है, सुरक्षा की अनुभूति होता है, और मनुष्य के अस्तित्व की वह पहली परिधि, जहाँ वह स्वयं को पूर्ण मानता है। घर वह जगह है जहाँ भय दरवाज़े के बाहर रह जाता है और भीतर उम्मीद पलती है। लेकिन ज़िज़िन, ब्रासोव काउंटी के रोमा समुदाय के जीवन में यह अवधारणा किसी टूटे हुए वाक्य की तरह अधूरी रह जाती है।

यहाँ घर एक सपना है—जो देखा तो जाता है, लेकिन जिया नहीं जा सकता। एक कमरे में सिमटा जीवन उस सपने का संक्षिप्त रूप है, जिसमें न तो निजता के लिए जगह है, न ही भविष्य के लिए। सिद्धांत कहता है कि घर व्यक्ति और समाज के बीच सेतु होता है, लेकिन रोमा समुदाय के लिए यह सेतु बार-बार टूट जाता है। उनका घर उन्हें समाज से जोड़ने के बजाय, उन्हें और अलग-थलग कर देता है।

जहाँ घर होना चाहिए था वहाँ अस्थायित्व है, और जहाँ स्थिरता होनी चाहिए थी वहाँ भय है। साहित्यिक दृष्टि से देखें तो रोमा परिवारों के घर किसी जले हुए पन्ने की तरह हैं—जिन पर जीवन की कहानी लिखी तो है, लेकिन पूरी तरह पढ़ी नहीं जा सकती। एक कमरे की दीवारें केवल जगह को नहीं घेरतीं, वे इच्छाओं को भी सीमित कर देती हैं।

मानवाधिकार के विमर्श में घर गरिमा का आधार माना जाता है, लेकिन यहाँ गरिमा भी तंग जगह में सिमट जाती है। जब पूरा जीवन एक ही कमरे में घटित हो—सोना, जागना, पकाना, रोना, बीमार पड़ना—तो मनुष्य धीरे-धीरे अपने भीतर से भी सिकुड़ने लगता है। यह स्थिति केवल भौतिक अभाव नहीं, बल्कि आत्मिक थकान का रूप ले लेती है। सबसे गहरी हिंसा वह होती है जो बिना शोर के घटित होती है। ज़िज़िन के रोमा समुदाय का आवास संकट ऐसी ही एक मौन हिंसा है। कोई हथियार नहीं, कोई चीख नहीं—फिर भी हर दिन कुछ टूटता है: भरोसा, आत्मसम्मान, और भविष्य की कल्पना। यही वह संरचनात्मक पीड़ा है, जिसे आँकड़े नहीं, केवल अनुभव समझा सकते हैं।

घर पहचान भी देता है एक पता, एक ठहराव, एक स्वीकार्यता। लेकिन जब घर अस्थायी होता है, तो पहचान भी अस्थायी हो जाती है। रोमा समुदाय के लिए यह अस्थायित्व उन्हें नागरिक से अधिक छाया बना देता है—दिखाई तो देने वाली, लेकिन गिनी न जाने वाली। ऐसे पात्र हमेशा हाशिए पर रहते हैं, और यथार्थ में भी।

अंततः, ज़िज़िन का यह एक कमरा हमें यह समझने पर मजबूर करता है कि घर का अभाव केवल जगह की कमी नहीं, बल्कि जीवन की संपूर्णता का अभाव है। जब तक घर सुरक्षित, स्थायी और सम्मानजनक नहीं होगा, तब तक मनुष्य केवल जीवित रहेगा-जी नहीं पाएगा।

इस प्रकार, रोमा समुदाय के संदर्भ में "घर" कोई स्थिर अवधारणा नहीं, बल्कि एक सतत प्रश्न है-जो हर टूटी दीवार, हर तंग कमरे और हर अधूरे सपने के साथ और गहरा होता जाता है।

रोमा महिलाओं की स्थिति

रोमा चिल्ड्रेन, यूनिसेफ पैरलेल लाइव्स रोमा प्रोजेक्ट, एसएमपी, यूके रोमानी पीपल इन द ईयू यूरोपियन पार्लियामेंट जो शुरू से ही विभिन्न स्तरों पर भेदभाव का सामना करता रहा है और अपने अधिकारों के लिए वर्तमान में भी संघर्षरत है। अनेक भारतीय, यूरोपीय और अंतरराष्ट्रीय संस्थानिक प्रयासों के बावजूद उनकी स्थिति में सुधार और मौलिक अधिकारों की रक्षा में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं आया है। वे समाज के साथ आगे बढ़ाने और मुख्यधारा में शामिल होने में विफल रहे हैं। सामाजिक एकीकरण के बावजूद, रोमा अभी भी अपने दैनिक जीवन में पूर्वाग्रह, असहिष्णुता, भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना करते हैं। वे अच्छे कारीगार, लोहार तथा नृत्य-गायन में कुशल होने के बाबजूद, गरीबी और बेहद खराब सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का अनुभव करते हैं। इसका कारण गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुँच उन तक न होना है। यह भविष्य के परिप्रेक्ष्य और रोजगार, आय स्तर, आवास और स्वास्थ्य स्थिति को प्रभावित करता है और उनकी क्षमताओं को भी कम करता है तथा उनके अवसरों को सीमित करता है। यह सामाजिक एकजुटता और सतत मानव विकास को कमजोर करता है, प्रतिस्पर्धात्मकता में बाधा डालता है और समग्र रूप से समाज के लिए निम्न लागत उत्पन्न करता है। इसके कारण रोमा निचले स्तर के समुदाय में गिने जाते हैं।

रोमानियाके शहर कॉन्स्टैन्टा से लगभग 40 किलोमीटर दूर गोबादीन में रोमा महिलाओं की स्थिति अत्यधिक खराब है। गरीबी, अशिक्षा और असहायता के कारण इन पर अतिरिक्त दबाव डालकर समाज द्वारा उनका शोषण किया जाता है। समाज में दमन का प्रतिकार करने वाली और अपनी आवाज उठाने वाली महिलाओं को समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है। शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक जीवन के मुख्य क्षेत्रों में रोमा महिलाओं की स्थिति पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक कठिन है। इन्हें कम उम्र में विवाह करने और अधिक से अधिक बच्चों को जन्म देने के लिए दबाव डाला जाता है, जबकि इन महिलाओं के पास रहने के लिए न तो अच्छा घर है और न ही कोई सुरक्षित स्थान जिसे वे अपना घर कह सकें। ऐसी कठिन

परिस्थितियाँ, सीमित आवासीय स्थान, वित्तीय संसाधनों की कमी और रोजगार के अवसरों का अभाव घरेलू हिंसा की संभावना को बढ़ाते हैं और अंततः इसे जन्म देते हैं।

गरीबी से लड़ना और पर्याप्त आवास की स्थिति तथा बुनियादी ढांचे को सुनिश्चित करना रोमा समुदाय के लिए अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि आज भी रोमा अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। हालांकि, रोमा महिलाओं को श्रम बाजार तक पहुँचने और आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनने के लिए सशक्त बनाना एक महत्वपूर्ण कार्य है, और इसके लिए रोमा महिलाएँ लगातार प्रयास कर रही हैं। सेनाडा साली मैसेडोनिया की 26 वर्षीय रोमानी महिला हैं, जो हंगरी के बुख़ारेस्ट में यूरोपीय रोमा अधिकार केंद्र में वकील के रूप में कार्यरत हैं। यूरोपीय रोमा अधिकार केंद्र (ईआरआरसी) एक अंतरराष्ट्रीय सार्वजनिक हितकारी संगठन है जो रोमा समुदाय का नेतृत्व करता है, उनके अधिकारों की बात करता है और कानूनी सलाह और लड़ाई लड़ता है। यह रणनीतिक मुकदमेबाजी, अनुसंधान, वकालत और मानवाधिकार शिक्षा के माध्यम से रोमानी लोगों के विरोधियों, नस्लवाद और मानवाधिकारों का हनन करने वालो के खिलाफ कार्य कर रहा है।

Romani women's struggle for human rightsxiii के अनुसार मैसेडोनिया की राजधानी स्कोप्जे में एक अनौपचारिक और गरीब रोमानी बस्ती (जिसे "पोलिगॉन" के रूप में जाना जाता है) में स्थित उनके अस्थायी आवासों को ध्वस्त करने के बाद बेघर हो गई छह गर्भवती रोमानी नाबालिगों को जबरन बेदखल किया गया। यह विध्वंस एक विदेशी निवेशक द्वारा उस भूमि के निजीकरण की योजना का परिणाम था, जिसका उद्देश्य एक भव्य बारोक होटल का निर्माण करना था, और यह योजना महापौर (मेयर) द्वारा लागू की गई थी। जिन छह गर्भवती रोमानी नाबालिगों को उनके घरों से जबरन बाहर निकाला गया, उन्हें न केवल उनकी जातीय पहचान, अर्थात् उनके रोमा होने के कारण भेदभाव और नुकसान का सामना करना पड़ा, बल्कि उनके लिंग, उम्र, गर्भावस्था की स्थिति, अत्यंत निम्न सामाजिक-आर्थिक स्थिति, और सामाजिक बहिष्कार जैसे अन्य जुड़े हुए कारकों के कारण भी उन्हें गंभीर नुकसान और भेदभाव का सामना करना पड़ा।

फातमीरा दजलानी के अनुसार 50% रोमानी महिलाओं को स्कूली शिक्षा प्राप्त नहीं है; वे कभी स्कूल नहीं गईं। शिक्षा का अभाव रोमानी पुरूषों और स्त्रियों दोनों में देखने को मिलता है, परंतु शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति पुरुषों से कहीं अधिक दयनीय है। शिक्षा के अभाव के कारण महिलाओं के खिलाफ उत्पीड़न के कई मामले सामने आए हैं और इनमें दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी ही देखने को मिल रही है। रोमा समुदाय अंतर्निहित जातीय-सांस्कृतिक और जातीय विशिष्टताओं को अपनाने और बनाए रखने के लिए बच्चों को खुद शिक्षित करते हैं। परिवार में रोमा पुरुषों और महिलाओं की भूमिकाएँ ज़्यादातर पारंपरिक और रूढ़िवादी होती हैं। महिलाएँ ज़्यादातर घरेलू कार्य करती हैं। टोकरी बुनना, हाथ देखना तथा भविष्यवाणी करना उनका मुख्य कार्य है। हालाँकि, कुछ महिलाएँ कृषि और दूसरे के घरों में साफ-सफाई का भी कार्य करती हैं।

रोमानी महिलाओं का स्वास्थ्य

महिलाओं का स्वास्थ्य और आवास की स्थिति परस्पर संबंधित हैं, विशेष रूप से रोमा महिलाओं के मामले में, जो घर के काम के बोझ के साथ-साथ स्वास्थ्य को बनाए रखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य मानती हैं। इसका कारण समाज में प्रचलित कुप्रथाएँ, अशिक्षा, अंधविश्वास, समाज और परिवार में सीमित भूमिका, रोजगार के अवसर और आर्थिक विपन्नता और पुरुषों पर आश्रित होना है। रोमा महिलाओं और गैर-रोमा महिलाओं की स्थिति को तुलनात्मक ढंग से देखा जाए तो पता चलता है कि रोमानियामें 50 वर्ष से अधिक आयु की रोमा महिलाओं की स्थिति स्पष्ट रूप से अधिक ख़राब है। इटली में भी 50 वर्ष और उससे अधिक आयु की रोमा महिलाओं की स्थिति और स्वास्थ्य शिविरों के आस-पास रहने वाली रोमा महिलाओं की स्थिति गैर-रोमा महिलाओं की तुलना में बहुत बदतर है। अध्ययन में जब चिकित्सा बीमा कवरेज के बारे में उनसे पूछा गया तो औसतन, रोमा का 18% महिला उत्तरदाताओं ने बताया कि उन्हें स्वास्थ्य कवर नहीं दिया गया है, जबकि यह स्थिति गैर-रोमा महिलाओं में 8% तक सीमित है। रोमा समुदाय के साथ यह भेद-भाव कई वर्षों से चला आ रहा है। आवास के संबंध में, सर्वेक्षण के परिणाम यह

दर्शाते हैं कि सर्वेक्षण में रोमा के 42% लोग गंभीर परिस्थितियों में रहते हैं। इन लोगों के पास न तो पानी, सीवेज टैंक, बिजली की व्यवस्था है और न ही रोज़गार और उसके साधन हैं। रोमा महिलाओं को औसतन चार से अधिक बच्चे हैं, किंतु आवास की उचित व्यवस्था नहीं है, जिसके कारण उन्हें सड़कों पर रहना पड़ता है और उन्हें सामान्य मानवाधिकारों से वंचित रहना पड़ता है। अधिक बच्चे होने के कारण तथा आर्थिक स्वतंत्रता व आर्थिक साधन न होने के कारण बच्चों का उचित पालन-पोषण नहीं हो पाता है, जिसके कारण उन्हें गंभीर बीमारियाँ होने की अधिक आशंका बढ़ जाती है। यह भी रोमा महिलाओं के सामान्य और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। यूरोपियन यूनियन एजेंसी फॉर फंडामेंटल राइट्स के द्वारा किए गए 'Discrimination against and living conditions of Roma women in 11 EU Member States. Roma surve –Data in focus'xiv विषयक अध्ययन में बताया गया है कि पुरुष और महिलाएँ आवास से वंचित होने की गंभीर स्थितियों को समान रूप से साझा करते हैं। इसके परिणाम विशेष रूप से गंभीर हैं। खुले में आग पर खाना पकाने से घर के अंदर प्रदूषण फैलता है, जो विशेष रूप से महिलाओं को प्रभावित करता है, क्योंकि रोमा समुदाय में खाना बनाना महिलाओं का कार्य है। महिलाओं के साथ बच्चों को भी कई बीमारियों का सामना करना पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं। शोधकर्ता द्वारा रोमानियाकी यात्रा के दौरान वहाँ रहने वाली महिलाओं से मिलने का मौका मिला, जिनमें से ज़्यादातर महिलाएँ सरकार से नाराज़ थी। उनका मानना है कि उनके पास रहने को आवास नहीं है और रोज़गार की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। आज भी हम खाना बनाने के लिए लकड़ी का उपयोग करते हैं। यह हमारा ख़ाना है, जिसे हम खुले में पकाते हैं।

मासिक धर्म में भेद-भाव

मासिक धर्म लड़कियों के लिए एक प्राकृतिक क्रिया है, लेकिन यह हमेशा वर्जनाओं और मिथकों से घिरी रही है। इसके कारण महिलाएँ सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन के कई पहलुओं से बाहर हो जाती हैं। भारत में यह विषय आज तक वर्जित रहा है।

भारत की इस प्राचीन वर्जना का रोमा समाज आज भी अनुगमन कर रहा है। रोमानी भाषा में मासिक धर्म को "मखड़ो" कहते हैं। कई रोमा समाजों में आज भी मासिक धर्म के बारे में इस तरह की मान्यताएँ हैं कि इस दौरान रसोई घर में प्रवेश नहीं करना चाहिए, नए कपड़े या रसोई के बर्तन को नहीं छूना चाहिए, घर के सारे पुरूषों के वस्त्रों की धुलाई पर पाबंदी। मासिक धर्म के दौरान महिलाओं को परिवार के सदस्यों से पृथक रखा जाता है। भेड़-बकरी को छूने या चराने से उन्हें रोका जाता है। इसके पीछे मान्यता है कि यह लड़कियों और महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य, भावनाओं और जीवन-शैली को बुरी तरह प्रभावित करता है। रोमानी महिलाओं को मासिक धर्मा के समय अपने पति से दूर ज़मीन पर सोना होता है और घर के किसी भी शुभ या पवित्र स्थान पर जाने की मनाही होती है। हालाँकि, समय के साथ वर्तमान में कुछ परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं; फिर भी, आज भी रोमा समाज द्वारा लड़कियों के मासिक धर्म के बाद से शादी की तैयारी शुरू कर दी जाती है। पुरुषों द्वारा मासिक समय में हो रहे परिवर्तन को एक रोग माना जाता है। महिलाओं को मासिक धर्म के समय अपने आप को तैयार करना होता है और शरीर में हो रहे परिवर्तन को अकेले ही सहना पड़ता है, फिर चाहे वो दर्द हो या शरीर में हो रहे बदलाव। मासिक धर्म के दौरान पितृसत्तात्मक नियंत्रण और महिलाओं के व्यवहार और आवाजाही पर पाबंदियाँ लगाई जाती हैं और उनके समानता के अधिकार को कमज़ोर बनाया जाता है। कलंक और शर्मिंदगी का एहसास उन्हें इस तरह से कराया जाता है जो उन्हें असशक्त बनाता है। इसे एक बीमारी की तरह समाज में बताया जाता है। पुरुषों के साथ-साथ महिलाएँ भी इसे बीमारी मनाने लगी हैं। सुविधा न होने के कारण रोमा महिलाओं को मासिक के समय गंदे कपड़ों का इस्तेमाल करना पड़ता है जिससे संक्रमण और बीमारी का ख़तरा बना रहता है।

आयु और लिंग के आधार पर रोमानी समाज में पितृसत्ता का एकाधिकर है, जिसमें रोमानी महिलाएँ सबसे अधिक कमजोर हैं और शायद ही किसी को इनकी सुरक्षा और शिक्षा की परवाह है। महिलाओं की जीवन संरचनाएँ पुरुषों के अधीन हैं। परंपरा में उलझी रोमानी महिलाओं और लड़कियों का उनके यौन या वैवाहिक जीवन पर नियंत्रण बहुत कम है। उनके बच्चों के जन्म के बीच का समय कम होता है।

परिणामतः कम उम्र और एक कमजोर शारीरिक और मानसिक स्थिति हमेशा ही बनी रहती है। पितृसत्तात्मक सामुदायिक संरचना, शीघ्र विवाह, रोमानी महिलाओं द्वारा बच्चों की परवरिश और प्रजनन एक पारंपरिक रोमानी संस्कृति के जीवन की केंद्रीय विशेषताएँ हैं।

रोमा समुदाय में लिंग भूमिका पर पितृसत्तात्मक मानदंडों का प्रभुत्व है। समाज और परिवार में पुरुषों और महिलाओं की भूमिकाएँ स्पष्ट रूप से विभाजित हैं। महिलाएँ कानूनी और आर्थिक अधिकारों से वंचित हैं। प्रथागत मानदंड के अंतर अभी भी उनसे पारंपरिक प्रथाओं का पालन करने की अपेक्षा की जाती है। घर को व्यवस्थित रखने और परिवार के सदस्यों अथवा बच्चों की देखभाल करने जैसे कार्य पर बल दिया जाता है। शिक्षित महिलाओं में बेरोजगारी दर काफी अधिक है; निम्न आर्थिक परिवार की महिलाएँ पढ़ने-लिखने में असमर्थ होती हैं। रोमानी महिलाएँ अपनी जीविकोपार्जन के लिए बाँस की टोकरी बनाती हैं। इसके अतिरिक्त अपनी प्रतिभा से लोगों का हाथ देखना और भविष्यवाणी करना जीविका अर्जित करने का एक प्रमुख साधन है। रोमा महिलाओं के उत्थान के लिए कई गैर-सरकारी संस्थाएँ सुचारु रूप से कार्य कर रही हैं, परंतु और भी कई लाभप्रद योजनाओं के पहल की आवश्यकता है जिसे सरकार द्वारा चलाया जाना चाहिए।

अध्याय - 4
रोमा समुदाय में विवाह एवं पारिवारिक संरचना

रोमा समुदाय कई दृष्टियों से हिंदू समाज से साम्य रखता है। विवाह के संदर्भ में यह समाज मुख्यतः एकपत्नी प्रथा का पालन करता है तथा इनके बीच बहुविवाह के उदाहरण बहुत विरल हैं। रोमा समाज का सामाजिक संगठन सुव्यवस्थित होने के साथ-साथ अत्यंत रोचक भी है। इनके सामाजिक जीवन को समझने के लिए उनकी प्रमुख सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन आवश्यक है। परिवार, आपस में रक्त अथवा वैवाहिक संबंधों से जुड़े सदस्यों का एक घरेलू समूह होता है। प्रारंभिक अवस्था में रोमा परिवार प्रायः नाभिकीय परिवार[1] के रूप में पाया जाता है, जिसमें पति, पत्नी तथा उनके छोटे बच्चे शामिल होते हैं, जो अभी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं होते।

जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं और विवाह करने लगते हैं, यदि वे माता-पिता का घर नहीं छोड़ते, तो वही नाभिकीय परिवार धीरे-धीरे विस्तारित परिवार में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार के विस्तारित परिवार विशेष रूप से जिप्सी किसानों में सामान्य हैं, जबकि कारीगरों में ये अपेक्षाकृत कम पाए जाते हैं।

कभी-कभी ऐसे विस्तारित परिवारों का आकार अत्यधिक बढ़ जाता है और इनके सदस्यों की संख्या 20 या उससे अधिक तक पहुँच जाती है। इस अवस्था में परिवार एक बड़े पारिवारिक समुदाय का रूप ले लेता है। युगोस्लाविया में जिप्सियों के बीच परिवार की इन विभिन्न संरचनाओं के कारण महिलाओं की सामाजिक स्थिति, अधिकारों तथा कर्तव्यों में भी विविधता देखने को मिलती है।

[1] पति, पत्नी और अविवाहित बच्चों का छोटा परिवार

जेंस (Gens)

कई परस्पर संबंधित परिवार—जैसे पिता-पुत्र, भाई-बंधु, उनकी पत्नियाँ और बच्चे—जो अलग-अलग घरों में निवास करते हों, मिलकर जेंस का निर्माण करते हैं। यह रिश्तेदारी की एक प्रारंभिक और महत्वपूर्ण इकाई होती है।

फ्रैट्री (Phratry)

पितृ-पक्ष की ओर पाँचवीं पीढ़ी तक के रक्त-संबंधियों का समूह फ्रैट्री कहलाता है। इस समूह के सदस्यों की जीवन-शैली, परंपराएँ और सामाजिक व्यवहार समान होते हैं तथा इनके बीच विवाह पूर्णतः निषिद्ध माना जाता है।

फिस (कबीला)

फिस रोमा समुदाय समाज की एक व्यापक रिश्तेदारी संस्था है, जिसकी आधारशिला एक समान पूर्वज की धारणा पर टिकी होती है। यह छठी पीढ़ी से आगे के संबंधियों को एक साझा पहचान प्रदान करती है। यह व्यवस्था विशेष रूप से *मदजुपी* समुदाय[2] में प्रचलित है।

युगोस्लाविया में विवाह प्रथा

युगोस्लाविया के रोमा समुदाय में हाल के समय तक विवाह प्रायः दुल्हन-मूल्य के माध्यम से संपन्न किया जाता था। मानवविज्ञानी टी. पी. वुकानोविच के अनुसार, आधुनिक कानूनी सुधारों के बावजूद इस प्रथा के अवशेष आज भी सामाजिक व्यवहार में देखे जा सकते हैं।

पूर्वकाल में दुल्हन-मूल्य 50 से 100 दिनार (लगभग 3–5 स्वर्ण सिक्के) हुआ करता था, किंतु आधुनिक समय में यह राशि बढ़कर 30,000 दिनार या उससे अधिक हो

2 मदजुपी (Madjupi) रोमा (जिप्सी) समाज का एक विशिष्ट उपसमूह है, जो मुख्यतः बाल्कन क्षेत्र, विशेष रूप से युगोस्लाविया (आज के सर्बिया, मैसेडोनिया आदि) में पाया जाता है।

गई है। इसके अतिरिक्त दूल्हे को विवाह से संबंधित अन्य खर्च—जैसे बिस्तर, वस्त्र, जूते और आभूषण—भी वहन करने पड़ते हैं। हालाँकि *गाबेल्जी* समुदाय [3]में विवाह तय करने में दुल्हन-मूल्य की भूमिका नगण्य होती है। दुल्हन से कौमार्य की अपेक्षा की जाती है, जिसका प्रतीकात्मक प्रमाण रक्त-लिप्त वस्त्र माना जाता है। यदि लड़की कुंवारी न हो, तो दुल्हन-मूल्य में कटौती कर दी जाती है और यह सामान्यतः आधा रह जाता है। यही नियम विधवा अथवा तलाक़शुदा महिला के विवाह पर भी लागू होता है। हालाँकि जिप्सी कृषक समुदायों में विधवा को कभी-कभी युवती से अधिक मूल्यवान माना जाता है, क्योंकि ऐसे विवाह के माध्यम से पति को पत्नी की पारिवारिक संपत्ति पर अधिकार प्राप्त हो सकता है। मंगनी के उपरांत अविवाहित लड़की लगभग एक वर्ष तक माता-पिता के घर रहती है और विवाह की तैयारी करती है, जबकि विधवाएँ और तलाक़शुदा महिलाएँ अपेक्षाकृत कम समय—लगभग एक माह—में विवाह कर लेती हैं। विवाह सामान्यतः बिचौलियों की मध्यस्थता से तय किया जाता है। पूर्व में विवाह की आयु दुल्हन के लिए लगभग 20 वर्ष और दूल्हे के लिए 20–25 वर्ष मानी जाती थी। यद्यपि वर्तमान में कानूनी रूप से न्यूनतम आयु 18 वर्ष निर्धारित है, फिर भी व्यवहार में अल्पायु विवाह की घटनाएँ देखी जाती हैं।

अर्लिस्की[4] *रोमा* समुदाय में विवाह उत्सव विशेष महत्व रखता है। यह उत्सव तीन दिनों तक चलता है, जिसमें नृत्य, सामूहिक भोज, भेड़ के मांस का सेवन और पारंपरिक संगीत अनिवार्य होते हैं। अंत में अतिथि दुल्हन के वस्त्रों पर मुद्रा चिपकाकर अपना योगदान व्यक्त करते हैं।

[3] गाबेल्जी समुदाय रोमा समाज का वह उपसमूह है जिसमें विवाह में दुल्हन-मूल्य की प्रथा अत्यंत कमज़ोर या लगभग अनुपस्थित पाई जाती है।यह विशेषता इन्हें अन्य रोमा समुदायों—जैसे मदजुपी और अर्लिस्की—से अलग बनाती है।

[4] अर्लिस्की रोमा रोमा (जिप्सी) समाज का वह उपसमूह है जो मुख्यतः बाल्कन क्षेत्र—विशेष रूप से सर्बिया, मैसेडोनिया, कोसोवो और बोस्निया-हर्ज़ेगोविना—में पाया जाता है।ये रोमा समूह अपेक्षाकृत स्थायी (settled) जीवन जीते हैं और अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं, विशेषकर विवाह उत्सवों, के लिए प्रसिद्ध हैं।

अपहरण द्वारा विवाह

बाल्कन क्षेत्र सहित विश्व के अनेक समाजों में प्राचीन काल से अपहरण द्वारा विवाह की परंपरा प्रचलित रही है। रोमा समुदाय में यह तब देखने को मिलती है जब वर-वधू परस्पर सहमत हों, किंतु माता-पिता विवाह की अनुमति न दें। समय के साथ दोनों परिवारों के बीच समझौता हो जाता है और विवाह को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हो जाती है। ऐसी स्त्री को प्रायः पति के घर विशेष सम्मान प्रदान किया जाता है।

फ़िनलैंड रोमा परिवार और सामाजिक स्थिति

फ़िनलैंड के जिप्सियों में पारिवारिक संबंध अत्यंत सुदृढ़ होते हैं, किंतु उनकी पारंपरिक गतिशील जीवन-शैली के कारण पूर्ण विस्तारित परिवार व्यावहारिक नहीं माना जाता। निरंतर यात्रा की आवश्यकता ने छोटे पारिवारिक समूहों को बढ़ावा दिया, जिसके परिणामस्वरूप यहाँ विस्तारित नाभिकीय परिवार की अवधारणा विकसित हुई।

वर्तमान समय में परिवार का आकार आवास की उपलब्धता, भौगोलिक स्थान तथा सामाजिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त इमारतों का उपयोग संभव होता है, जबकि शहरी फ़्लैटों में यह सुविधा सीमित रहती है। एक रोमा व्यक्ति प्रायः केवल एक ही घर तक सीमित नहीं रहता, बल्कि परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न रिश्तेदारों के साथ निवास कर सकता है। निवास परिवर्तन के साथ ही वह व्यक्ति पारिवारिक पदानुक्रम में स्वतः अपना स्थान प्राप्त कर लेता है।

मार्टि ग्रोनफोर्स के अनुसार, यह लचीलापन प्रायः मातृवंशीय रेखाओं में अधिक दिखाई देता है। फिर भी फ़िनिश रोमा परिवार न तो पूर्णतः पितृसत्तात्मक है और न ही पूर्णतः मातृसत्तात्मक। चूँकि कानूनी विवाह अपेक्षाकृत कम होते हैं, इसलिए अधिकांश मामलों में पति-पत्नी दोनों अपने-अपने पारिवारिक नाम बनाए रखते हैं।

जन्म के पंजीकरण के समय अक्सर पिता के बजाय माँ का पारिवारिक नाम दर्ज किया जाता है। जिप्सी समाज में यह एक सामान्य परंपरा मानी जाती है कि बच्चे को माँ का उपनाम मिले। इसका कारण मुख्यतः व्यावहारिक है, क्योंकि ऐसे औपचारिक कार्यों की ज़िम्मेदारी प्रायः महिलाओं पर ही होती है। इसके अतिरिक्त, जिप्सी महिलाएँ अपने बच्चों पर पुरुषों की अपेक्षा अधिक अधिकार और भावनात्मक स्वामित्व रखती हैं। फिर भी, यह असामान्य नहीं है कि कोई बच्चा बचपन में माँ का नाम प्रयोग करे और वयस्क होने पर पिता का नाम अपना ले। कई बार ऐसा पिता के आग्रह पर भी होता है। यह निर्णय अक्सर बच्चे की भावनात्मक जुड़ाव की भावना पर आधारित होता है—कि वह स्वयं को माँ के परिवार के अधिक निकट महसूस करता है या पिता के।

वंश (lineage) को लेकर परिवार के सदस्यों के बीच चर्चाएँ आम हैं और कई बार ये हल्के-फुल्के मज़ाक का विषय भी बन जाती हैं। एक ही माता-पिता से जन्मे भाई-बहन भी कभी-कभी अपने माता-पिता के परिवारों को अलग-अलग दृष्टि से देखते हैं और इसी कारण कोई माँ के परिवार से, तो कोई पिता के परिवार से अपनी पहचान जोड़ता है। चूँकि रोमा समाज में दैनिक जीवन में उपनामों का प्रयोग कम होता है और लोग प्रायः उपनामों के स्थान पर उपाधियाँ या पहले नामों से पहचाने जाते हैं, इससे यह स्पष्ट होता है कि वंश की पहचान एक हद तक स्वैच्छिक होती है।

“साआरा की कुस्ती की हेलेना” जैसे संबोधन बहुत प्रचलित हैं। यहाँ पहचान रिश्तों के माध्यम से दी जाती है—यह दर्शाते हुए कि वह नानी के बेटे की बेटी है। माता या पिता के परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा भी वंश-चयन को प्रभावित कर सकती है। अक्सर संतान उस परिवार का नाम अपनाती है जो अधिक सम्मानित माना जाता है, चाहे वह माँ की ओर से हो या पिता की। पुराने पारिवारिक विवाद भी वंशगत निष्ठाओं को विभाजित कर सकते हैं।

पितृवंशीयता का समर्थन करने वाला एक महत्वपूर्ण अवलोकन यह है कि एक ही पुरुष से अलग-अलग महिलाओं द्वारा जन्मे बच्चे “पूर्ण” भाई-बहन माने जाते हैं,

जबकि एक ही महिला से अलग-अलग पुरुषों द्वारा जन्मे बच्चों को "आधा" भाई-बहन कहा जाता है।

यद्यपि रिश्तेदारी की भावनात्मक गहराई मातृ और पितृ दोनों रेखाओं में अलग-अलग हो सकती है, फिर भी जिप्सी समाज में रिश्तेदारों की परिभाषा व्यापक है। दोनों माता-पिता के सभी रक्त-सम्बंधी पूर्वज-चाहे रिश्ता कितना ही दूर का क्यों न हो-परिवार का हिस्सा माने जाते हैं। पार्श्व रिश्तेदारी में कौन शामिल होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि लोग अपने वंश को किसी साझा पूर्वज से जोड़ पाने में सक्षम हैं या नहीं।

मार्टि ग्रोनफोर्स फ़िनलैंड के रोमा समाज में लिंग, विवाह और यौन भूमिकाओं की गहन और संवेदनशील व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। इस समाज में पुरुष अपने परिवार की महिलाओं को यौन दृष्टि से नहीं देखते। वे उनके लिए केवल माँ, बहन या बेटियाँ होती हैं,वास्तविक अर्थों में कभी पत्नियाँ नहीं।

स्त्री यौनता का विषय इतना कठोर रूप से वर्जित है कि शायद ही जिप्सी संस्कृति में कोई और विषय हो जिसके चारों ओर इतने नियम और निषेध बुने गए हों। विशेष रूप से बुज़ुर्गों की उपस्थिति में यौन विषयों पर चर्चा पूर्णतः निषिद्ध है। यह निषेध मनोरंजन तक में दिखाई देता है। यदि टीवी पर यौन संकेत वाला कोई दृश्य या संवाद आता है, तो युवा लोग चुपचाप कमरे से बाहर चले जाते हैं और कुछ समय बाद ही लौटते हैं।

एस.एस.शशि के अनुसार, एक बार एक साधारण टीवी डॉक्यूमेंट्री में "परिवार नियोजन" शब्द सुनते ही युवा लोग तुरंत कमरे से बाहर चले गए और काफ़ी देर तक वापस नहीं आए। आपस में युवा लोग यौन विषयों पर कुछ हद तक खुलकर बात कर सकते हैं, लेकिन मिश्रित समूह में चर्चा केवल पुरुष यौनता तक सीमित रहती है। अविवाहित लड़कियों की स्वतंत्रता अत्यंत सीमित होती है। यदि अन्य परिवारों के युवा पुरुषों से मिलने की संभावना हो, तो वे बिना निगरानी के शायद ही कभी घर से बाहर जा पाती हैं। नृत्य जैसे सामाजिक अवसरों में भी कई बार उन्हें भाग लेने की अनुमति नहीं दी जाती। यदि कोई लड़की प्रेम में पड़ जाती है, तो उसे यह बात अपने

परिवार से छुपाकर रखनी पड़ती है। परिवार को पता चलने पर उसकी गतिविधियाँ और भी नियंत्रित कर दी जाती हैं। यदि वह किसी चुने हुए पुरुष के साथ जीवन बिताना चाहती है, तो उसके पास केवल दो ही रास्ते होते हैं, या तो घर से भाग जाना, या उस पुरुष द्वारा उसका अपहरण किया जाना। परिवार की अनुमति मिलना लगभग असंभव होता है।

यदि वह भागने में सफल हो जाती है, तो उसके भाइयों का कर्तव्य होता है कि वे उसे वापस लाएँ। यदि वह मिल जाती है और लौटने से इंकार करती है, तो उसे बलपूर्वक घर लाया जाता है। कई असफल प्रयासों के बाद ही परिवार धीरे-धीरे यह स्वीकार करता है कि वह अपने निर्णय को लेकर दृढ़ है।

महिला को उसके मूल परिवार में वापस लाने का यह प्रयास इस धारणा से भी जुड़ा है कि स्त्री को यौन इच्छाओं वाला प्राणी नहीं माना जाता। किसी पुरुष के साथ भाग जाना उसके लिए अपनी यौनता को स्वीकार करने जैसा होता है, और उसे घर वापस लाकर परिवार इस सच्चाई का सामना करने से बच जाता है।

रोमा समुदाय में विवाह और दहेज प्रथा

रोमा समाज में विवाह प्रायः पारिवारिक सहमति से तय किए जाते हैं। यह परंपरा फ़िनलैंड, यूगोस्लाविया और रोमानियाके रोमा समुदायों से काफ़ी मिलती-जुलती है। विवाह से पहले दोनों पक्ष आपसी सहमति से दहेज या *दरो* की राशि तय करते हैं। यह राशि कई सामाजिक और आर्थिक कारणों पर निर्भर करती है।

दहेज निर्धारित करने के प्रमुख आधार

लड़की की जन्मजात सामाजिक स्थिति, अर्थात वह किस *वित्सा* और *नात्सिया* से संबंधित है तथा उसके परिवार की समाज में प्रतिष्ठा क्या है।

लड़की की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा
जैसे उसका चरित्र, नैतिक मूल्य, व्यवहार, धन अर्जित करने की क्षमता और यह कि वह पहले विवाहित रही है या नहीं।

दोनों परिवारों की आर्थिक स्थिति

दहेज की राशि समय और परिस्थिति के अनुसार बदलती रहती है। लेखन के समय यह राशि इतनी अधिक थी कि अधिकांश रोमा परिवार उसे वहन नहीं कर पाते थे। एक प्रतिष्ठित और सफल भविष्यवक्ता परिवार की कुँवारी लड़की के लिए लगभग 15000 डॉलर तक दहेज मिल सकता था। साधारण किंतु सम्मानित परिवारों को 2500 से 3000 डॉलर तक प्राप्त होते थे। जो लड़कियाँ पहले विवाहित रह चुकी हों या जिनकी सामाजिक छवि संदिग्ध हो, उनके लिए यह राशि घटकर 1000 से 1500 डॉलर रह जाती थी।

कुछ क्षेत्रों, जैसे बरवाले,गोबादीन में परिवार अत्यंत निर्धन थे। वहाँ कई बार दहेज से बचने के लिए परिवारों के बीच लड़कियों की अदला-बदली कर दी जाती थी और ऐसी स्थिति में कोई दहेज नहीं लिया जाता था।

सगाई की रस्म (तुम्मिनिमोस)

जब दोनों पक्ष सहमत हो जाते हैं, तब दुल्हन और दूल्हे के पिता स्थानीय *कुम्पानिया*[5] के पुरुषों की सभा बुलाते हैं। इस सभा में बाहरी व्यक्ति या गैर-रोमा शामिल नहीं हो सकते। दुल्हन और दूल्हा स्वयं इस रस्म में उपस्थित नहीं होते। दूल्हे का पिता दुल्हन के पिता को *दरो* सौंपता है, जिसे उपस्थित सभी पुरुष गिनकर सत्यापित करते हैं। इस दौरान कमरे के परदे बंद रहते हैं और दरवाज़े पर पहरा होता है।

दरो का स्वीकार करना विवाह की औपचारिक स्वीकृति माना जाता है। इसके बाद दूल्हे का पिता शराब की बोतल (*प्लोत्स्का*) और एक सिर ढकने का कपड़ा (*डिक्लो*) देता है, जिसमें सगाई का उपहार (*कपारा*), प्रायः सोने का हार, लिपटा होता है।

5 कुम्पानिया रोमा समाज की स्थानीय सामुदायिक इकाई होती है।

यदि लड़की यह कपड़ा स्वीकार कर लेती है, तो इसे उसकी सहमति माना जाता है। यदि वह अपना निर्णय बदल ले, तो वह उपहार लौटा सकती है और विवाह रद्द हो जाता है।

विवाह संस्कार (अबियाव)

यदि लड़का या लड़की में से कोई भी पहले विवाहित न हो, तो पूर्ण विवाह संस्कार किया जाता है। दुल्हन की पोशाक उसके रिश्तेदारों द्वारा तैयार की जाती है, जिसके लिए सामग्री दूल्हे के माता-पिता उपलब्ध कराते हैं। एक विवाहित जोड़ा, जिसे *किरवो/किरवी* कहा जाता है, पूरे समारोह में दुल्हन-दूल्हे का मार्गदर्शन करता है।

घूँघट का महत्व (डिक्लो)

डिक्लो लाल रंग का होता है या उसमें लाल रंग शामिल होता है। उस पर लाल गुलाब लगाया जाता है, जो कुँवारापन, सौभाग्य और वैवाहिक स्थिति का प्रतीक माना जाता है। अविवाहित लड़कियाँ इसे हाथ में लेकर गोल घेरा बनाकर नृत्य करती हैं। इसके बाद *किरवी* [6]अत्यंत सावधानी से दुल्हन के सिर पर डिक्लो रखती है। महिलाएँ उसके चारों ओर इकट्ठा हो जाती हैं और दुल्हन भावुक होकर रोती रहती है। माना जाता है कि इसी क्षण वह विवाहित स्त्री बन जाती है।

दुल्हन की विदाई (ज़ेइता)

अगला चरण *ज़ेइता* कहलाता है, जिसका अर्थ है "दुल्हन को उसके नए घर ले जाना।" इस अवसर पर भावनात्मक माहौल होता है। कभी-कभी युवक-युवतियाँ रास्ता रोककर पैसे माँगते हैं। झगड़े भी हो सकते हैं और कुछ मामलों में दुल्हन विरोध करती है, विशेषकर जब वह इस विवाह से सहमत न हो। अंततः दहेज चुका दिया

[6] रोमा (जिप्सी) विवाह परंपरा में किरवी वह विवाहित स्त्री होती है जो दुल्हन की मार्गदर्शक, संरक्षक और अनुष्ठानिक सहायक की भूमिका निभाती है।

जाता है और दुल्हन दूल्हे के परिवार का हिस्सा बन जाती है। इस पूरी प्रक्रिया में दूल्हा स्वयं भाग नहीं लेता और उसे दुल्हन से दूरी बनाए रखनी होती है।

भोज और सम्मान

विवाह भोज के बाद, प्रायोजक रोटी लेकर परिवार के वरिष्ठ पुरुषों के पास जाता है। प्रत्येक व्यक्ति कुछ धनराशि देता है, जिसे दुल्हन रोटी में रखती है। यह सम्मान और आदर (*पाकिव*) का प्रतीक माना जाता है।



रोमानी विवाह दूल्हा और दुल्हन 2023 चित्र स्रोत -रिमझिम सिन्हा

रोमानिया में रोमा समुदाय का विवाह: परंपरा, परिवर्तन और सामूहिक जीवन का उत्सव

रोमानिया में यह समुदाय न केवल संख्या में व्यापक है, बल्कि अपनी सांस्कृतिक पहचान को भी आज तक जीवित रखे हुए है। वर्ष 2023 में रोमानियामें देखा गया एक रोमा विवाह इस बात का सजीव उदाहरण है कि किस प्रकार यह समुदाय परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाते हुए अपने सामाजिक जीवन को आगे बढ़ा रहा है। यह विवाह प्रातःकाल सम्पन्न हुआ और इसमें हल्दी, मेहंदी तथा संगीत जैसे आयोजन भी शामिल थे। यह तथ्य अपने आप में महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह दर्शाता है कि रोमा विवाह परंपराएँ स्थिर नहीं हैं, बल्कि समय और स्थान के अनुसार उनमें नए तत्व भी जुड़ते रहते हैं।

रोमा समाज में विवाह का सामाजिक स्वरूप रोमा समाज में विवाह केवल दो व्यक्तियों के बीच का निजी संबंध नहीं होता। यह एक सामाजिक घटना होती है, जिसमें परिवार, रिश्तेदारी और समुदाय की निर्णायक भूमिका होती है। विवाह के माध्यम से न केवल दो व्यक्तियों का जीवन जुड़ता है, बल्कि दो परिवारों और कई बार दो सामुदायिक इकाइयों जिन्हें कुम्पानिया कहा जाता है-के बीच संबंध स्थापित होता है। कुम्पानिया रोमा समाज की वह मूल सामाजिक इकाई है, जो अपने सदस्यों के आचरण, विवाह, विवाद और परंपराओं का संचालन करती है। विवाह जैसे महत्वपूर्ण अवसर पर पूरी कुम्पानिया की सहभागिता यह स्पष्ट कर देती है कि व्यक्ति की पहचान समुदाय से अलग नहीं देखी जाती। लेखिका द्वारा 2023 में देखा गया यह विवाह भी इसी सामूहिक भावना का परिचायक था। विवाह स्थल पर केवल निकट संबंधी ही नहीं, बल्कि समुदाय के अनेक सदस्य उपस्थित थे। यह उपस्थिति विवाह को एक निजी अनुष्ठान से ऊपर उठाकर सामाजिक उत्सव का रूप देती है। विवाह की पूर्व तैयारियाँ: हल्दी, मेहंदी और संगीत इस विवाह की एक विशेष विशेषता यह थी कि इसमें हल्दी, मेहंदी और संगीत जैसे कार्यक्रम आयोजित किए गए। पारंपरिक रोमा विवाहों में इन रस्मों का उल्लेख सीमित रूप में मिलता है, किंतु

आधुनिक रोमानियामें बसे रोमा समुदायों में अन्य संस्कृतियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

हल्दी समारोह को पवित्रता और शुभता से जोड़ा गया। यह माना जाता है कि हल्दी नकारात्मक शक्तियों से रक्षा करती है और दुल्हन के वैवाहिक जीवन को मंगलमय बनाती है। मेहंदी के अवसर पर दुल्हन की सजावट के साथ-साथ स्त्रियों का सामूहिक मिलन होता है, जहाँ गीत, हँसी और बातचीत के माध्यम से भावनात्मक जुड़ाव गहरा होता है। संगीत कार्यक्रम में पारंपरिक धुनों के साथ आधुनिक संगीत भी शामिल था, जो यह दर्शाता है कि रोमा समाज अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ा रहते हुए समय के साथ बदलना भी जानता है।

इन आयोजनों ने विवाह को केवल एक रस्म न बनाकर उत्सव में परिवर्तित कर दिया। प्रातःकालीन विवाह और उसका सांस्कृतिक अर्थ रोमा समाज में प्रातःकाल को अत्यंत शुभ माना जाता है। सुबह का समय नई शुरुआत, शुद्धता और सकारात्मक ऊर्जा का प्रतीक है। इस विवाह का सुबह सम्पन्न होना इस विश्वास को दर्शाता है कि दांपत्य जीवन का आरंभ प्रकृति की ताज़गी और उजाले के साथ होना चाहिए। प्राकृतिक प्रकाश में सजा विवाह स्थल, फूलों की सजावट और खुला वातावरण एक सौम्य और भावनात्मक दृश्य रचते हैं। यह वातावरण न केवल नेत्रों को सुख देता है, बल्कि विवाह के आध्यात्मिक पक्ष को भी उभारता है।

दुल्हन–दूल्हे की वेशभूषा और प्रतीकात्मकता दुल्हन ने सफेद रंग का भव्य परिधान धारण किया था, जो आधुनिक यूरोपीय विवाह शैली का प्रभाव दर्शाता है। सफेद रंग पवित्रता, शांति और नए जीवन की शुरुआत का प्रतीक माना जाता है। गले का आभूषण और हाथ में पुष्पगुच्छ उसकी गरिमा और आत्मविश्वास को और बढ़ाता है। दूल्हा भी औपचारिक परिधान में सुसज्जित था। यह दृश्य स्पष्ट करता है कि आधुनिक रोमा विवाहों में पारंपरिक अनुष्ठानों के साथ-साथ आधुनिक सौंदर्य-बोध को भी महत्व दिया जा रहा है। दुल्हन और दूल्हे के साथ खड़े वरिष्ठ परिजन पारिवारिक संरक्षण, मार्गदर्शन और आशीर्वाद का प्रतीक हैं। उनकी उपस्थिति यह

दर्शाती है कि विवाह केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं, बल्कि पीढ़ियों के अनुभव और समर्थन का परिणाम है।

किरवी की भूमिका और स्त्री-सहभागिता रोमा विवाह परंपरा में किरवी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। किरवी वह विवाहित स्त्री होती है, जो दुल्हन को विवाह के प्रत्येक चरण में मार्गदर्शन देती है। वह दुल्हन के लिए केवल एक अनुष्ठानिक पात्र नहीं, बल्कि भावनात्मक सहारा भी होती है। यद्यपि तस्वीर में किरवी की भूमिका प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देती, फिर भी दुल्हन के आसपास स्त्रियों की उपस्थिति इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि रोमा समाज में स्त्रियाँ विवाह संस्कार की आत्मा होती हैं। वे गीत, आशीर्वाद और भावनाओं के माध्यम से विवाह को पूर्णता प्रदान करती हैं। सामूहिक उत्सव और भावनात्मक वातावरण रोमा विवाहों की सबसे सशक्त विशेषता उनकी सामूहिकता है। विवाह स्थल पर बच्चों, महिलाओं और बुज़ुर्गों की उपस्थिति यह दर्शाती है कि यह अवसर पूरे समुदाय का होता है। हँसी, संगीत, बातचीत और कभी-कभी आँसू,सभी भावनाएँ एक साथ प्रकट होती हैं।

रोमा समुदाय में विवाह केवल पारिवारिक उत्सव नहीं, बल्कि सामाजिक दायित्व का भी अवसर होता है। विवाह समारोह में आमंत्रित प्रत्येक अतिथि से यह अपेक्षा की जाती है कि वह नवविवाहित दंपती को आर्थिक रूप से सहयोग प्रदान करे। रोमा परंपरा के अनुसार, विवाह में शामिल होने वाले मेहमानों द्वारा कम से कम 500 से 1000 डॉलर की राशि उपहार स्वरूप दी जाती है। इसे केवल उपहार नहीं, बल्कि एक स्थापित सामाजिक प्रथा के रूप में देखा जाता है।

लेखिका को भी विवाह में सम्मिलित होने से पूर्व रोमा समुदाय के सदस्यों द्वारा इस प्रथा की जानकारी दी गई थी। यह स्पष्ट किया गया था कि विवाह में आर्थिक योगदान देना समुदाय के प्रति सम्मान और सहभागिता का प्रतीक माना जाता है। इसी परंपरा का पालन करते हुए लेखिका ने भी विवाह अवसर पर निर्धारित राशि उपहार स्वरूप प्रदान की। इस अनुभव के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि रोमा समाज में विवाह केवल भावनात्मक और सांस्कृतिक आयोजन नहीं, बल्कि सामूहिक उत्तरदायित्व और पारस्परिक सहयोग की जीवंत अभिव्यक्ति भी है।

अध्याय - 5
रोमा समुदाय : भारतीय मूल की कला और संस्कृति की जीवंत परंपरा

रोमा समुदाय की सांस्कृतिक विरासत अत्यंत प्राचीन और समृद्ध है, जिसकी जड़ें उनके *बारो थान*—अर्थात भारत—से जुड़ी हुई हैं। ऐतिहासिक और भाषाई प्रमाणों से यह संकेत मिलता है कि रोमा लोगों के पूर्वज भारत के विभिन्न क्षेत्रों, विशेषतः उत्तर और मध्य भारत, से यूरोप की ओर गए थे। इनमें से अनेक *डोम* समुदाय से संबंधित थे, जिन्हें परंपरागत रूप से गायन, वादन और नृत्य जैसी कलाओं में निपुण माना जाता है। भारत से प्रस्थान करने से पूर्व ही यहाँ शास्त्रीय तथा लोक-संगीत की एक दीर्घ परंपरा विकसित हो चुकी थी, जिसकी झलक आज भी रोमा संस्कृति में देखी जा सकती है।

रोमा लोगों के संगीत और नृत्य को समझने से पूर्व उनके सामाजिक जीवन, पहनावे और सांस्कृतिक कलाओं का अध्ययन आवश्यक है। रोमा पुरुष सामान्यतः स्थानीय यूरोपीय समाज (*गाजो*)[7] की शैली के वस्त्र पहनते हैं, जबकि जिप्सी महिलाओं की पारंपरिक वेशभूषा विशिष्ट और सांस्कृतिक पहचान से भरपूर होती है। वे अपने पारंपरिक परिधान को न केवल पहनती हैं, बल्कि उसे अपनी पहचान का अभिन्न अंग भी मानती हैं।

जिप्सी स्त्रियों का पहनावा साधारण किंतु बहुपरतीय होता है। अंतर्वस्त्र के रूप में सादा स्लिप और सामान्य अंगिया पहनी जाती है, जिसके ऊपर ब्लाउज और कई परतों वाली स्कर्ट धारण की जाती है। पारंपरिक स्कर्ट में गहरी सिलवटें होती हैं और इसके निर्माण में लगभग नौ से दस गज कपड़े की आवश्यकता पड़ती है। यह स्कर्ट

[7] रोमा पुरुष यूरोपीय समाज की मुख्यधारा की पोशाक अपनाते हैं, न कि पारंपरिक रोमा वेशभूषा; वे सामान्यतः पैंट, शर्ट, कोट या जैकेट तथा टोपी आदि पहनते हैं।

भूमि तक लंबी होती है, क्योंकि सामाजिक मान्यताओं के अनुसार महिलाओं के टखनों [8]का दिखाई देना अनुचित माना जाता है। विवाहित स्त्रियाँ सार्वजनिक स्थलों पर बिना सिर ढके नहीं जातीं। इसके अतिरिक्त वे कमर में बँधा हुआ एक छोटा थैला भी पहनती हैं, जो उनके दैनिक जीवन का आवश्यक हिस्सा होता है। इस संपूर्ण वेश में जिप्सी स्त्रियाँ राजस्थान की बंजारा या गाड़िया लोहार स्त्रियों से अत्यंत साम्य रखती प्रतीत होती हैं। छोटे बच्चों को कभी-कभी नग्न अवस्था में भी देखा जा सकता है, जिसे सामाजिक रूप से अस्वाभाविक नहीं माना जाता।

भोजन के विषय में जिप्सी (रोमा) समुदाय सदैव विशेष सतर्कता बरतता आया है। यह सतर्कता केवल आहार-चयन तक सीमित नहीं है, बल्कि भोजन की तैयारी, शुद्धता और सामुदायिक मर्यादाओं से भी गहराई से जुड़ी हुई है। परंपरागत रूप से भोजन पकाने का दायित्व स्त्रियों के हाथों में रहा है, और यह परंपरा आज भी लगभग उसी रूप में जीवित है। रोमा समाज में स्त्रियाँ प्रतिदिन भोजन पकाने की अपेक्षा दो या तीन दिनों का भोजन एक साथ तैयार करती हैं। यह व्यवस्था उनके गतिशील जीवन, सामूहिक परिवार संरचना और व्यावहारिक सोच को दर्शाती है।

लेखिका को रोमानियाके विभिन्न क्षेत्रों में रोमा परिवारों के बीच रहने का अवसर प्राप्त हुआ। इस निकट संपर्क के दौरान यह स्पष्ट रूप से देखा गया कि आधुनिक परिवेश में रहने के बावजूद रोमा स्त्रियाँ भोजन बनाने की अपनी पारंपरिक पद्धतियों से जुड़ी हुई हैं। उनके भोजन में मांस की प्रधानता रहती है, किंतु सब्ज़ियों को पकाने के तरीकों में आज भी भारतीय परंपरा की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। मसालों का संतुलित प्रयोग, सब्ज़ियों को धीमी आँच पर पकाना और स्वाद में सादगी बनाए रखना—ये सभी तत्व भारतीय पाक-संस्कृति की स्मृति को जीवंत करते हैं।

यद्यपि रोमा समुदाय के खान-पान संबंधी नियम अपेक्षाकृत उदार हैं और बहुत कम खाद्य पदार्थ वर्जित माने जाते हैं, फिर भी कुछ परंपरागत निषेध आज भी मान्य हैं। सामान्यतः साँपों तथा कुछ उड़ने वाले पक्षियों का सेवन नहीं किया जाता। वे मूलतः

[8] पैर और पिंडली के जोड़ वाला भाग, यानी ankle

मांसाहारी होते हैं, किंतु जिस देश में निवास करते हैं, वहाँ की स्थानीय भोजन परंपराओं को अपनाकर अपने आहार में सम्मिलित कर लेते हैं। इस प्रकार उनका भोजन उनकी ऐतिहासिक जड़ों और वर्तमान जीवन-परिस्थितियों के बीच एक सेतु का कार्य करता है।

समय के साथ-साथ रोमा समुदाय की आवासीय जीवन-प्रणाली में भी उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। कभी तंबुओं और चलित गाड़ियों में रहने वाला यह समुदाय अब धीरे-धीरे स्थायी आवासों, विशेषतः आधुनिक अपार्टमेंटों, में निवास करने लगा है। यात्रा के लिए अब वे मोटर वाहनों का उपयोग करते हैं और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले रोमा लोग फर्नीचर, रेडियो, टेलीविजन जैसी आधुनिक सुविधाओं का सहज रूप से प्रयोग करते हैं।

आधुनिकता की लहर को अपनाते हुए भी रोमा समाज ने अपनी सांस्कृतिक पहचान को कभी पूरी तरह विलुप्त नहीं होने दिया। बदलते समय के साथ उन्होंने यूरोपीय जीवनशैली के अनेक तत्व स्वीकार किए, परंतु अपने पारंपरिक सामाजिक मूल्यों, खान-पान की आदतों और स्त्रियों की केंद्रीय भूमिका को आज भी सहेज कर रखा है। यही कारण है कि रोमा समाज का जीवन परंपरा और परिवर्तन के बीच संतुलन साधते हुए निरंतर आगे बढ़ता हुआ दिखाई देता है।

सबसे उल्लेखनीय तथ्य यह है कि सदियों के विस्थापन, भौगोलिक दूरियों और गहरे सामाजिक परिवर्तनों के बावजूद रोमा समुदाय ने अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े प्राचीन भारतीय लोक-संगीत और नृत्य की परंपरा को जीवित रखा है। यह उनकी सशक्त सांस्कृतिक चेतना, सामूहिक स्मृति और परंपरा-संरक्षण की असाधारण क्षमता का प्रमाण है।

मैसेडोनिया की राजधानी स्कोप्जे जैसे नगरों में आज भी रोमा बच्चों के लिए नियमित रूप से संगीत और नृत्य का प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि उनकी यह अमूल्य सांगीतिक धरोहर आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित रह सके। इसी प्रकार रोमानियामें भी रोमा समुदाय के बच्चों के लिए विद्यालयों और सांस्कृतिक केंद्रों के माध्यम से संगीत व नृत्य की शिक्षा दी जाती है। रोमा परिवार अपने बच्चों को कम

उम्र से ही गीत, वाद्य और पारंपरिक नृत्य सिखाते हैं, और बच्चे स्कूलों व सांस्कृतिक कार्यक्रमों में मंच पर प्रदर्शन करके अपनी कला का परिचय देते हैं।

इस प्रकार रोमा समुदाय शिक्षा और कला के माध्यम से न केवल अपनी सांस्कृतिक पहचान को सहेज रहा है, बल्कि उसे गर्व के साथ समाज के सामने प्रस्तुत भी कर रहा है।

एस. एस. शशि अपने अनुभवों का उल्लेख करते हुए बताते हैं कि स्कोप्जे स्थित एक संगीत केंद्र के भ्रमण के दौरान जो दृश्य उनके सामने आया, उसने उन्हें गहरे आश्चर्य और भावुकता से भर दिया। वहाँ अनेक रोमा बालक-बालिकाएँ एक साथ स्वर मिलाकर "झूठ बोले कौआ काटे" जैसे परिचित हिंदी गीत गा रहे थे। जिप्सी बच्चों के मुख से हिंदी गीत सुनना उनके लिए अत्यंत विस्मयकारी अनुभव था। यह क्षण मानो भारत की सांस्कृतिक स्मृतियों को यूरोप की धरती पर सजीव कर रहा हो।

जब उन्होंने बच्चों के नृत्य और अन्य कलात्मक गतिविधियों का अवलोकन किया, तो यह समानता और भी स्पष्ट हो गई। उनके गीतों की धुन, ताल की संरचना और भाव-भंगिमाएँ भारतीय लोक-संगीत और नृत्य परंपराओं से गहरी साम्यता रखती थीं, जो रोमा समुदाय की भारतीय सांस्कृतिक विरासत से जुड़ी ऐतिहासिक स्मृति को उजागर करती हैं।

युगोस्लाविया में रोमा संगीत संस्कृति पर टी. पी. वुकानोविच सहित अनेक विद्वानों ने गंभीर शोध कार्य किया है। मध्य युग से ही जिप्सी लोग दक्षिण-स्लाव देशों में निवास करते आ रहे हैं। वे नगरों और गाँवों—दोनों में रहते हैं तथा विभिन्न व्यवसायों, शिल्पों और कृषि कार्यों के माध्यम से अपना जीवनयापन करते हैं। समय के साथ अनेक जिप्सी स्थानीय समाज में घुल-मिल गए और सर्ब, अल्बानियाई, वलाच तथा तुर्क समुदायों में सम्मिलित हो गए। उन्होंने अपनी मातृभाषा छोड़कर उन समुदायों की भाषाएँ अपना लीं, फिर भी समाज की दृष्टि में वे जिप्सी ही बने रहे।

बाल्कन तथा पूर्वी यूरोप के देशों में रोमा समुदाय की उपस्थिति आज भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। उत्तर मैसेडोनिया में 2021–2022 की नवीनतम जनगणना के

अनुसार रोमा आबादी के आंकड़े लगभग 917 से 1,378 के बीच बताए गए हैं, जिसे कुल जनसंख्या का लगभग 5–6 प्रतिशत माना गया है।[9] इसी प्रकार रोमानियाकी 2021 की जनगणना में लगभग 5,69,477 रोमा निवासी को औपचारिक रूप से दर्ज किया गया, जो देश की कुल आबादी का लगभग 3.4 प्रतिशत है, हालांकि वास्तविक संख्या इससे कहीं अधिक रहने का अनुमान है।[10]

हंगरी में 2011 की जनगणना के अनुसार लगभग 3,15,583 रोमा थे, लेकिन विभिन्न अध्ययनों में यह संख्या 4,50,000 से 8,00,000 के बीच मानी जाती है।[11] इससे यह स्पष्ट होता है कि आधिकारिक आंकड़े वास्तविक जनसंख्या को पूरी तरह प्रतिबिंबित नहीं कर पाते।

मेसिडोनिया की राजधानी स्कोप्जे में भी रोमा समुदाय की उल्लेखनीय उपस्थिति है; 2021 के अनुसार वहाँ लगभग 18,498 रोमा निवासी थे, जो शहर की कुल जनसंख्या का लगभग 3.5 प्रतिशत है।[12]

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि बाल्कन और पूर्वी यूरोप के देशों में रोमा समुदाय आज भी सामाजिक, सांस्कृतिक और जनसांख्यिकीय दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण उपस्थिति बनाए हुए है, भले ही उनकी वास्तविक संख्या का सटीक आकलन अब भी एक जटिल चुनौती बना हुआ है।

रोमा संगीत संस्कृति अत्यंत प्राचीन, समृद्ध और बहुआयामी है। इसकी जटिलता केवल इसकी ऐतिहासिक उत्पत्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि बाल्कन समाज में निभाई जाने वाली इसकी सामाजिक और सांस्कृतिक भूमिका में भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। रोमा समुदाय लंबे समय से उत्कृष्ट गायक, वादक और संगीतकार

---

[9] *उत्तर मैसेडोनिया में रोमा आबादी का अनुमान लगभग 917–1,378; Romani people in Macedonia census data.*

[10] *रोमानिया2021 जनगणना में 569,477 रोमा दर्ज, वास्तविक संख्या अधिक होने का अनुमान।*

[11] *हंगरी में 2011 जनगणना के अनुसार 315,583 रोमा; विभिन्न अनुमानों में संख्या 450,000–800,000*

[12] *स्कोप्जे में लगभग 18,498 रोमा निवासी (2021)*

के रूप में प्रसिद्ध रहा है। अनेक विद्वान संगीत प्रतिभा को जिप्सी समाज की एक प्रमुख जातीय विशेषता मानते हैं और इसे भारत से उनके ऐतिहासिक पलायन की सांस्कृतिक विरासत से जोड़ते हैं।

कुछ अन्य विद्वानों का मत है कि रोमा लोग 'लूरी' नामक एक प्राचीन भारतीय जनजाति से संबंधित थे, जिन्हें फारसी शासक बहराम-गुर ने अपने दरबार में संगीतकारों के रूप में भारत से आमंत्रित किया था। यह धारणा रोमा संगीत परंपरा की गहराई, उसकी ऐतिहासिक निरंतरता और भारतीय सांस्कृतिक मूल से उसके संबंध को और अधिक सुदृढ़ करती है।

इस प्रकार रोमा समाज की कहानी केवल विस्थापन की नहीं, बल्कि स्मृतियों, सुरों और परंपराओं को सँजोकर रखने की कहानी है—एक ऐसी सांस्कृतिक यात्रा, जो भारत से निकलकर यूरोप की धरती तक आज भी अपनी पहचान बनाए हुए है।

मध्य युग के उत्तरार्ध और आधुनिक काल के आरंभ में हंगरी और रोमानियाजैसे देशों में जिप्सी संगीतकारों के बिना किसी भी उत्सव, समारोह या मनोरंजन की कल्पना नहीं की जा सकती थी। सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में उनकी उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती थी। वे वायलिन, ज़ुर्ला, टैम्बोरिन, ढोल, सिम्बालम, तुरही और अकॉर्डियन जैसे विविध वाद्य यंत्रों में निपुण थे और अपनी संगीत-कला से जनमानस को गहराई से प्रभावित करते थे।

उन्नीसवीं शताब्दी में सर्बिया में अनेक प्रसिद्ध जिप्सी संगीत मंडलियाँ सक्रिय थीं। वासा स्टैंकोविच जैसे विख्यात कलाकारों ने न केवल सर्बिया में, बल्कि यूरोप के अनेक नगरों में भी व्यापक ख्याति अर्जित की। वर्ष 1934 में उनकी मृत्यु के समय चालीस जिप्सी संगीतकार पारंपरिक लोक-पोशाक धारण कर, वाद्य यंत्रों के साथ गीत बजाते हुए उनके शव को कब्रिस्तान तक ले गए। यह दृश्य जिप्सी संगीत और संगीतकारों को प्राप्त सामाजिक सम्मान और प्रतिष्ठा का सशक्त प्रतीक था।

यद्यपि समय के साथ आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण जिप्सी समुदाय का सामाजिक दर्जा धीरे-धीरे घटता गया, फिर भी विवाह, सगाई

और अन्य पारंपरिक उत्सवों में जिप्सी संगीतकारों की भूमिका बनी रही और उन्हें आमंत्रित करना एक परंपरा के रूप में स्वीकार किया जाता रहा।

एक प्रसिद्ध घटना के अनुसार, लगभग 1915 में बेलग्रेड नगर में एक बैंक प्रबंधक जिप्सी संगीत से इतना अभिभूत हो गया कि उसने अपनी पूरी धन-संपत्ति संगीतकारों को दान कर दी। अगले ही दिन वही संगीतकार उस उपहार में प्राप्त भव्य बग्घी में नगर की सड़कों पर घूमते हुए दिखाई दिए। यह घटना जिप्सी संगीत की सम्मोहक शक्ति और उसके सामाजिक प्रभाव को उजागर करती है।

पूर्वकाल में दक्षिण-स्लाव देशों में अनेक रोमा परिवार अपने बच्चों को संगीत के पेशे के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित करते थे, क्योंकि इसे न केवल सम्मानजनक, बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी लाभकारी व्यवसाय माना जाता था। इस प्रकार संगीत रोमा समाज के लिए आजीविका, प्रतिष्ठा और सांस्कृतिक पहचान—तीनों का आधार रहा है।

कई शताब्दियों तक जिप्सी वादक और गायक समकालीन बाल्कन समाज में, विशेषकर यूगोस्लाविया में, अत्यंत सम्मान और प्रतिष्ठा का आनंद लेते रहे। उन्हें लोग ऐसे कलाकार मानते थे जिनमें उत्सव और आनंद का जादुई माहौल पैदा करने की क्षमता होती थी। सबसे प्रतिष्ठित सगाई और विवाह समारोह जिप्सी संगीतकारों के बिना पूरे नहीं माने जाते थे।

लेकिन समय के साथ-साथ आर्थिक बदलाव और मध्य यूरोप की आधुनिक संगीत संस्कृति के प्रसार ने लोगों का दृष्टिकोण बदल दिया। अब कुछ लोग उन्हें सच्चे भिखारी समझने लगे। यहाँ तक कि जब किसी सैन्य बैंड को मध्यवर्गीय लोगों के मनोरंजन के लिए बुलाया जाता था, तब भी वे अक्सर एक अच्छे जिप्सी ऑर्केस्ट्रा को बुलाते ताकि वह अपनी अनोखी शैली में गा-बजाकर सभा में माहौल बना सके। उत्साही नागरिक अपने आनंद और उत्साह में जिप्सी संगीतकारों के माथे पर नोट चिपका देते थे।

उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान सर्बियाई किसान समाज में वायलिन, ज़ुर्ला, ढोलक (तंबूरा).खड़ताल और नगाड़ा बजाना मुख्यतः जिप्सी (रोमा) लोगों का पेशा माना जाता था। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत और बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में जिप्सी संगीतकार अक्सर संगीत के साथ-साथ अन्य पेशे भी अपनाते थे। उदाहरण के लिए, व्रांस्का बान्या में वे भांग की खेती और रस्सी बनाने का काम भी करते थे, और यह प्रथा आज तक जारी है।

पुराने समय में दक्षिण स्लाव देशों में कई रोमा लोग अपने बच्चों को संगीतकार बनने के पेशे के लिए प्रशिक्षित करते थे। उस समय एक अच्छे संगीतकार के लिए संभावनाएँ अत्यंत उज्ज्वल मानी जाती थीं। रोमा समाज में संगीतकार बनना सबसे आकर्षक और प्रतिष्ठित पेशा माना जाता था। संगीतकार अपने जीवन को आनंद, मनचाहा भोजन-पान, हर्ष और उल्लास के साथ बिताते थे। इसके विपरीत, रोमा लोहार, घोड़े का व्यापारी, कुली, सड़क साफ़ करने वाला या नाई आदि का जीवन कहीं कम आकर्षक और कठिन था।

बाल्कन क्षेत्र के जिप्सियों द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले पूर्वी (ओरिएंटल) गीत और वे धुनें, जिन पर वे नृत्य करते थे, आज लगभग पूरी तरह लुप्त हो चुकी हैं। इसी प्रकार, दक्षिण स्लाव देशों में प्रचलित पुरानी तुर्की संगीत परंपरा के विशिष्ट और कभी अत्यंत लोकप्रिय वाद्य यंत्र भी धीरे-धीरे समाप्त हो गए हैं और आज केवल कभी-कभार ही देखने को मिलते हैं।

बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में बेलग्रेड में केवल एक तुर्की जिप्सी संगीतकार बचा था—आसान नाम का—जो सिम्बलम (cymbalum) पर पूर्वी प्रेम-गीत बजाया करता था। तुर्की संगीत विशेष रूप से मध्य सर्बिया में धीरे-धीरे लुप्त हो गया और अधिकांश जिप्सी संगीतकार इसे जीवित नहीं रख सके। इसे पतन से बचाने में केवल कुछ क्षेत्र सफल रहे—कोसोवो-मेतोहिया, आंशिक रूप से स्तारी व्लाह, आगे बोस्निया और हर्ज़ेगोविना, और मुख्यतः मैसेडोनिया। इन क्षेत्रों में यह द्वितीय विश्व युद्ध (1941–1945) तक अपनी दुर्लभ ताजगी बनाए रख सका और कभी-कभी आज भी सुनाई देता है।

मध्य यूरोपीय संगीत संस्कृति

मध्य यूरोप के हंगेरियन क्षेत्रों से जिप्सियों का दक्षिण स्लाव देशों—विशेषकर वॉयवोडिना—की ओर प्रवासन, और यूगोस्लाविया में हंगेरियन अल्पसंख्यकों तथा अन्य जातीय समूहों के बीच उनका निवास, एक विशिष्ट मध्य यूरोपीय संगीत संस्कृति के विकास का कारण बना। इसका मुख्य प्रतिनिधित्व हंगेरियन संगीत करता है।

वे वायलिन, वायोला, बास वायोला, क्लैरिनेट और सिम्बलम जैसे वाद्य यंत्र अपने साथ लाए। इसके अलावा, हंगेरियन लोकप्रिय धुनें और नृत्य भी उन्होंने अपने साथ फैलाए। हंगेरियन जिप्सी बैंड और व्यक्तिगत रूप से प्रसिद्ध संगीतकार पूरे दक्षिण स्लाव देशों में घूमते रहे, केवल वॉयवोडिना में ही नहीं, जहाँ उनका प्रभाव सबसे अधिक था। इस प्रकार, उन्होंने विशेष रूप से जिप्सियों के बीच पूर्वी (ओरिएंटल) संगीत संस्कृति को दबा दिया।

रोमानी संगीत संस्कृति

दक्षिण स्लाव देशों में जिप्सी समुदाय के अपने विशिष्ट गीत हैं, जो रोमानी भाषा में रचे और गाए जाते हैं। ये गीत उनकी लोक-काव्य परंपरा का अभिन्न अंग हैं तथा अलग-अलग कुलों और सामाजिक समूहों से संबद्ध होते हैं। सामान्यतः इनका गायन बाहरी श्रोताओं के समक्ष नहीं किया जाता, जब तक कि किसी विशेष अवसर पर ऐसा करने का आग्रह न हो। इन गीतों का गायन समुदाय के सभी सदस्य करते हैं—चाहे वे पेशेवर संगीतकार हों या नहीं।

यद्यपि इन गीतों की धुनों में बाल्कन क्षेत्र के सांगीतिक परिवेश की कुछ झलक मिलती है, फिर भी उनमें विशिष्ट जिप्सी तत्व निहित होते हैं, जिन्हें एक अलग जातीय पहचान और सांस्कृतिक संपदा के रूप में देखा जा सकता है। अधिकांशतः इन गीतों का उन रचनाओं से कोई संबंध नहीं होता जिन्हें जिप्सी संगीतकार सार्वजनिक मंचों पर प्रस्तुत करते हैं। ये गीत घरेलू परिवेश में सृजित, तात्कालिक और सहज अभिव्यक्तियाँ होते हैं, जो पेशेवर संगीत परंपरा से भिन्न हैं।

अन्य लोक-सांस्कृतिक रचनाओं की भाँति ये गीत भी प्रायः जिप्सी परिवार की सीमाओं के भीतर ही जीवित रहते हैं। इन गीतों और धुनों में पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना की स्पष्ट छाप दिखाई देती है, जैसा कि अधिकांश लोकसंगीत परंपराओं में देखा जाता है। इनसे किसी स्वतंत्र या विकसित संगीत परंपरा का निर्माण नहीं हुआ। बाल्कन क्षेत्र में—विशेषकर दक्षिण स्लाव देशों में—जिप्सी गायक और वादक अपनी आजीविका के लिए प्रचलित और लोकप्रिय संगीत की माँगों के अनुरूप कार्य करते रहे, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने अपने पारंपरिक गीतों की उपेक्षा की। फिर भी, युगोस्लाविया में जिप्सी संगीत संस्कृति की एक विशिष्ट धारा उस पारंपरिक जिप्सी संगीत में संरक्षित रही है, जिसे पीढ़ी दर पीढ़ी गाया और बजाया जाता रहा।

रोमानी संगीत क्या है?

संगीत रोमानी समुदाय के जीवन में केवल एक कला नहीं, बल्कि सदियों से चली आ रही एक जीवित परंपरा रहा है। पंद्रहवीं शताब्दी से उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्य यह सिद्ध करते हैं कि संगीत रोमा समाज के सबसे प्राचीन और प्रतिष्ठित पेशों में से एक रहा है। यही कारण है कि रोमानी जीवन में संगीत का स्थान मात्र आजीविका तक सीमित न होकर सांस्कृतिक स्मृति, सामूहिक पहचान और आत्म-अभिव्यक्ति का माध्यम बन गया है। गैर-रोमा समाज में तो स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि ‘संगीत’ और ‘रोमा’ शब्दों को प्रायः एक-दूसरे के पर्याय के रूप में देखा जाने लगा है। फिर भी यह तथ्य अक्सर भुला दिया जाता है कि संगीत छह सौ वर्षों से भी अधिक समय तक पेशेवर रोमा समुदाय के लिए सम्मानजनक जीवन-यापन का साधन रहा है। बदलते ऐतिहासिक परिदृश्यों, राजनीतिक उथल-पुथल और सामाजिक बहिष्कार के बावजूद रोमानी संगीत ने अपनी जीवंतता बनाए रखी है। आज के उत्तर-समाजवादी युग में, जहाँ सीमाएँ पहले से अधिक पारगम्य हो गई हैं, यह परंपरा नए संदर्भों में भी स्वयं को पुनःस्थापित कर रही है।

यद्यपि ‘जिप्सी’ और ‘संगीत’ को प्रायः एक साथ जोड़ा जाता है, रोमानी संगीत को गंभीर अकादमिक विमर्श और आलोचनात्मक अध्ययन अपेक्षाकृत बहुत देर से प्राप्त हुआ। ऐतिहासिक रूप से, इसके बारे में लिखने वाले अनेक विद्वानों ने प्रमाणों

से अधिक कल्पनाओं पर भरोसा किया है। इस संदर्भ में अतिशयोक्ति दो विपरीत छोरों तक जाती दिखाई देती है—एक ओर यह धारणा कि रोमा लोग केवल दूसरों के संगीत को आत्मसात करते हैं, मानो वे एक "स्पंज" हों और उनका स्वयं का कोई मौलिक संगीत अस्तित्व में ही न हो; और दूसरी ओर यह आदर्शीकृत दृष्टिकोण कि वे परंपरा के सबसे शुद्ध और अडिग संरक्षक हैं।

इन दोनों ध्रुवों के बीच रोमानी संगीत की वास्तविक स्थिति कहीं अधिक जटिल और बहुआयामी है। उदाहरणस्वरूप, *Dromano Suno 2* (Gypsy Dream, B92, सर्बिया, 2006) यह इंगित करता है कि रोमानी संगीतकार स्वयं को एक विरोधाभासी संसार में पाते हैं जहाँ उनका संगीत एक साथ परंपरा की सबसे गहरी स्मृतियों का भंडार भी माना जाता है और अनियंत्रित नवाचार का स्रोत भी।

स्लीवर्मैन बताती है, रोमानी संगीत के प्रति संदेह और आलोचना कोई नई बात नहीं है। बीसवीं शताब्दी के आरंभ में ही, 1910 में, सर्बियाई संगीत-विद्वान तिहोमिर जॉर्जेविच ने जिप्सी संगीतकारों पर यह आरोप लगाया था कि वे न तो अपने संगीत को संरक्षित कर सके और न ही सर्बियाई लोक-संगीत को अपनाते समय उसकी आत्मा को अक्षुण्ण रख पाए। उनके अनुसार, जब जिप्सी कलाकार सर्बियाई लोक-संगीत प्रस्तुत करते हैं, तो वे उसके मूल स्वरूप में हस्तक्षेप करते हैं—कभी आवश्यक तत्वों को बदलकर, कभी विवरणों को अपनी रुचि के अनुसार रूपांतरित करके, और कभी ऐसे अलंकरण जोड़कर जो आरंभ में आकर्षक प्रतीत होते हैं, किंतु उस परंपरा की अंतर्निहित संवेदना से मेल नहीं खाते। जॉर्जेविच ने इसी प्रवृत्ति को लोक-संगीत की "जिप्सी विशेषता" कहा।

कुछ नृसंगीतविदों (ethnomusicologists) का मत है कि ज़ुर्ना और तापन को तुर्कों के आगमन से पहले ही रोमा समुदाय द्वारा बाल्कन क्षेत्र में लाया गया था, हालाँकि इस विषय पर विद्वानों के बीच मतभेद बने हुए हैं (Dimitriev 2007)। फिर भी, इसमें कोई संदेह नहीं कि सैकड़ों वर्षों से ज़ुर्ना और तापन की जोड़ियाँ अनेक जातीय समुदायों द्वारा पेशेवर रूप से बजाई जाती रही हैं। इनमें दक्षिणी सर्बिया,

कोसोवो, मैसेडोनिया, ग्रीस का मैसेडोनियन प्रांत, बुल्गारिया का पीरिन क्षेत्र (दक्षिण-पश्चिम), तथा बाल्कन थ्रेस के कुछ भाग शामिल हैं।

बड़े सार्वजनिक आयोजनों जैसे मेलों और उत्सवों के अवसर पर ज़ुर्ना[13]-तापन[14] समूहों को नर्तकों द्वारा या पिकनिक मनाने वाले परिवारों द्वारा किराए पर बुलाया जाता था। इन वाद्य यंत्रों का संबंध कुश्ती प्रतियोगिताओं से भी रहा है, जो दक्षिणी बाल्कन के कई मुस्लिम समुदायों में प्रचलित हैं।

मुस्लिम मैसेडोनियन रोमा समुदाय में ज़ुर्ना और तापन का संगीत विभिन्न अनुष्ठानिक अवसरों पर अत्यंत आवश्यक माना जाता है। इनमें दुल्हन के बालों, हाथों और पैरों पर मेंहदी लगाने की रस्म, पुरुषों की खतना-रस्म, तथा मेमने की बलि से जुड़ा अनुष्ठान ज्यूरज्योवदेन (संत जॉर्ज दिवस) शामिल हैं (अध्याय 5; Dunin 1998)।

समकालीन समय में ज़ुर्ना–तापन समूह आधुनिक, एम्प्लीफाइड बैंडों के साथ सह-अस्तित्व में पाए जाते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि पारंपरिक नृत्य-संगीत प्रस्तुत करने में उनकी अनुष्ठानिक भूमिका आज भी बनी हुई है, और साथ ही उनका रोमा पहचान से गहरा प्रतीकात्मक संबंध भी कायम है (Blau, Keil, और Feld 2002; Silverman 1996a; Peycheva और Dimov 2002)।

न्यूयॉर्क जैसे महानगर में ज़ुर्ना और तापन की आवाज़ स्थायी रूप से कहीं सुनाई नहीं देती। वहाँ इनके कोई नियमित समूह नहीं हैं। फिर भी, इस चुप्पी के भीतर भी परंपरा पूरी तरह लुप्त नहीं हुई है—कनेक्टिकट के ब्रिजपोर्ट क्षेत्र में कुछ रोमा ज़ुर्ना वादक अब भी मौजूद हैं, और तापन बजाने वालों की संख्या तो उनसे कहीं अधिक है। यह बिखरा हुआ अस्तित्व उस इतिहास की गूँज है जिसमें यह संगीत कभी केंद्र में रहा, तो कभी किनारे धकेल दिया गया।

[13] ज़ुर्ना एक तेज़ आवाज़ वाला फूँक वाद्य है, जिसे खुले स्थानों में बजाया जाता है। यह मुख्य धुन बजाती है और शादियों, नृत्यों व अनुष्ठानों में उपयोग होती है।

[14] एक बड़ा दो-मुँह वाला ढोल है, जो ताल और गति देता है। इसे कंधे पर लटकाकर बजाया जाता है।

1980 के दशक में बुल्गारिया में ज़ुर्ना की ध्वनि को जानबूझकर खामोश कर दिया गया। रोमा समुदाय और मुस्लिम संगठनों से इसके जुड़ाव के कारण इस वाद्य पर प्रतिबंध लगा दिया गया, और उसके साथ ही सैकड़ों वर्षों पुरानी एक जीवित परंपरा को सार्वजनिक जीवन से बाहर कर दिया गया। समाजवादी राज्य की इस नीति ने केवल संगीत को ही नहीं, बल्कि संगीतकारों की पहचान और आजीविका को भी प्रभावित किया। फिर भी, यह चुप्पी पूरी तरह स्वीकार नहीं की गई। रोमा समुदाय ने अपने-अपने तरीकों से प्रतिरोध किया स्मृति के भीतर, निजी आयोजनों में, और पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरण के माध्यम से।

1989 के बाद, जब राजनीतिक परिदृश्य बदला, तब पीरिन क्षेत्र में ज़ुर्ना और तापन की परंपरा ने धीरे-धीरे फिर से साँस लेना शुरू किया। जो ध्वनियाँ कभी प्रतिबंधित थीं, वे एक बार फिर शादियों, मेलों और सामूहिक उत्सवों में गूँजने लगीं। वादक अब केवल एक समुदाय तक सीमित नहीं रहे; वे विभिन्न जातीय समूहों के लिए बजाने लगे। हालाँकि यह पुनरुत्थान पूरी तरह सुरक्षित नहीं था—कई संगीतकारों को अस्थायी काम और कम पारिश्रमिक से संतोष करना पड़ा फिर भी परंपरा ने स्वयं को पुनः स्थापित कर लिया।

इसी पुनर्जीवन की कथा में पीरिन क्षेत्र के ज़ुर्ना वादक सामिर कुर्तोव का नाम विशेष रूप से उभरता है। 1971 में पेट्रिच क्षेत्र के कराकिरोवो गाँव में जन्मे कुर्तोव आज केवल एक वादक नहीं, बल्कि इस परंपरा की जीवित प्रतीक बन चुके हैं। उनकी ज़ुर्ना की आवाज़ सीमाओं को पार करती है वे ग्रीस, सर्बिया, मैसेडोनिया और तुर्की में शादियों और उत्सवों में आमंत्रित किए जाते हैं। उनकी प्रस्तुति अक्सर एक शांत, लगभग ध्यानमग्न धुन से शुरू होती है, जो धीरे-धीरे तीव्र 2/4 ताल वाले नृत्य में बदल जाती है, और श्रोताओं को अपनी लय में बाँध लेती है।

उत्तर-समाजवादी बुल्गारिया और मैसेडोनिया में ज़ुर्ना और तापन की भूमिका केवल सांस्कृतिक नहीं रही। इन वाद्य यंत्रों की तीखी और दूर तक पहुँचने वाली ध्वनि को राजनीतिक जीवन ने भी अपनाया—परेडों और रैलियों में, जहाँ ये घोषणाओं की

तरह गूँजती हैं। इस प्रकार, जो संगीत कभी दमन का शिकार था, वही बाद में सार्वजनिक और राजनीतिक स्थानों में अपनी मौजूदगी दर्ज कराने लगा।

ज़ुर्ना और तापन का वादन, अन्य पारंपरिक वाद्य प्रस्तुतियों की तरह, पुरुषों तक ही सीमित रहा है। यह परंपरा औपचारिक संस्थानों के माध्यम से नहीं, बल्कि रिश्तेदारी और पारिवारिक संबंधों की निरंतर शृंखला के ज़रिए आगे बढ़ती है। कुछ समुदायों में तो स्थिति यह है कि ज़ुर्ना बजाने वाले सभी वादक एक ही रोमा परिवार से आते हैं—मानो संगीत वहाँ विरासत की तरह जन्म के साथ ही सौंप दिया जाता हो।

इस परंपरा में शिक्षा का स्वरूप भी अलग है। यहाँ न तो लिखित संकेतन है, न ही कोई व्यवस्थित पाठ्यक्रम। सीखना बुज़ुर्गों से युवाओं तक, सुनते और देखते हुए होता है। राग-संग्रह और तकनीक स्मृति में बसती है, अभ्यास में ढलती है, और समय के साथ शरीर का हिस्सा बन जाती है। यही मौखिक और अनुभवजन्य ज्ञान-प्रणाली पूरे बाल्कन क्षेत्र की रोमा संगीत परंपरा की पहचान है।

शिक्षण की प्रक्रिया स्वयं में एक संवाद होती है। ज़ुर्ना सीखने वाला शिष्य आरंभ में लगातार स्वर एक स्थिर ध्वनि बजाता है, जबकि गुरु उसके ऊपर धुन रचता है। यह स्थिरता और गति का मेल धीरे-धीरे शिष्य को संगीत की संरचना से परिचित कराता है। जब शिष्य दक्ष हो जाता है, तो भूमिकाएँ बदल सकती हैं गुरु पृष्ठभूमि में चला जाता है और शिष्य आगे आकर धुन सँभाल लेता है। कभी-कभी दोनों ज़ुर्ना एक-दूसरे को उत्तर देते हुए, बारी-बारी से बजते हैं, मानो पीढ़ियों के बीच चलता हुआ एक जीवित संवाद हो।

जब ज़ुर्ना की ध्वनि गूँजती है, तो वह केवल एक साथ बजाई गई धुन नहीं होती। ज़ुर्ना वादक मुक्त ताल में तात्कालिक रचनाएँ भी प्रस्तुत करते हैं, जिन्हें *ताक़सीम* कहा जाता है, और इसके साथ-साथ तालबद्ध इम्प्रोवाइज़ेशन भी बजाते हैं। उनकी पहचान तीव्र और चमकदार स्वर, तेज़ उँगली-चालन, ट्रिल्स, मॉर्डेंट्स और सूक्ष्म सजावटों से बनती है। कुशल उस्ताद ज़ुर्ना की ध्वनि-क्षमताओं का रचनात्मक उपयोग करते हुए ऐसी प्रस्तुतियाँ देते हैं, जो लयात्मक होने के साथ-साथ बनावट और गहराई के स्तर पर भी प्रभावशाली होती हैं (Peycheva और Dimov 2002; Rice 1982)।

रोमा समुदाय की संगीत यात्रा केवल ज़ुर्ना–तापन तक सीमित नहीं रही। समय के साथ वे ब्रास बैंडों की दुनिया में भी सक्रिय रूप से शामिल हुए—ग्रामीण और शहरी, दोनों परिवेशों में। मध्य यूरोप से ब्रास वाद्य अपनाने के बाद, लगभग सौ वर्ष पहले रोमा संगीतकार, विशेष रूप से सर्बियाई किसान ब्रास बैंडों में, प्रमुख रूप से दिखाई देने लगे। मैसेडोनिया और दक्षिणी सर्बिया में रोमा न केवल पेशेवर ब्रास बैंडों में बजाते हैं, बल्कि उन्होंने अपना विशिष्ट संगीत-संग्रह (रेपर्टरी) भी विकसित किया।

सर्बिया के प्रसिद्ध त्योहार जैसे गुचा (GuČa) ने इस परंपरा को व्यापक दृश्यता दी, जहाँ प्रतियोगिताओं, पदानुक्रम और पुरस्कारों के माध्यम से ब्रास बैंडों को पहचान मिली। इसी परंपरा से बोबान मार्कोविच जैसे बैंड उभरे, जो आगे चलकर सर्बियाई राष्ट्रीय पहचान के प्रतीक बन गए और विश्व स्तर पर लोकप्रिय हुए।

संगीत के समानांतर, पूरे क्षेत्र में रोमा समुदाय का एक और अनोखा इतिहास भी मौजूद रहा—भालू-नचाने वालों का। सोलहवीं शताब्दी से रोमा परिवार यात्रा करते हुए भालुओं को टैम्बोरिन और आवाज़ की संगत पर नचाना सिखाते थे। उन्नीसवीं शताब्दी तक सर्बिया, बोस्निया और उत्तरी बुल्गारिया इसके प्रमुख केंद्र बन गए। ये कलाकार मेलों और राजदरबारों में मनोरंजन प्रस्तुत करते थे। यद्यपि भालू-प्रशिक्षण को अवैध माना जाता था, फिर भी इसे एक सहन की जाने वाली आजीविका के रूप में स्वीकार किया गया। लोक-विश्वासों में भालुओं को उपचारक शक्ति से युक्त माना जाता था और यह विश्वास था कि वे रोगों को दूर कर सकते हैं। नृत्य के दौरान भालू को पिछले पैरों पर खड़ा किया जाता और उसके चारों ओर टैम्बोरिन बजाई जाती, ताकि दर्शक दान दें। उन्नीसवीं शताब्दी से रोमा बंदर-नचाने वाले भी आम हो गए।

लेकिन यह सांस्कृतिक यात्रा हमेशा सहज नहीं रही। बुल्गारिया में तीन-तार वाले, लंबवत पकड़े जाने वाले वाद्य—जैसे गुडुल्का (जो मैसेडोनिया में केमेने परिवार का हिस्सा है)—पर प्रतिबंध लगा दिया गया। इसके परिणामस्वरूप रोमा संगीतकारों ने अन्य वाद्य यंत्र अपनाए और आजीविका के नए साधन खोजे। कई लोग पशु-प्रशिक्षक के रूप में भी कार्य करने लगे। इस प्रकार, बदलती राजनीतिक और

सामाजिक परिस्थितियों के बीच रोमा समुदाय ने अपनी सांस्कृतिक पहचान को नए रूपों में ढालते हुए जीवित रखा।

बाल्कन क्षेत्र के संगीत परिदृश्य में सर्बियाई रोमा की भूमिका केवल सहभागिता तक सीमित नहीं रही, बल्कि उन्होंने विभिन्न संगीत शैलियों के बीच सेतु का काम किया है। गाँव का लोक संगीत, शहरी लोक परंपराएँ, लोकप्रिय संगीत और नव-रचित लोक संगीत—इन सभी के बीच आपसी संपर्क और आवाजाही को सशक्त करने में सर्बियाई रोमा संगीतकारों का योगदान निर्णायक रहा है (1991; 2002; 2007)। इसी तरह मैसेडोनिया और बुल्गारिया में भी रोमा संगीतकारों ने शहरी समूहों के भीतर विविध और मिश्रित (eclectic) संगीत-संग्रह विकसित किए, जो समय के साथ समकालीन शादी-बैंडों के रूप में उभरे।

हंगेरियन संगीत सामग्री के आधार पर कोवाल्चिक (Kovácsik) का तर्क है कि रोमा संगीत को उसकी तात्कालिक रचनात्मकता—इम्प्रोवाइज़ेशन—और नए प्रभावों को तुरंत अपनाने की प्रवृत्ति के कारण क्षेत्रीय लोक संगीत से अलग पहचाना जा सकता है, विशेष रूप से तब जब वह व्यावसायिक लोकप्रिय शैलियों से प्रभावित होता है (1987)। कोसोवो की सामग्री का विश्लेषण करते हुए पेट्टन (Pettan) यह दर्शाते हैं कि प्रदर्शन के दौरान किस प्रकार परिवर्तन किए जाते हैं और उनमें विशेष रूप से रोमा तत्व कैसे जोड़े जाते हैं (1992)। इसी क्रम में, केर्तेस और विल्किंसन (Kertész-Wilkinson) ने हंगेरियन संगीत परंपराओं के चयनात्मक अध्ययन के माध्यम से यह दिखाया कि प्रदर्शन में किए गए परिवर्तन रोमा सौंदर्यबोध के अनुरूप कैसे ढाले जाते हैं (1992)।

रासमुसेन रोमा संगीतकारों के लोकप्रिय संगीत के प्रति खुलेपन का विश्लेषण करते हैं (1991), जबकि दिमोव यह टिप्पणी करते हैं कि जिप्सी संगीतकारों की उपस्थिति बाल्कन संगीत की बहुलयात्मक प्रकृति का "सबसे स्पष्ट उदाहरण" है, जो अनुवाद और एकीकरण की सतत प्रक्रिया को दर्शाती है (1995:14)। पेइचेवा ने जिप्सी संगीतकारों में पाठ और शैली के "बहुभाषावाद" पर भी विस्तार से चर्चा की है

(1995)। साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि हाल के वर्षों में बाल्कन के अन्य जातीय समूह भी नई और विविध संगीत शैलियों को तेजी से अपना रहे हैं।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि पेशेवर बाल्कन रोमा संगीतकार नियमित रूप से अनेक जातीय समुदायों के संरक्षकों की सेवा करते हैं। इसी कारण उनका संगीत-संग्रह व्यापक और बहुरंगी होता है। यद्यपि आर्थिक संरक्षक-ग्राहक संबंध वह ढाँचा प्रदान करता है, जिसके भीतर रोमा संगीतकार प्रदर्शन करते हैं, फिर भी सदियों से सेवाओं के इस आदान-प्रदान के पीछे वास्तविक प्रेरक शक्ति रचनात्मकता ही रही है। बाल्कन संगीत में नवाचार के प्रमुख स्रोतों में रोमा समुदाय लगातार शामिल रहा है (Pettan 1992; Peycheva 1999)।

यह नवोन्मेष केवल आर्थिक लाभ तक सीमित नहीं है। यद्यपि नए संगीत को संरक्षकों तक पहुँचाने की प्रेरणा इसमें शामिल होती है, फिर भी संगीतकार नवाचार को उसकी कलात्मक गुणवत्ता के लिए भी महत्व देते हैं। वे एक-दूसरे को ध्यान से सुनते और परखते हैं,यह पहचानते हुए कि तकनीक, धुन, हार्मोनी, इम्प्रोवाइज़ेशन, शैली, पाठ और रूप में वास्तव में नया और मूल्यवान क्या है। फिर भी, केवल नवीनता ही प्रशंसा अर्जित करने के लिए पर्याप्त नहीं होती; उसके साथ उत्कृष्ट तकनीकी दक्षता और गहरी भावनात्मक अभिव्यक्ति भी आवश्यक होती है।

नवाचार अनेक दिशाओं से आता है,कभी स्थानीय शैलियों की ओर देखते हुए, जैसे पारंपरिक वाद्य, लोक या पॉप संगीत, या अफ्रीकी-अमेरिकी रैप और इलेक्ट्रॉनिक संगीत; कभी क्षेत्रीय सीमाओं के पार झाँकते हुए, जैसे अल्बानियाई, सर्बियाई या अन्य बाल्कन शैलियाँ; और कभी दूरस्थ रोमा संगीत परंपराओं की ओर, जैसे स्पेनिश या भारतीय संगीत। 1990 के दशक की शुरुआत में जिप्सी किंग्स की गिटार शैली मुख्यतः रूंबा और फ्लेमेंको को अपनाया गया, जब इस समूह ने अपना पहला पूर्वी यूरोपीय दौरा किया। इसी दौर में मैसेडोनिया और बुल्गारिया में रोमा भाषा में रैप का प्रयोग शुरू हुआ, जो आज एक उभरती हुई और सशक्त शैली बन चुका है। जर्मनी में रहने वाले गायक शेवचेत (Ševčet) ने "रोमा रेगेएटन हिप-हॉप" नामक

शैली विकसित की, जिसमें हिप-हॉप और रोमा तत्वों को उनके "जियो स्टाइल" शो में कुशलता से एक साथ पिरोया गया है।

नवाचार को केवल नवीनता के उत्पादन के रूप में समझना अपर्याप्त होगा। संगीत में नवाचार अक्सर स्मृति के साथ एक सक्रिय संवाद होता है,पुराने संगीत-संग्रहों को पुनः जीवित करने और उन्हें नए संदर्भों में अर्थ देने की प्रक्रिया। इस दृष्टि से नवाचार अतीत से विच्छेद नहीं, बल्कि उसके साथ निरंतर बातचीत है। बुल्गारिया में इब्रो लोलेव और आंज़ेलो माल्कोव का कार्य इसी प्रकार की सृजनात्मक स्मृति का उदाहरण प्रस्तुत करता है। उन्होंने 1950 के दशक में रिकॉर्ड किए गए उन गीतों को पुनः सामने लाया, जिन्हें यशार माल्कोव ने संकलित या रचा था। यशार माल्कोव, अपने समय के एक अत्यंत उत्पादक संगीत संयोजक, दर्जनों रचनाओं के माध्यम से पहले ही एक सघन संगीतात्मक भाषा गढ़ चुके थे (Peycheva 1999)।

2005 में प्रकाशित *Romane Merakli Roma Beats* केवल एक श्रद्धांजलि-एल्बम नहीं है; यह अतीत और वर्तमान के बीच एक मध्यस्थ स्थल की तरह कार्य करता है। इसके कुछ गीत 1950 के दशक की रिकॉर्डिंग से सीधे लिए गए हैं, कुछ में क्यूचेक (ČoČek) शैली की संरचनाएँ उभरती हैं, और अन्य गीत उधार लिए गए या नए सिरे से रचे गए हैं। यदि इन्हें केवल "कवर" या "रीमेक" कहा जाए, तो यह इस प्रक्रिया की जटिलता को कम करके देखना होगा। विशेष रूप से शादी-संगीत के संदर्भ में रोमा संगीतकार मौजूदा तत्वों को पुनर्संयोजित करते हुए नई शैलियों का सृजन करते हैं,जहाँ पुनरावृत्ति स्वयं नवाचार का माध्यम बन जाती है।

माल्कोव जिप्सी संगीत को एक सूत्रबद्ध तर्क के रूप में प्रस्तुत करते हैं:

I + V = E यहाँ इम्प्रोवाइज़ेशन (I) और तकनीकी दक्षता (V) को भावना (E) की उत्पत्ति का आधार माना गया है। यह सूत्र संगीत को एक कारण–परिणाम संबंध में बाँधता है, मानो भावना किसी गणनात्मक प्रक्रिया का परिणाम हो। यद्यपि यह दृष्टिकोण विश्लेषण के लिए उपयोगी है, फिर भी यह संगीत के अनुभवजन्य और देहगत (embodied) आयाम को पूरी तरह समेट नहीं पाता। इसके विपरीत, एक वैकल्पिक समीकरण की कल्पना की जा सकती है:

V = I + E इस दृष्टि से तकनीकी दक्षता कोई स्वतंत्र या पूर्व-स्थित गुण नहीं, बल्कि इम्प्रोवाइज़ेशन और भावना के पारस्परिक संबंध से उत्पन्न होती है। यहाँ वर्चुओसिटी प्रदर्शन की शुद्धता नहीं, बल्कि संवेदनशील प्रतिक्रिया और रचनात्मक जोखिम का परिणाम है।

यह भी स्पष्ट है कि माल्कोव का सूत्र न तो सभी रोमा संगीत पर लागू होता है और न ही केवल रोमा संगीत तक सीमित है। उदाहरणतः, अमेरिकी काल्डरैश (Kalderash) रोमा संगीत में इम्प्रोवाइज़ेशन अपेक्षाकृत सीमित भूमिका निभाता है,हालाँकि यह फिर भी गैर-रोमा जैज़ की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके विपरीत, बाल्कन रोमा वाद्य संगीत में इम्प्रोवाइज़ेशन लगभग एक पवित्र स्थान ग्रहण कर लेता है। यह बुल्गारियाई शादी-संगीत का केंद्रीय सिद्धांत है,कोई सजावटी तत्व नहीं, बल्कि संरचना का मूल।

यहाँ इम्प्रोवाइज़ेशन को केवल अलंकरण के रूप में समझना एक बुनियादी भ्रांति होगी। रोमा वाद्य कलाकारों की परंपरा में यह एक सचेत, विमर्शात्मक और नैतिक अभ्यास है,एक ऐसा क्षण जहाँ कलाकार परंपरा, श्रोता और स्वयं अपने साथ संवाद करता है। गायकों और वाद्य कलाकारों दोनों के लिए, इम्प्रोवाइज़ेशन तकनीकी दक्षता से भी ऊपर स्थित हो सकता है, क्योंकि यह केवल कौशल का प्रदर्शन नहीं, बल्कि संगीतात्मक अर्थ के निर्माण की प्रक्रिया है।

इस प्रकार, रोमा संगीत में नवाचार न तो पूरी तरह आर्थिक प्रेरणा से संचालित है, न ही केवल सौंदर्य की खोज से। यह एक गतिशील प्रक्रिया है, जिसमें स्मृति, भावना, तकनीक और सामाजिक संदर्भ एक-दूसरे में घुलते रहते हैं—और संगीत, एक स्थिर वस्तु नहीं, बल्कि सतत बनते रहने वाला अभ्यास बन जाता है।

रोमा संगीत और संगीत-नृविज्ञान के सिद्धांत

संगीत-नृविज्ञान में संगीत को केवल ध्वनि-संरचना (sound structure) के रूप में नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक अभ्यास (cultural practice) के रूप में समझा जाता है,ऐसा अभ्यास जो सामाजिक संबंधों, स्मृति, पहचान और सत्ता-संरचनाओं से

गहराई से जुड़ा होता है। बाल्कन रोमा संगीत परंपराएँ इस दृष्टिकोण का एक अत्यंत स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

म्यूज़िक ऐज़ कल्चर (Music as Culture) - एलन मेरियम (Alan Merriam) के प्रसिद्ध त्रिस्तरीय मॉडल,संकल्पनाएँ (concepts) ⟶ व्यवहार (behavior) ⟶ ध्वनि (sound)—के अनुसार, संगीत को सामाजिक अर्थों के बिना नहीं समझा जा सकता। रोमा संगीत में यह मॉडल स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इम्प्रोवाइज़ेशन केवल एक तकनीकी कौशल नहीं है, बल्कि एक सांस्कृतिक मूल्य है,जो स्वतंत्रता, रचनात्मकता और सामाजिक अनुकूलनशीलता को दर्शाता है। इस प्रकार, ध्वनि-स्तर पर जो विविधता सुनाई देती है, वह व्यवहार और संकल्पनात्मक स्तर पर मौजूद रोमा सौंदर्यबोध का परिणाम है (Merriam 1964)।

परफॉर्मेंस थ्योरी — संगीत एक घटना के रूप में

संगीत-नृविज्ञान में परफॉर्मेंस थ्योरी (Performance Theory) संगीत को एक घटना (event) मानती है, न कि स्थिर पाठ (fixed text)। बाल्कन रोमा संगीत—विशेषकर शादी-संगीत—में रचना और प्रस्तुति के बीच कोई कठोर सीमा नहीं है। इम्प्रोवाइज़ेशन यहाँ री-प्रोडक्शन नहीं, बल्कि री-क्रिएशन है। प्रत्येक प्रदर्शन सामाजिक संदर्भ, दर्शकों की प्रतिक्रिया और अवसर की प्रकृति के अनुसार नया रूप लेता है (Schechner 1985; Nettl 2005)।

मौखिक परंपरा और अवतरण (Orality and Transmission)

रोमा संगीत का ज्ञान मुख्यतः मौखिक और अनुभवजन्य माध्यमों से संचरित होता है। लिखित संकेतन की अनुपस्थिति इसे "अधूरा" नहीं बनाती; बल्कि यह स्मृति, श्रवण और शारीरिक अभ्यास पर आधारित ज्ञान-प्रणाली को दर्शाती है। ब्रूनो नेट्ल (Bruno Nettl) के अनुसार, ऐसी परंपराओं में इम्प्रोवाइज़ेशन ही संरचना (structure) का कार्य करती है—यही सिद्धांत रोमा वाद्य संगीत में लागू होता है (Nettl 1983; 2005)।

इम्प्रोवाइज़ेशन[15] ऐज़ सोशल एक्शन

संगीत-नृविज्ञान में इम्प्रोवाइज़ेशन को अब केवल सौंदर्यात्मक अभ्यास नहीं, बल्कि सामाजिक क्रिया (social action) माना जाता है। रोमा संगीतकार संरक्षकों (patrons), श्रोताओं और अन्य संगीतकारों के साथ निरंतर संवाद में रहते हैं। यह संवाद सत्ता, पहचान और पेशेवर प्रतिष्ठा से जुड़ा होता है। इस दृष्टि से इम्प्रोवाइज़ेशन एक संवादात्मक अभ्यास (dialogic practice) है, जो सामाजिक संबंधों को सक्रिय रूप से गढ़ता है (Pettan 1992; Rice 1994)।

हाइब्रिडिटी और ट्रांसकल्चरलिटी

रोमा संगीत में नवाचार अक्सर विभिन्न शैलियों के मेल से उत्पन्न होता है—स्थानीय, क्षेत्रीय और वैश्विक प्रभावों का संयोजन। संगीत-नृविज्ञान में इसे हाइब्रिडिटी (hybridity) या ट्रांसकल्चरल फ्लो के रूप में समझा जाता है। ब्रास बैंड, रैप, फ्लेमेंको, रेगेएटन या इलेक्ट्रॉनिक तत्वों का समावेश यह दर्शाता है कि रोमा संगीत एक बंद परंपरा नहीं, बल्कि सतत गतिशील प्रणाली है (Stokes 1994; Peycheva 1999)।

संगीत, पहचान और प्रतिनिधित्व

रोमा संगीत पहचान के निर्माण और पुनर्निर्माण का एक प्रमुख माध्यम है। यह केवल "रोमा पहचान" को व्यक्त नहीं करता, बल्कि विभिन्न जातीय और राष्ट्रीय संदर्भों में स्वयं को अनुकूलित करता है। संगीत-नृविज्ञान इस प्रक्रिया को पहचान के परफॉर्मेटिव रूप में देखता है,जहाँ संगीत पहचान को दर्शाता ही नहीं, बल्कि उसे उत्पन्न भी करता है (Rasmussen 1991; Dimov 1995)।

[15] संगीत-नृविज्ञान में इम्प्रोवाइज़ेशन को रचना और प्रस्तुति के बीच की सीमा के टूटने के रूप में देखा जाता है। यह वह स्थिति है जहाँ कलाकार लिखित पाठ या तय संरचना से बँधा नहीं होता, बल्कि स्मृति, शरीर, सामाजिक संदर्भ और भावनात्मक स्थिति के आधार पर उसी क्षण संगीत या नृत्य को आकार देता है। यह "अव्यवस्था" नहीं, बल्कि अत्यंत अनुशासित स्वतंत्रता है।

रोमा (Roma) समुदाय के उद्गम और प्रवासन को समझने के लिए इतिहास, भाषाविज्ञान और संगीत-नृविज्ञान—तीनों क्षेत्रों का संयुक्त अध्ययन आवश्यक है। भाषायी और सांस्कृतिक प्रमाणों के आधार पर अधिकांश विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि रोमा समुदाय की जड़ें उत्तर-पश्चिम भारत में स्थित हैं। लगभग 9वीं से 11वीं शताब्दी के बीच, विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारणों से ये समूह भारत से बाहर निकले और ईरान, आर्मेनिया, अनातोलिया तथा बाल्कन होते हुए यूरोप के विभिन्न भागों में फैल गए। इस प्रवासन का ऐतिहासिक मानचित्र केवल भौगोलिक यात्रा का लेखा-जोखा नहीं है, बल्कि सांस्कृतिक रूपांतरण और स्मृति-परंपरा का भी मानचित्र है।

इसी ऐतिहासिक प्रवाह के आलोक में जब उत्तर भारत के कालबेलिया समुदाय को देखा जाता है, तो वे एक ऐसे "स्थिर बिंदु" के रूप में सामने आते हैं, जो प्रवासन से पहले की सांस्कृतिक संरचनाओं को आज भी जीवित रखे हुए हैं। जहाँ रोमा समुदाय यूरोप में जाकर नई सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप ढल गया, वहीं कालबेलिया समुदाय भारत में रहकर उसी सांस्कृतिक तर्क घुमंतूपन, प्रदर्शन आधारित जीविका और मौखिक परंपरा—को आगे बढ़ाता रहा। इस दृष्टि से कालबेलिया को रोमा प्रवासन के ऐतिहासिक मानचित्र का "पूर्व-प्रवासी सांस्कृतिक साक्ष्य" कहा जा सकता है।

हालाँकि, इस संबंध को समझने में औपनिवेशिक नृविज्ञान (colonial ethnography) ने लंबे समय तक बाधा उत्पन्न की। औपनिवेशिक विद्वानों ने रोमा और भारतीय घुमंतू समुदायों को अक्सर "आदिम," "असभ्य," या "अपरिवर्तनीय" के रूप में चित्रित किया। इस दृष्टिकोण में संस्कृति को एक स्थिर वस्तु माना गया, न कि एक गतिशील और रचनात्मक प्रक्रिया। रोमा को यूरोप में "outsider" और कालबेलिया को भारत में "exotic performer" के रूप में देखने की प्रवृत्ति इसी औपनिवेशिक ज्ञान-प्रणाली का परिणाम थी।

औपनिवेशिक नृविज्ञान की सबसे बड़ी सीमा यह थी कि उसने इन समुदायों की एजेंसी (agency) अर्थात् स्वयं को परिभाषित करने और नवाचार करने की क्षमता

को नज़रअंदाज़ किया। संगीत और नृत्य को केवल "लोक-मनोरंजन" के रूप में दर्ज किया गया, जबकि उनके भीतर निहित ऐतिहासिक स्मृति, सामाजिक आलोचना और सौंदर्य-दर्शन को गंभीरता से नहीं लिया गया। उदाहरण के लिए, कालबेलिया नृत्य को लंबे समय तक केवल साँपों की नकल मानकर समझा गया, जबकि वह देह, लय और स्थान के माध्यम से एक गहन सांस्कृतिक विमर्श प्रस्तुत करता है—ठीक वैसे ही जैसे रोमा संगीत में इम्प्रोवाइज़ेशन केवल सजावट नहीं, बल्कि पहचान की पुनर्रचना का माध्यम है।

समकालीन संगीत-नृविज्ञान औपनिवेशिक दृष्टि से आगे बढ़ते हुए संस्कृति को एक प्रवाहमान नेटवर्क के रूप में देखता है। इस दृष्टिकोण में रोमा प्रवासन का मानचित्र केवल एक दिशा में हुई गति नहीं है, बल्कि एक बहु-दिशात्मक सांस्कृतिक संवाद है,जहाँ कुछ तत्व बदले, कुछ संरक्षित रहे, और कुछ नए रूपों में पुनः प्रकट हुए। कालबेलिया समुदाय इसी संरक्षित निरंतरता का उदाहरण है, जबकि रोमा समुदाय परिवर्तनशील अनुकूलन का।

इस प्रकार, कालबेलिया और रोमा के बीच संबंध को न तो केवल आनुवंशिक समानता तक सीमित किया जा सकता है, और न ही उसे औपनिवेशिक श्रेणियों में बाँधा जा सकता है। यह संबंध एक साझा सांस्कृतिक दर्शन पर आधारित है जहाँ संगीत और नृत्य केवल कला नहीं, बल्कि स्मृति, प्रतिरोध और अस्तित्व के साधन हैं। रोमा प्रवासन का ऐतिहासिक मानचित्र और औपनिवेशिक नृविज्ञान की आलोचना दोनों को साथ रखकर देखने पर कालबेलिया नृत्य एक स्थानीय परंपरा से आगे बढ़कर एक वैश्विक ऐतिहासिक कथा का हिस्सा बन गया है।

कालबेलिया नृत्य और संगीत-नृविज्ञान के सिद्धांत

उत्तर-पश्चिम भारत के कालबेलिया समुदाय का नृत्य और संगीत—जिसे आज "कालबेलिया नृत्य" के नाम से जाना जाता है—संगीत-नृविज्ञान के लिए एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन-क्षेत्र प्रस्तुत करता है, क्योंकि इसमें परंपरा, देह, इम्प्रोवाइज़ेशन, पहचान और वैश्विक मंच एक साथ सक्रिय होते हैं। कालबेलिया नृत्य को केवल एक

लोकनृत्य के रूप में देखना अपर्याप्त है; यह एक सांस्कृतिक अभ्यास (cultural practice) है, जो सामाजिक स्मृति और जीविका—दोनों को एक साथ वहन करता है।

Music/Dance as Culture — ध्वनि और देह का सांस्कृतिक अर्थ

एलन मेरियम (1964) के *Music as Culture* सिद्धांत के अनुसार, संगीत और नृत्य को ध्वनि या गतियों के स्तर पर नहीं, बल्कि उनके सामाजिक अर्थों के माध्यम से समझा जाना चाहिए। कालबेलिया नृत्य में स्त्री देह सर्प की गतियों का अनुकरण करती है—लहराती हुई कमर, घूमते हुए चक्कर, और अचानक रुकती हुई भंगिमाएँ। ये गतियाँ केवल सौंदर्यात्मक नहीं हैं; वे उस समुदाय के ऐतिहासिक जीवन-अनुभव से जुड़ी हैं, जिसका पारंपरिक संबंध साँप-पालन, जड़ी-बूटी और घुमंतू जीवन से रहा है। इस प्रकार, देह स्वयं एक सांस्कृतिक पाठ (cultural text) बन जाती है।

परफॉर्मेंस थ्योरी — नृत्य एक घटना के रूप में

परफॉर्मेंस थ्योरी (Schechner 1985) के अनुसार, नृत्य एक स्थिर रचना नहीं बल्कि एक समारोह है, जो हर प्रस्तुति में नया अर्थ रचती है। कालबेलिया नृत्य में कोई निश्चित कोरियोग्राफी नहीं होती। नर्तकी की चाल, गति और ऊर्जा संगीत, स्थान और दर्शकों की प्रतिक्रिया के अनुसार बदलती रहती है। यह नृत्य *repetition* नहीं, बल्कि *re-creation* है,जहाँ हर प्रस्तुति एक नया संवाद बनती है।

इम्प्रोवाइज़ेशन और देहगत ज्ञान[16]

संगीत-नृविज्ञान में इम्प्रोवाइज़ेशन को अब केवल तकनीकी कौशल नहीं, बल्कि देह में निहित ज्ञान (embodied knowledge) माना जाता है (Nettl 2005)। कालबेलिया नृत्य में इम्प्रोवाइज़ेशन लिखित या औपचारिक प्रशिक्षण से नहीं आता;

[16] Embodied Knowledge (देहगत ज्ञान) को समझना रोमा संगीत और कालबेलिया नृत्य—दोनों के लिए केन्द्रीय है। यह अवधारणा बताती है कि ज्ञान केवल लिखित, बोला गया या औपचारिक रूप से सिखाया हुआ नहीं होता, बल्कि शरीर में संचित, अभ्यासित और जीया हुआ भी होता है।

यह बचपन से देखे-सुने गए अनुभवों, अनुष्ठानों और पारिवारिक परंपरा के माध्यम से शरीर में समा जाता है। नर्तकी "सोचकर" नहीं नाचती,देह स्वयं जानती है कि अगली गति क्या होगी।

मौखिक परंपरा और स्त्री केंद्रित संचरण

रोमा संगीत की तरह ही कालबेलिया परंपरा भी मुख्यतः मौखिक और अनुभवजन्य है। नृत्य और गीत स्त्रियों के बीच पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ते हैं देखने, अनुकरण करने और भाग लेने के माध्यम से। यह प्रक्रिया यह दर्शाती है कि ज्ञान केवल संस्थागत या लिखित रूप में ही वैध नहीं होता, बल्कि देह और स्मृति भी ज्ञान के स्रोत हैं।

हाइब्रिडिटी और वैश्वीकरण

हाल के दशकों में कालबेलिया नृत्य ने अंतरराष्ट्रीय मंचों—यूनेस्को, विश्व संगीत महोत्सवों और पर्यटन उद्योग—में प्रवेश किया है। इस प्रक्रिया में वाद्य, मंचीय प्रस्तुति और पोशाकों में परिवर्तन हुए हैं। संगीत-नृविज्ञान इसे हाइब्रिडिटी के रूप में देखता है,जहाँ परंपरा "नष्ट" नहीं होती, बल्कि नए संदर्भों में पुनः गढ़ी जाती है (Stokes 1994)। यह बदलाव केवल बाज़ार की माँग का परिणाम नहीं, बल्कि कलाकारों की रणनीतिक रचनात्मकता भी है।

नृत्य, पहचान और परफॉर्मेटिव आइडेंटिटी

कालबेलिया नृत्य पहचान का *प्रतिनिधित्व* ही नहीं करता, बल्कि उसे *उत्पन्न* भी करता है। मंच पर नृत्य करते हुए कालबेलिया स्त्री "कालबेलिया" बनती है। यह पहचान प्रस्तुति के माध्यम से साकार होती है। संगीत-नृविज्ञान इसे परफॉर्मेटिव आइडेंटिटी के रूप में समझता है (Rasmussen 1991)।

संगीत-नृविज्ञान के आधार पर कालबेलिया नृत्य और रोमा नृत्य/संगीत का विश्लेषण

उत्तर-पश्चिम भारत का कालबेलिया नृत्य और बाल्कन–यूरोपीय रोमा नृत्य/संगीत भले ही भिन्न भौगोलिक और ऐतिहासिक संदर्भों से जुड़े हों, फिर भी दोनों एक साझा सांस्कृतिक तर्क को अभिव्यक्त करते हैं। इन परंपराओं में संगीत, देह, इम्प्रोवाइज़ेशन और पहचान अलग-अलग तत्व नहीं, बल्कि एक-दूसरे में गुँथे हुए प्रक्रियात्मक आयाम हैं। संगीत-नृविज्ञान का दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि ये कलात्मक रूप स्थिर संरचनाएँ नहीं, बल्कि निरंतर गतिशील सांस्कृतिक व्यवहार हैं।

कालबेलिया नृत्य में देह स्वयं सांस्कृतिक पाठ के रूप में उभरती है। लहराती गतियाँ, घूमाव और रुकाव केवल सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि घुमंतू जीवन, पारंपरिक आजीविका और सामुदायिक स्मृति से जुड़े अर्थों को धारण करती हैं। इसी प्रकार, रोमा नृत्य और संगीत में इम्प्रोवाइज़ेशन, वाद्य-प्रस्तुति और लयात्मक संरचनाएँ सामाजिक संबंधों, पेशेवर प्रतिष्ठा और संरक्षक-प्रणाली से निरंतर संवाद करती हैं। दोनों ही परंपराओं में कला जीवन से अलग नहीं, बल्कि जीवन की निरंतरता का माध्यम है।

परफॉर्मेंस थ्योरी के आलोक में, ये परंपराएँ किसी स्थिर पाठ के रूप में नहीं, बल्कि प्रत्येक प्रस्तुति में घटित होने वाली घटनाओं के रूप में सामने आती हैं। कालबेलिया नृत्य और रोमा संगीत में पुनरावृत्ति के स्थान पर पुनर्सृजन केंद्रीय है। हर प्रस्तुति स्थान, समय, दर्शक और संदर्भ के अनुसार नया रूप ग्रहण करती है, जिससे परंपरा जड़ नहीं, बल्कि सजीव बनी रहती है।

इम्प्रोवाइज़ेशन दोनों परंपराओं का मूल सौंदर्य-सिद्धांत है। यह केवल तकनीकी दक्षता नहीं, बल्कि देह में निहित ज्ञान का प्रकटीकरण है। नर्तकी और संगीतकार पूर्व-निर्धारित संरचनाओं का यांत्रिक पालन नहीं करते; देह, स्मृति और अनुभव स्वतः अगली गति और ध्वनि को दिशा देते हैं। इस प्रकार, ज्ञान लिखित रूप में नहीं, बल्कि अभ्यास और प्रस्तुति के माध्यम से साकार होता है।

औपनिवेशिक नृविज्ञान द्वारा इन परंपराओं को अक्सर "आदिम", "घुमंतू" या "अनुशासनहीन" रूपों के रूप में निरूपित किया गया, जिससे उनकी आंतरिक संरचना और सौंदर्यबोध ओझल हो गया। संगीत-नृविज्ञान का दृष्टिकोण इन प्रतिनिधित्वों को चुनौती देता है और यह दिखाता है कि इम्प्रोवाइज़ेशन और मौखिकता किसी कमी के संकेत नहीं, बल्कि वैकल्पिक ज्ञान-प्रणालियाँ हैं।

समकालीन वैश्विक मंचों पर कालबेलिया नृत्य और रोमा संगीत नए रूपों में प्रकट होते हैं। यह परिवर्तन परंपरा के क्षरण का संकेत नहीं, बल्कि उसकी अनुकूलनशीलता और रचनात्मक शक्ति को दर्शाता है। हाइब्रिड रूपों के माध्यम से ये परंपराएँ नए संदर्भों में स्वयं को पुनःपरिभाषित करती हैं।

अंततः, कालबेलिया नृत्य और रोमा नृत्य/संगीत पहचान को केवल दर्शाने वाले माध्यम नहीं हैं, बल्कि पहचान को उत्पन्न करने वाली परफॉर्मेटिव प्रक्रियाएँ हैं। मंच पर नाचती देह और बजती ध्वनि के माध्यम से समुदाय स्वयं को बार-बार साकार करता है। इस प्रकार, ये परंपराएँ न केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति हैं, बल्कि स्मृति, देह और रचनात्मकता के माध्यम से अस्तित्व को निरंतर रचने की प्रक्रियाएँ भी हैं।

अध्याय - 6
संगीत और वाद्ययंत्र

संगीत-नृविज्ञान में संगीत और वाद्ययंत्रों को केवल ध्वनि उत्पन्न करने वाले साधन नहीं माना जाता, बल्कि उन्हें सांस्कृतिक अर्थ, सामाजिक संबंध और पहचान-निर्माण की प्रक्रियाओं से जुड़ा हुआ समझा जाता है। एलन मेरियम (1964) के अनुसार, संगीत को ध्वनि की संरचना तक सीमित करके नहीं समझा जा सकता; उसे उन सामाजिक संकल्पनाओं और व्यवहारों के संदर्भ में देखना आवश्यक है जिनसे वह उत्पन्न होता है। इस दृष्टि से कालबेलिया नृत्य-संगीत और रोमा नृत्य/संगीत दोनों ही स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

Music as Culture — एलन मेरियम का दृष्टिकोण में Music as Culture मॉडल में संगीत को तीन स्तरों पर समझा जाता है - संकल्पनाएँ (concepts), व्यवहार (behavior) और ध्वनि (sound)।

कालबेलिया परंपरा में वाद्ययंत्रों—जैसे ढोलक, खंजरी और पूंगी—की ध्वनि केवल संगीतात्मक नहीं है, बल्कि सांस्कृतिक अर्थों से युक्त है। पूंगी की ध्वनि साँप-पालन और घुमंतू जीवन से जुड़ी स्मृतियों को सक्रिय करती है, जबकि ढोलक की ताल नृत्य की गति और संरचना को नियंत्रित करती है। इसी प्रकार, रोमा परंपराओं में ज़ुर्ना, तापन और ब्रास वाद्य सार्वजनिकता, पेशेवर संगीत-जीवन और सामुदायिक पहचान से जुड़े हैं। यहाँ ध्वनि सामाजिक जीवन की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति बन जाती है।

ब्रूनो नेट्ल (1983; 2005) के अनुसार, जिन परंपराओं में लिखित संकेतन का अभाव होता है, वहाँ वाद्ययंत्र और प्रदर्शन की प्रक्रिया स्वयं संरचना का कार्य करती है। रोमा संगीतकारों और कालबेलिया वादकों के लिए वाद्ययंत्र सीखना केवल तकनीकी प्रशिक्षण नहीं, बल्कि सामाजिक अनुभव है, देखना, सुनना और साथ बजाना इस ज्ञान के प्रमुख माध्यम हैं। इस प्रकार, वाद्ययंत्र सामाजिक संबंधों और सामुदायिक अनुशासन को मूर्त रूप देते हैं।

नेट्ल (2005) यह स्पष्ट करते हैं कि इम्प्रोवाइज़ेशन "रचना की अनुपस्थिति" नहीं, बल्कि एक वैकल्पिक संरचनात्मक सिद्धांत है। कालबेलिया संगीत में ताल और स्वर-रूपरेखाएँ प्रस्तुति के अनुसार बदलती रहती हैं, जिससे नर्तकी और वादक के बीच संवाद बना रहता है। इसी तरह, रोमा संगीत में इम्प्रोवाइज़ेशन पेशेवर दक्षता, रचनात्मकता और सामाजिक प्रतिष्ठा का सूचक है। यहाँ वाद्ययंत्रों के माध्यम से संगीतकार अपनी पहचान और कलात्मक क्षमता को प्रदर्शित करता है।

परफॉर्मेंस थ्योरी (Schechner 1985; Nettl 2005) के अनुसार, संगीत और वाद्ययंत्र स्थिर पाठ नहीं, बल्कि हर प्रस्तुति में घटित होने वाली घटनाएँ हैं। ज़ुर्ना–तापन या ब्रास बैंड की ध्वनि खुली जगहों और सार्वजनिक आयोजनों के अनुसार आकार लेती है, जबकि कालबेलिया संगीत नृत्य की ऊर्जा और दर्शकों की प्रतिक्रिया के अनुसार रूपांतरित होता है। इस प्रकार, वाद्ययंत्र प्रस्तुति के संदर्भ में अर्थ ग्रहण करते हैं।

मार्टिन स्टोक्स (1994) के अनुसार, संगीत सांस्कृतिक प्रवाह और पहचान-राजनीति से जुड़ा होता है। रोमा संगीत में ब्रास, पॉप, रैप या इलेक्ट्रॉनिक तत्वों का समावेश और कालबेलिया नृत्य-संगीत का मंचीय रूपांतरण यह दर्शाता है कि वाद्ययंत्र और ध्वनि समय के साथ नए संदर्भों में पुनर्गठित होते हैं। यह प्रक्रिया परंपरा के क्षरण का नहीं, बल्कि उसकी अनुकूलनशीलता का संकेत है।

संगीत-नृविज्ञान के अनुसार, वाद्ययंत्र पहचान के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। पूंगी कालबेलिया समुदाय की ऐतिहासिक स्मृति से जुड़ी है, जबकि ज़ुर्ना, तापन और ब्रास वाद्य रोमा संगीतकारों की सार्वजनिक और पेशेवर पहचान को रेखांकित करते हैं। इस प्रकार, वाद्ययंत्र केवल ध्वनि नहीं, बल्कि सांस्कृतिक प्रतीक हैं।

अनुष्ठान और वाद्य परंपरा में रोमानी संगीत

संत जॉर्ज दिवस का उत्सव युगोस्लाव जिप्सी समुदाय द्वारा अत्यंत अनुशासन और गंभीरता के साथ मनाया जाता है। वस्तुतः यह वसंत ऋतु का उत्सव है, जिसके अनुष्ठानों में विभिन्न पारंपरिक गीतों और धुनों के साथ-साथ एक विशुद्ध जिप्सी गीत

भी सम्मिलित होता है। इस गीत के साथ किए जाने वाले उन्मुक्त और भावनात्मक जिप्सी नृत्य समारोह का केंद्रीय आकर्षण होते हैं और अनुष्ठानिक महत्व धारण करते हैं।

दक्षिण स्लाव देशों के जिप्सियों में यह नृत्य प्रायः वसंत विषुव (वर्नल इक्विनॉक्स) के आसपास संपन्न होता है। यह केवल शारीरिक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि एक धार्मिक-सा आभामंडल रचता है, जिसमें गहरे मनोवैज्ञानिक प्रेरक तत्त्व अंतर्निहित होते हैं। ये नृत्य और गीत मानवीय इच्छाओं, भावनाओं और सामूहिक चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम बनते हैं। इसी प्रकार 'वासिलिका' (नववर्ष दिवस) का पर्व भी सामान्यतः अनेक जिप्सी लोकगीतों के गायन के साथ मनाया जाता है।

जिप्सी संगीत की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसके गीत और धुनें पारिवारिक परिवेश में व्यक्ति के संपूर्ण जीवन-चक्र जन्म से लेकर मृत्यु तक के साथ निरंतर जुड़ी रहती हैं। इस दृष्टि से जिप्सी लोक-संगीत की यह परंपरा जिप्सी परिवार के सीमित और आत्मकेंद्रित दायरे में ही विकसित और संरक्षित होती है। यह स्थिति ग्रामीण जिप्सी समुदायों और शहरी जिप्सी आबादी दोनों में समान रूप से देखी जा सकती है, और इसे एक महत्वपूर्ण नृवंशीय (एथ्नोग्राफ़िकल) विशेषता के रूप में माना जा सकता है।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ही यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा कि युगोस्लाव कैफ़े और सरायों में जिप्सी संगीत-दल रोमानी भाषा में गीत प्रस्तुत करने लगे। ये प्रस्तुतियाँ कभी स्वयं के मनोरंजन के लिए होती थीं और कभी श्रोताओं के आग्रह पर सार्वजनिक मनोरंजन के रूप में। लेखिका को स्वयं 1958 में पेक (कोसोवो-मेथोहिजा क्षेत्र) में ऐसे ही एक आयोजन में जिप्सी संगीत-दल का प्रदर्शन देखने का अवसर प्राप्त हुआ, जहाँ उन्होंने संगत वाद्ययंत्रों के साथ एक जिप्सी गीत प्रस्तुत किया।

इन कलाकारों ने अत्यंत कौशल, भावनात्मक गहराई और संवेदनशीलता के साथ स्वयं को गीत में वर्णित पात्रों और घटनाओं से इस प्रकार जोड़ा, मानो वे स्वयं उन

अनुभवों के सहभागी रहे हों। हाल के वर्षों में एक नया जिप्सी ऑर्केस्ट्रा भी स्थापित किया गया है, जिसके सदस्यों में स्कोप्जे की एक युवा जिप्सी गायिका एस्मा भी सम्मिलित हैं। उन्होंने सार्वजनिक संगीत समारोहों और युगोस्लाविया के प्रमुख रेडियो स्टेशनों के प्रसारणों के माध्यम से जिप्सी लोक-संगीत को उल्लेखनीय सफलता के साथ लोकप्रिय बनाया। (वर्तमान में एस्मा एक परिपक्व कलाकार थी) युगोस्लाव जिप्सी अपने संगीत प्रदर्शनों में विविध प्रकार के वाद्ययंत्रों का प्रयोग करते हैं। इनके कार्य और ध्वनि-उत्पादन की प्रकृति के आधार पर, जिप्सी संगीतकारों द्वारा प्रयुक्त वाद्ययंत्रों को विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

प्रहार से ध्वनि उत्पन्न करने वाले वाद्ययंत्र जैसा कि सर्वविदित है, इस प्रकार के वाद्ययंत्रों की उत्पत्ति अत्यंत प्राचीन काल में खोजी जा सकती है। आज भी ये विश्व के अनेक अर्ध-सभ्य जातीय समूहों, जनजातियों और समुदायों के मूलभूत संगीत साधनों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस वर्ग में सम्मिलित वाद्ययंत्र जिप्सी संगीत परंपरा में विशेष स्थान रखते हैं।

इस वर्ग में युगोस्लाव जिप्सी निम्नलिखित वाद्ययंत्रों का प्रयोग करते हैं ढोल, गोच (पूर्वी प्रकार का केतली-ढोल), टैम्बोरिन, दारबुक्का (टैम्बोरिन का एक अन्य रूप) तथा तालम्बास (ढोल का ही एक प्रकार)। इन वाद्ययंत्रों का मुख्य उद्देश्य अन्य वाद्ययंत्रों के वादन में संगति प्रदान करना और उसकी प्रभावशीलता को बढ़ाना होता है, यद्यपि कुछ अवसरों पर इन्हें एकल वाद्य के रूप में भी प्रयुक्त किया जाता है। इनमें से कुछ वाद्य विशेष रूप से अनुष्ठानिक प्रयोजनों के लिए अनुकूलित होते हैं; उदाहरणस्वरूप, जिप्सी दरवेशों द्वारा प्रयुक्त तालम्बास।

यूगोस्लाव जिप्सी अपने संगीत प्रस्तुतियों में विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्रों का प्रयोग करते थे। इन्हें कार्य और स्वरूप के आधार पर इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है

वायु वाद्ययंत्र (फूँक से बजने वाले वाद्य)

उनके कार्य और स्वरूप के आधार पर आधुनिक बाल्कन समाज में अनेक प्रकार के वायु वाद्ययंत्र प्रचलित हैं। युगोस्लाव जिप्सी जिन वायु वाद्ययंत्रों का प्रयोग करते हैं, उनमें प्रमुख हैं—तुरही (ट्रम्पेट), चरवाहों का सींग, विभिन्न प्रकार की बाँसुरियाँ अथवा पाइप (मुखपीस के साथ या बिना), ओकारिना तथा बैगपाइप।

तंत्री वाद्ययंत्र (तार वाले वाद्य)

आधुनिक बाल्कन लोगों की भाँति युगोस्लाविया के जिप्सी समुदाय में भी तंत्री वाद्ययंत्रों का व्यापक प्रयोग होता है। इनमें प्रमुख हैं गुस्ले (एक प्राचीन और लोकप्रिय एक-तार वाला वाद्य), फिडल (वायलिन), वायोला, बास वायोला तथा गडुल्का। तंत्री वाद्ययंत्रों के उस वर्ग में, जिन्हें मिज़राब (प्लेक्ट्रम) से बजाया जाता है, टैम्बुरा के विभिन्न प्रकार सम्मिलित हैं, जो स्वरूप में मांडोलिन से मिलते-जुलते हैं।

अन्य वाद्ययंत्र

उपरोक्त के अतिरिक्त, जिप्सी ऑर्केस्ट्राओं में अनेक आधुनिक वाद्ययंत्र भी देखने को मिलते हैं, जैसे सैक्सोफ़ोन, बाँसुरी,क्लैरिनेट,वायलोन्सेलो,धातु की तुरहियाँ, सिम्बालम, अकॉर्डियन, पियानो आदि। इसके साथ ही प्राचीन इलिरियन धातु वाद्य ड्रोम्बुल्जा (यहूदियों की हार्प) जो लोहे के फ्रेम में जड़ी हुई स्टील की जीभ से निर्मित होती है हाल तक सर्बिया में जिप्सियों द्वारा, विशेष रूप से बच्चों के वाद्ययंत्र के रूप में, प्रयुक्त की जाती रही।

यह भी उल्लेखनीय है कि जिप्सी समुदाय अपने लोकगीतों का गायन कभी-कभी गैर-संगीतात्मक वस्तुओं की संगति के साथ भी करता है। इनमें बर्तन (घुमाते हुए पैन), गिलास और डिब्बे (कैन या गिलास पर थपकी देकर उत्पन्न ध्वनि), अथवा **नानुले** (लकड़ी के जूते) पहनकर किए जाने वाले ठक-ठक नृत्य की ध्वनियाँ सम्मिलित हैं।

युगोस्लाविया के जिप्सी संगीत को एक कला के रूप में सिखाने पर विशेष बल देते हैं। इससे तात्पर्य केवल शौकिया या परंपरागत शिक्षा से नहीं है। यदि कोई बच्चा प्रारंभिक अवस्था से ही संगीत के प्रति रुचि विकसित करता है, तो वह किशोरावस्था अथवा युवावस्था में उसे गंभीर रूप से अपनाता है। वर्ष 1959 में कोसोवो-मेथोहिजा क्षेत्र के कामेनित्सा नामक छोटे से कस्बे में जिप्सी युवाओं का एक समूह पीतल के वाद्ययंत्र बजाना सीखता था। उनकी शिक्षा-पद्धति यह थी कि कई युवा पुरुष, प्रत्येक अपने-अपने वाद्ययंत्र के साथ, एक दक्ष संगीतकार के यहाँ एकत्र होते थे ...भोर की पहली रोशनी के साथ ही गलियों में सुरों की आहट सुनाई देने लगती। पुराने वाद्ययंत्रों को सँभाले, नंगे पाँव, धूल भरी राहों से होकर जिप्सी लड़के अपने गुरु के घर की ओर बढ़ते। वही घर उनका विद्यालय था, वही साधना-स्थल। दीवारों के भीतर दिन और रात का भेद मिट जाता, सिर्फ़ ताल बचती, सिर्फ़ स्वर। दोपहर का छोटा-सा विराम होता, फिर उँगलियाँ तारों से संवाद करतीं और साँसें वायु वाद्यों में प्राण फूँक देतीं। जब शिक्षा पूर्ण होती, तो वही गुरु उनके दल का संचालक बनता, और शिष्य एक संगीत-मंडली में बदल जाते—जीवन की लय को मंच पर उतारने के लिए।

कुछ बच्चे ऐसे भी थे जिन्हें किसी गुरु की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। वे खेलते-खेलते सुर खोज लेते, खिलौना वाद्यों में भविष्य की धुनें छिपी होतीं। घरों में रखे पुराने वायलिन, खुरदरे ढोल या टूटी बाँसुरी उनके पहले शिक्षक बनते। पिता से पुत्र तक बहती कला उनके रक्त में रची-बसी थी; कभी-कभी माँ की मधुर आवाज़ बेटी की साँसों में उतर आती। संगीत उनके लिए सीखा हुआ नहीं, जिया हुआ सत्य था।

इस समाज में संगीत पुरुषों का कर्म माना गया, पर स्त्रियों की आवाज़ उसकी आत्मा थी। वे कम बजाती थीं, पर जब गातीं, तो धुनें जीवित हो उठतीं। कैफ़े में बजते ऑर्केस्ट्रा के साथ उनका स्वर जुड़ते ही हवा में कोई अदृश्य दीप जल उठता,श्रोताओं के हृदय तक रोशनी पहुँचाने वाला।

संगीत केवल आनंद का साधन नहीं था; वह संस्कारों का साक्षी था। विवाह की मंगल बेला हो या किसी संत का पर्व, क्रिसमस की ठंडी रातें हों या नववर्ष की आशाएँ, ईस्टर की प्रार्थनाएँ हों या संत जॉर्ज दिवस की उमंग—हर अवसर पर सुर

उपस्थित रहते। रमज़ान की रातों में ढोल की गंभीर थाप रोज़ा खोलने का संकेत बनती। किसी बच्चे के खतने पर, किसी युवती के घूँघट धारण पर, और मृत्यु के मौन क्षणों में भी—संगीत जीवन के साथ चलता रहा।

रमज़ान के दिनों में मुस्लिम गाँवों की गलियाँ गोच की आवाज़ से जागतीं। जिप्सी ढोलवादक पूरे महीने के लिए बुलाए जाते। उनका ढोल समय को मापता, आस्था को पुकारता और समुदाय की धड़कन बन जाता। वह केवल वाद्य नहीं था,वह विश्वास की ध्वनि थी।

और फिर था ओरो वृत्ताकार नृत्य, जिसमें कदम धरती से नहीं, स्मृति से उठते थे। सदियों तक जिप्सियों ने इसकी धुनों को सँजोकर रखा। ये धुनें इतनी सूक्ष्म थीं कि गैर-जिप्सी हाथ उन्हें छू भी नहीं पाते थे। पर समय निर्मम है। अनेक संगीतकार चले गए और उनके साथ उनकी रचनाएँ भी हवा में घुल गईं। सैकड़ों ओरो आज केवल यादों में थिरकते हैं। बेलग्रेड की पुरानी, हँसमुख संगीतकारों की मंडली 'सुज़' मानो उन्हीं बिखरे स्वरों की अंतिम प्रतिध्वनि हो।

जिप्सी संगीत किसी पुस्तक में बंद नहीं होता। वह आग के चारों ओर बैठी पीढ़ियों में बहता है, जन्म से मृत्यु तक साथ चलता है एक ऐसी कथा की तरह, जो कभी समाप्त नहीं होती।

रोमानी संगीत रोमा समुदाय की मनोदशा को अभिव्यक्त करता है। इसने दर्द और अस्थिरता को आत्मसात कर इन्हें अपनी विशेषता बना लिया है। इसमें शोकपूर्ण, असंगत, उदासी और विद्रोही स्वर के साथ जीवंतता, लय और साहस है; इसमें रचनात्मकता जो जीवन के वैयक्तिक ज्ञान का परिपक्व परिपाक है। यह रोमा की जीवन-शैली की भाँति गतिशील और मुक्त है। इसमें रोमा की प्रवासन यात्रा, सांस्कृतिक संपर्क और संघर्ष की झलक मिलती है। इस संबंध में हंगरियन संगीतकार फ्रैंज लिस्ज (Liszt) '*Gypsies and Their Music in Hungary'* में लिखते हैं—

"...The art of music is for them a sublime language, a song mystic in itself though clear to the initiated, which they use to express what they

want without being influenced by anything foreign to their desires. They have invented their music for their own use, to speak, to sing about themselves to themselves, to remain united, and they have invented the most touching monologues."[xv]

रोमानी संगीत और उनके वाद्ययंत्रों का संबंध भारत से है। इसके बारे में Paco Suárez और Santino Spinelli अपने लेख The Art of Sounds in Romani Culture में लिखते हैं कि "रोमानी संगीत को बेहतर ढंग से समझने के लिए इसकी उत्पत्ति को भारतीय संगीत के साथ देखा जाना चाहिए..." ऐतिहासिक साक्ष्य भी रोमा समुदाय की उत्पत्ति तथा रोमानी संगीत की उत्पत्ति को भारतीय मूल से होने को पुष्ट करते हैं। इसी कारण, रोमानी एलओके वाद्ययंत्रों और भारतीय वाद्ययंत्रों में समानता है। यद्यपि यहाँ ध्यान देने योग्य है कि रोमा अपने प्रवास के दौरान विभिन्न समाजों के संपर्क में आए, जिनका प्रभाव रोमानी संगीत पर पड़ा और परिणामतः रोमानी लोक वाडयंत्रों में स्थानीय वाद्ययंत्र भी शामिल हो गए।

रोमा कुशल कलाकार होने के कारण उनके नृत्य तथा संगीत में आज भी भारतीय झलक देखने को मिलती है। रोमा का संबंध भारतीय कालबेलिया, गाड़िया लोहार तथा बंजारा समुदाय से है। भाषिक रूप से रोमा भारत से काफ़ी क़रीब है जिस कारण आज भी उनकी भाषा में भारतीय शब्द पर्याप्त मात्रा में मौजूद है। भाषा समानता के कारण उनकी संगीत में भी काफ़ी समरूपता देखने को मिलती है। संगीत तथा नृत्य की समरूपता को ध्यान में रखते हुए रोमा के वाद्ययंत्रों को यहाँ लिया गया है। जैसे- कालबेलिया समुदाय के कोबरा तथा रोमा समुदाय के क्यूचेक नृत्य में पूंगी का उपयोग किया जाता है। रशियन जिप्सी समुदाय द्वारा खंजरी वाद्ययंत्र का प्रयोग किया जाता है, जिनकी विवेचना आगे की गई है।

रोमा समुदाय के संगीत में भारतीय प्रभाव

संगीत हमेशा से नृत्य और उसकी भंगिमाओं व मुद्राओं का अवलंब रहा है। संगीत का प्रत्यक्षीकरण अप्रत्यक्ष के प्रत्यक्षीकरण का एक पहलू है अथवा यह बोधन, एकाग्र चित्तता, आदर्शीकरण एवं देवत्वरोपण के लिए प्रतीकों के उपयोग की प्रक्रिया

है। रोमानी संगीत में भारतीय तत्व विद्यमान हैं। नृत्य के दौरान उनके फुटवर्क और लयबद्ध गीत संबंधी समानता कालबेलिया तथा रोमा दोनों ही समुदाय में देखने को मिलती है। उत्तर भारतीय संगीत का मूल राग सत्तक है और इसके सातों स्वरों "स, रे, ग, म, प, ध, नि," का प्रतिबिंब रोमानी संगीत के रागों में विद्यमान है।

रोमानी संगीत में नियमों का बंधन नहीं होता यहाँ तक छंद ताल भी नियमों से मुत्त होते हैं। इयान हैनकॉक[xvi] (2002) एवं इसाबेल फोंसेका[xvii] (1996) का मत है कि हंगरी के रोमानी संगीतकार कंठ संगीत में लयात्मकता वर्णित छंद का प्रयोग करते हैं जिसकी कड़ी वास्तव में भारत से जुड़ी है। फ्रीजियन रोमानी सुर– यूरोपीय फ्लेमेंको में प्रयोग होता है जो भारत के भैरवी राग[xviii] पर आधारित है। बुल्गेरियाई रोमानी सैक्सोफोन वादक यूरी यूनाकोव मानते हैं कि भारतीय राजस्थानी लोक धुनें उन्हे क्युचेक "kyuchek" की तरह लगती है तथा रोमा गीत में क्युचेक (kyuchek) ताल विद्यमान है जो भारतीय ढोल की ताल के समरूप है तथा "तबला" (रोमानी ताराबुका) और "डफली" (डाजरे) के सुर एवं लय समरूप हैं। अप्रत्यक्ष एवं मानवीय रूपों (कई बार अतिरिक्त हाथ या चेहरों के साथ परिवर्तित होते हैं) में अनुभूति को हम सीधे वैदिक विचारों से जोड़ सकते हैं। राग संगीत पर भाषा के ध्वन्यात्मक पक्षों के प्रभाव का भी ध्यान रखना आवश्यक है। सम गानों में सांगीतीय स्वरांकन संभव है। इनमें इच्छित प्रभावों व नैवेद्य[xix] संहिता के लिए साम का प्रभाव गान पर निर्भर करता है। संगीत की भाषा स्वयं वाचिक कलाओं के प्रयोग के लिए उपयुक्त स्वरीय अंतर्वस्तु वाले शब्दों के कई रूपों का सृजन करती है। मौखिक-संप्रेषण की तकनीक अर्थात् श्रुति-स्मृति परंपरा भी हमारी संस्कृति का अंग है और इस परंपरा के माध्यम से राग संरक्षित है। यही कारण है कि रोमानी संगीत में आज भी भारतीय संगीत के अंश विद्यमान हैं। नृत्य ही नहीं वाद्ययंत्रों में भी भारतीय समरूपता देखने को मिलती है।

रोमानी और भारतीय वाद्ययंत्रों में समरूपता

नाट्यशास्त्र में वाद्य यंत्रों को चार समूहों में बताया गया है-अवनद्ध वाद्य (ताल वाद्य), घन वाद्य (ठोस वाद्य), सुषिर वाद्य (वायु वाद्य), और तत वाद्य (तार वाले वाद्य)। भारतीय वाद्ययंत्रों का भरतमुनि द्वारा दिया गया यह प्राचीन वर्गीकरण 12वीं सदी में यूरोप में अपनाया गया और यूरोप के वाद्ययंत्रों के वर्गीकरण में इसका उपयोग किया गया। बाद में, चार वर्गों को यूनानी नाम दिए गए- तत वाद्य के लिए कोरडोफ़ोन्स, अवनद्ध वाद्य के लिए मेमब्रानोफ़ोन्स, सुषिर वाद्य के लिए एरोफ़ोन्स, और घन वाद्यों के लिए ऑटोफ़ोन्स। इस प्रकार पाश्चात्य वर्गीकरण प्रणाली प्राचीन भारतीय नाट्यशास्त्र पर आधारित है।

संगीत में वाद्य-यंत्रों का महत्वपूर्ण स्थान है। लोकसंगीत में वाद्ययंत्रों को तीन श्रेणी रखा जाता है।

1. भपंग तार वाद्य यंत्र
2. पूंगी फूंक वाद्य यंत्र
3. ख़ंजरी, खड़ताल वाद्य यंत्र

भपंग



स्रोत: https://wmic.net/india-rajasthan-bhapang/

भपंग, जिसे अंग्रेज़ी में "टॉकिंग ड्रम" कहा जाता है, भारतीय लोकसंगीत और नृत्य का एक विशिष्ट स्ट्रिंग वाद्य है। यह मुख्यतः राजस्थान के अलवर जिले में रहने वाले कालबेलिया (जोगी) समुदाय द्वारा प्रयोग किया जाता है, जो अपने नृत्य, गीत और

कथा गायन के माध्यम से सामाजिक एवं सांस्कृतिक अनुभवों को व्यक्त करते हैं (Rajasthangk, 2013)। इस वाद्य का निर्माण सामान्यतः कटे हुए तूँबे (लौकी के खोल) से किया जाता है, जिसके ऊपरी हिस्से पर चमड़ा लगाया जाता है। चमड़े में एक छेद कर उसमें जानवर की आंत या प्लास्टिक की डोरी डाली जाती है, और डोरी के सिरे पर लकड़ी का छोटा टुकड़ा बाँधा जाता है। वादक इसे अपने कांख में दबाकर बजाता है, एक हाथ से डोरी को खींच-छोड़ता है और दूसरे हाथ से लकड़ी के टुकड़े से प्रहार करता है, जिससे विभिन्न स्वर और धुन उत्पन्न होती हैं। इस तकनीकी विशेषता के कारण भपंग को "बोलता हुआ ड्रम" कहा जाता है।

भारत में इस वाद्य का क्षेत्रीय प्रसार विभिन्न नामों से देखा जाता है: महाराष्ट्र में इसे चोंगर, गुजरात में अपांग, पंजाब में तुंबा और रोमा (जिप्सी) समुदाय में तूँबा कहा जाता है। इन सभी क्षेत्रों में वाद्य की संरचना, धुन और बजाने की तकनीक में महत्वपूर्ण समानताएँ पाई जाती हैं, जो सांस्कृतिक आदान-प्रदान और परंपरागत संगीत प्रवाह का संकेत देती हैं। रोमा समुदाय की उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप से मानी जाती है, और मध्यकालीन अवधि में उनकी प्रवास यात्रा के दौरान भारतीय वाद्य उपकरणों का यूरोप में हस्तांतरण हुआ। रोमा संगीत में प्रयुक्त तूँबा, भले ही आकार और सामग्रियों में भिन्न हो, तकनीक, ताल और धुन के संदर्भ में भपंग के समान है।

इस प्रकार, भपंग और रोमा तूँबा दोनों वाद्य केवल संगीत साधन नहीं हैं, बल्कि ये सांस्कृतिक इतिहास, लोककथाएँ और मानव प्रवास की कथाओं को संप्रेषित करने वाले माध्यम हैं। भारतीय लोककला में भपंग का महत्व और यूरोप में रोमा संगीत में उसका रूपांतरण इस तथ्य की पुष्टि करता है कि संगीत और वाद्य उपकरण सामाजिक एवं सांस्कृतिक संवाद का एक जीवंत माध्यम हैं।

कमायचा (kamaycha)



वाद्य यंत्र संग्रहालय दिल्ली (2026)

भारतीय लोक-संगीत की समृद्ध परंपरा में कमायचा का स्थान अत्यंत विशिष्ट एवं गौरवपूर्ण रहा है। यह वाद्ययंत्र न केवल राजस्थान की सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधि है, बल्कि प्राचीन संगीत परंपराओं की निरंतरता का भी एक सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। कमायचा का उद्भव लगभग 9वीं से 12वीं शताब्दी के मध्य माना जाता है, जब भारतीय उपमहाद्वीप में मध्य एशियाई एवं फारसी संगीत परंपराओं का प्रभाव धीरे-धीरे स्थापित हो रहा था। इस दृष्टि से कमायचा को उन प्राचीन तंतु वाद्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है, जिन्होंने समय के साथ अपने मूल स्वरूप को सुरक्षित रखते हुए विकास किया।

राजस्थान के पश्चिमी मरुस्थलीय क्षेत्र में निवास करने वाला मंगनियार समुदाय इस वाद्य का प्रमुख संरक्षक एवं संवाहक रहा है। इस समुदाय की संगीत परंपरा 'जजमानी प्रथा' पर आधारित रही, जिसके अंतर्गत वे विशेष रूप से राजपूत शासकों एवं सामंतों के आश्रय में रहते हुए पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी कला का प्रदर्शन करते थे।

कमायचा इस परंपरा का मुख्य वाद्य था, जिसके माध्यम से मांगणियार कलाकार वीरगाथाएँ, ऐतिहासिक आख्यान, प्रेम गीत तथा देवी-देवताओं की स्तुतियाँ प्रस्तुत करते थे। इस प्रकार, कमायचा केवल संगीत का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम भी था।

संगीतशास्त्रीय दृष्टि से कमायचा एक 'बोव्ड स्ट्रिंग इंस्ट्रूमेंट' (धनुष से बजाया जाने वाला तंतु वाद्य) है, जिसकी ध्वनि अत्यंत गहरी, मधुर एवं गूंजयुक्त होती है। इसकी ध्वनि में एक विशेष प्रकार की करुणा एवं गंभीरता निहित होती है, जो मरुस्थल की शांत एवं विस्तृत प्रकृति का आभास कराती है। इसी कारण इसे "रेगिस्तान की आत्मा" तथा "मरुधर का स्वर" जैसे विशेषणों से भी अभिहित किया गया है।

कमायचा का उपयोग केवल लौकिक मनोरंजन तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह धार्मिक एवं आध्यात्मिक संदर्भों में भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। सूफी परंपरा में, जहाँ ईश्वर के प्रति प्रेम और समर्पण को संगीत के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है, वहाँ कमायचा की ध्वनि को विशेष रूप से उपयुक्त माना गया। इसकी रूहानी धुनें श्रोताओं को आध्यात्मिक अनुभूति प्रदान करती हैं और उन्हें आंतरिक शांति की ओर उन्मुख करती हैं। इस प्रकार, कमायचा लोक और सूफी परंपराओं के मध्य एक महत्वपूर्ण सेतु के रूप में स्थापित हुआ।

यद्यपि अतीत में कमायचा का व्यापक प्रचलन था और इसे राजदरबारों से लेकर जनजीवन तक अत्यंत सम्मान प्राप्त था, तथापि आधुनिक युग में इसकी स्थिति चिंताजनक हो गई है। पाश्चात्य वाद्ययंत्रों के प्रभाव, संगीत की बदलती प्रवृत्तियों तथा इसके निर्माण एवं वादन की जटिलता के कारण नई पीढ़ी में इसकी लोकप्रियता में कमी आई है। परिणामस्वरूप, आज इसके पारंपरिक कारीगरों और वादकों की संख्या अत्यंत सीमित रह गई है।

फिर भी, कुछ समर्पित कलाकारों ने इस वाद्य की परंपरा को जीवित रखने के लिए उल्लेखनीय प्रयास किए हैं। विशेष रूप से साकर ख़ान का नाम इस संदर्भ में अत्यंत आदर के साथ लिया जाता है, जिन्होंने कमायचा को राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंचों

पर प्रतिष्ठा दिलाई। उनके योगदान के परिणामस्वरूप इस वाद्ययंत्र को पुनः पहचान मिलने लगी है और इसके संरक्षण के प्रति जागरूकता भी बढ़ी है।

अंततः, यह कहा जा सकता है कि कमायचा केवल एक प्राचीन वाद्ययंत्र नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का जीवंत प्रतीक है। यह इतिहास, परंपरा, समाज और आध्यात्मिकता के विविध आयामों को अपने स्वर में समाहित किए हुए है। अतः इसके संरक्षण एवं संवर्धन की आवश्यकता केवल एक कला के संरक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह हमारी सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखने का भी एक महत्वपूर्ण दायित्व है।

कमायचा एक ऐसा वाद्ययंत्र हैं रोमा समुदाय द्वारा अपने साथ पलायन के दौरान ले जाया गया। इस वाद्ययंत्र का विकास 9वीं और 10वीं शताब्दी के आसपास बाल्कन क्षेत्र (बुल्गारिया) में हुआ, जिसे बीजान्टिन लाइरा और बाद में यह गदुल्का के नाम से जानी जाने लगी। परंतु शोधकर्ता के मत यहाँ एक समान नहीं है।

कमायचा एक प्राचीन तंतु वाद्ययंत्र है, जिसे कुछ विद्वानों के अनुसार रोमा समुदाय अपने प्रवास के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में लेकर गए। यह समुदाय मूलतः भारतीय उपमहाद्वीप से निकलकर मध्य एशिया होते हुए यूरोप, विशेषतः बाल्कन क्षेत्र तक पहुँचा, जहाँ उनकी संगीत परंपराओं का स्थानीय संस्कृतियों के साथ गहरा संपर्क स्थापित हुआ।

इसी संदर्भ में यह मत भी प्रस्तुत किया जाता है कि 9वीं और 10वीं शताब्दी के आसपास बाल्कन क्षेत्र (वर्तमान बुल्गारिया) में एक ऐसे तंतु वाद्य का विकास हुआ, जिसका संबंध प्राचीन बीजान्टिन लाइरा से माना जाता है। आगे चलकर यही परंपरा विकसित होकर "गदुल्का" के रूप में प्रसिद्ध हुई।

हालाँकि, इस विषय में सभी शोधकर्ताओं की राय एकमत नहीं है। कुछ विद्वान कमायचा, बीजान्टिन लाइरा और गदुल्का के बीच संबंध को सांस्कृतिक आदान-प्रदान और समानांतर विकास का परिणाम मानते हैं, न कि एक सीधी विकास-श्रृंखला इस कारण यह निष्कर्ष निश्चित रूप से स्थापित नहीं किया जा सकता कि

कमायचा ही गदुल्का या बीजान्टिन लाइरा का प्रत्यक्ष पूर्वज है, बल्कि यह कहा जा सकता है कि ये सभी वाद्य एक व्यापक धनुष से तारों वाले वाद्ययंत्र बजाने की संगीत परंपरा "bowed string tradition" के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों में विकसित हुए।

इस प्रकार, कमायचा, बीजान्टिन लाइरा और गदुल्का के मध्य संबंध एक जटिल ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रिया को दर्शाते हैं, जिसमें प्रवास, परंपरा और स्थानीय प्रभावों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

गदुल्का बुल्गारिया की पारंपरिक लोक-संगीत परंपरा का एक अत्यंत महत्वपूर्ण तंतु वाद्ययंत्र है, जिसका इतिहास मध्यकालीन काल से संबद्ध माना जाता है। संगीत इतिहासकारों के अनुसार, गदुल्का का विकास 9वीं और 10वीं शताब्दी के आसपास बाल्कन क्षेत्र में हुआ, जब बीजान्टिन साम्राज्य की सांस्कृतिक एवं कलात्मक परंपराओं का व्यापक प्रभाव इस क्षेत्र पर विद्यमान था। इसी संदर्भ में इसे प्राचीन बीजान्टिन लाइरा का वंशज माना जाता है, जो उस समय का एक प्रमुख धनुष से बजाया जाने वाला तंतु वाद्य था।

बीजान्टिन लाइरा और गदुल्का के मध्य संबंध मुख्यतः उनकी संरचना, वादन शैली तथा ऐतिहासिक विकास-क्रम में निहित है। बीजान्टिन लाइरा का नाशपाती आकार, धनुष से बजाने की पद्धति तथा उंगलियों के किनारों/नाखूनों से तारों को स्पर्श करने की तकनीक, आगे चलकर गदुल्का में भी परिलक्षित होती है। यह स्पष्ट करता है कि गदुल्का ने लायरा [xx] की मूल परंपरा को अपनाते हुए स्थानीय (बुल्गारियाई) आवश्यकताओं और सौंदर्यबोध के अनुसार स्वयं को विकसित किया।

गदुल्का की संरचना और वादन शैली इसे उन प्राचीन वाद्यों की श्रेणी में स्थापित करती है, जिनसे आगे चलकर आधुनिक वायलिन जैसे वाद्ययंत्रों का विकास हुआ। इसकी ध्वनि में एक विशिष्ट गूंज और गहराई होती है, जो इसे अन्य तंतु वाद्यों से अलग पहचान प्रदान करती है। प्रारंभिक रूप में इसकी बनावट अपेक्षाकृत सरल थी, किंतु समय के साथ इसमें तकनीकी और संरचनात्मक परिवर्तन किए गए। विशेष रूप से 'सहानुभूतिपूर्ण तारों' का समावेश गदुल्का में एक महत्वपूर्ण नवाचार था, जो

बीजान्टिन लाइरा में नहीं पाया जाता था। इस परिवर्तन ने गदुल्का की ध्वनि को अधिक गूंजदार और समृद्ध बना दिया।

बुल्गारिया के ग्रामीण जीवन में गदुल्का का विशेष स्थान रहा है। यह वाद्य केवल संगीत का साधन ही नहीं, बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम भी था। गाँवों में आयोजित होने वाले विवाह, उत्सव एवं सामुदायिक समारोहों में इसका व्यापक उपयोग किया जाता था। विशेष रूप से पारंपरिक लोकनृत्य 'होरो ' के साथ गदुल्का की संगत अनिवार्य मानी जाती थी, जहाँ इसकी मधुर और लयात्मक ध्वनि नृत्य की गति और भाव को सजीव बना देती थी।

बाल्कन क्षेत्र में बसे रोमा समुदाय ने भी गदुल्का को अपनाया और इसे अपने संगीत जीवन में शामिल किया। रोमा संगीतकारों ने गदुल्का का उपयोग मुख्य रूप से लोक उत्सव, शादी-ब्याह और सामुदायिक समारोहों में किया। हालांकि, गदुल्का का ऐतिहासिक विकास बुल्गारियाई लोक संस्कृति में हुआ, रोमा समुदाय ने इसे संगीत की बहुलता और प्रवासी सांस्कृतिक आदान-प्रदान का एक माध्यम बना दिया।

रोमा संगीत में गदुल्का का उपयोग यह दर्शाता है कि वे बहु-वाद्य समुदाय हैं, जो न केवल गदुल्का बल्कि वायलिन, क्लैरिनेट और अन्य तंतु वाद्यों का भी प्रयोग करते हैं। गदुल्का की अनुगूंज और मधुर ध्वनि ने रोमा संगीत को और अधिक समृद्ध एवं भावपूर्ण बनाया। इस प्रकार, रोमा समुदाय ने गदुल्का को अपनाया, इसे अपने सांस्कृतिक जीवन में संजोया, और इसके वैश्विक मान्यता प्राप्त होने में योगदान दिया।



रोमा मंकी ट्रेनर, बुल्गारिया (1980)

यह दुर्लभ श्वेत-श्याम छवि हमें बीते समय की एक जीवंत झलक प्रदान करती है। एक ऐसे कलाकार की, जो न केवल संगीत का साधक है, बल्कि परंपरा, जीविका और संस्कृति का वाहक भी है। वर्ष 1980 के आसपास बुल्गारिया के ग्रामीण परिवेश में खींची गई यह तस्वीर एक रोमानी समुदाय के कलाकार को दर्शाती है, जो अपने कंधे पर एक प्रशिक्षित बंदर के साथ पारंपरिक वाद्ययंत्र बजा रहा है। यह दृश्य केवल एक साधारण प्रस्तुति नहीं, बल्कि उस समय की सामाजिक-सांस्कृतिक वास्तविकताओं का दर्पण है।

चित्र में दिखाई देने वाला व्यक्ति एक पारंपरिक वाद्ययंत्र संभवतः कमायचा या स्थानीय रूप में प्रचलित "गदुल्का" जैसा वाद्य बजा रहा है। यह वाद्ययंत्र बाल्कन क्षेत्र में लोकसंगीत का महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। इसका निर्माण लकड़ी से होता है और इसे धनुष के माध्यम से बजाया जाता है, जिससे एक मधुर, किंतु गहरी और

भावनात्मक ध्वनि उत्पन्न होती है। इस कलाकार के हाथों में यह वाद्य केवल एक साधन नहीं, बल्कि उसकी पहचान और आजीविका का केंद्र है।

रोमानी समुदाय यूरोप के विभिन्न हिस्सों में फैले हुए हैं और अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक परंपराओं के लिए प्रसिद्ध हैं। संगीत, नृत्य और प्रदर्शन उनकी जीवनशैली का अभिन्न अंग हैं। इस तस्वीर में दिखाया गया कलाकार भी इसी परंपरा का प्रतिनिधि है। एक घुमंतू कलाकार, जो गाँव-गाँव जाकर अपनी कला का प्रदर्शन करता है और उसी के माध्यम से जीविका अर्जित करता है।

उसके कंधे पर बैठा बंदर इस प्रस्तुति का एक और महत्वपूर्ण तत्व है। बंदरों को प्रशिक्षित करके उनसे छोटे-छोटे करतब करवाना उस समय के कई रोमानी कलाकारों की परंपरा का हिस्सा था। यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं था, बल्कि दर्शकों को आकर्षित करने की एक रणनीति भी थी। बच्चे और बड़े, दोनों इस प्रकार के प्रदर्शन से प्रभावित होते थे, जिससे कलाकार को अधिक आय प्राप्त होती थी।

कलाकार के चेहरे पर एकाग्रता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उसके होंठों के बीच सिगरेट दबाई हुई है, जो उस समय के ग्रामीण जीवन की सहजता और कठिनाइयों दोनों का संकेत देती है। उसकी वेशभूषा साधारण है-एक स्वेटर, सिर पर टोपी, और कंधे पर लटका हुआ जाल या थैला। यह सब मिलकर उसकी जीवनशैली की सादगी और संघर्ष को उजागर करते हैं।

पृष्ठभूमि में दिखाई देने वाला प्राकृतिक दृश्य पेड़, घास और खुला वातावरण इस बात की पुष्टि करता है कि यह प्रदर्शन किसी शहरी मंच पर नहीं, बल्कि खुले ग्रामीण क्षेत्र में हो रहा है। यह उस समय की लोकसंस्कृति का एक महत्वपूर्ण पहलू था, जहाँ कला किसी औपचारिक मंच तक सीमित नहीं थी, बल्कि लोगों के बीच, उनके दैनिक जीवन का हिस्सा बनकर जीवित रहती थी।

पूंगी



वाद्य यंत्र संग्रहालय दिल्ली (2026)

पूंगी और भपंग दोनों ही भारतीय लोकसंगीत के विशिष्ट वाद्य हैं, जिनका संबंध राजस्थान के कालबेलिया (जोगी) समुदाय से है और जिनकी तकनीक, धुन और सांस्कृतिक उपयोग रोमा (जिप्सी) समुदाय में भी दिखाई देती है। भपंग, जिसे अंग्रेज़ी में "टॉकिंग ड्रम" कहा जाता है, मुख्यतः राजस्थान के अलवर जिले में बजाया जाता है। इसका निर्माण कटे हुए तूँबे (लौकी के खोल) से किया जाता है, जिसके ऊपरी हिस्से पर चमड़ा चढ़ाया जाता है। चमड़े में एक छेद कर उसमें जानवर की आंत या प्लास्टिक की डोरी डाली जाती है, और डोरी के सिरे पर लकड़ी का छोटा टुकड़ा बाँधा जाता है। वादक इसे अपने कांख में दबाकर बजाता है, एक हाथ से डोरी को खींच-छोड़ता है और दूसरे हाथ से लकड़ी के टुकड़े से प्रहार करता है, जिससे विभिन्न स्वर और धुन उत्पन्न होती हैं। इस तकनीकी विशेषता के कारण भपंग को "बोलता हुआ ड्रम" कहा जाता है। भपंग का क्षेत्रीय प्रसार विभिन्न नामों से होता है; महाराष्ट्र में इसे चोंगर, गुजरात में अपांग, पंजाब में तुंबा और रोमा समुदाय में तूँबा कहा जाता है। इन सभी क्षेत्रों में वाद्य की संरचना, धुन और बजाने की तकनीक में समानताएँ पाई जाती हैं, जो सांस्कृतिक आदान-प्रदान का संकेत देती हैं।

पूंगी भी कालबेलिया समुदाय का प्रमुख वाद्य है और इसका उपयोग पारंपरिक सपेरा नृत्य में किया जाता है। यह वाद्य विशेष प्रकार के तूँबे के निचले गोल हिस्से में दो नलियों के माध्यम से निर्मित होता है, जिनमें से एक नली स्थायी स्वर उत्पन्न करती है और दूसरी नली से वादक विविध स्वर निकालता है। नृत्य में नर्तक/नर्तकी पूंगी की धुन के अनुसार शरीर को सर्प की तरह लचकाकर प्रस्तुत करते हैं। रोमा समुदाय में इस वाद्य को तबलिस्स या सिवोल कहा जाता है और यह जिप्सी लोकनृत्य, विशेषकर क्यूचेक नृत्य में प्रयुक्त होता है। रोमा समुदाय का मानना है कि यह नृत्य सर्प की तरह लचकदार होता है, जिसे भारतीय लोककला में "सपेरा" नृत्य कहा जाता है।

इतिहास और सांस्कृतिक संदर्भ में, रोमा समुदाय की उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप से मानी जाती है। मध्यकालीन अवधि में उनके प्रवास के दौरान भारतीय वाद्य उपकरण और संगीत शैली यूरोप में पहुँची। इसी प्रवास के कारण कालबेलिया समुदाय के पूंगी और सपेरा नृत्य के तत्व रोमा संगीत और नृत्य परंपराओं में समाहित हो गए। भपंग और पूंगी दोनों ही तकनीक, धुन और नृत्य के संदर्भ में समानताएँ रखते हैं और इनका प्रयोग लोककथाओं, गीतों और नृत्यों के माध्यम से सांस्कृतिक संवाद स्थापित करने के लिए होता है। कालबेलिया नर्तकी आशा सपेरा के अनुसार, भारतीय कालबेलिया और रोमा समुदाय दोनों में नृत्य की तकनीक और वाद्य उपकरण समान हैं। नर्तक/नर्तकी पूंगी की धुन पर झुककर, लहराकर और मुँह के माध्यम से स्वर नियंत्रित करके प्रदर्शन करते हैं। इस प्रकार, भपंग और पूंगी केवल संगीत वाद्य नहीं हैं, बल्कि ये भारतीय लोककला और रोमा संगीत में सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और संगीतात्मक रूप से जुड़े हुए जीवंत माध्यम हैं, जो संगीत, नृत्य और मानव प्रवास की कहानी को संप्रेषित करते हैं।

खंजरी



सईदा क़ासिम जिप्सी नर्तकी लंदन 2018 खंजरी वाद्ययंत्र, स्रोत: सईदा क़ासिम



खंजरी वाद्ययंत्र, स्रोत: रिमझिम सिन्हा, 2021, जयपुर

यह वाद्ययंत्र, जो ढप का लघु रूप माना जाता है, भारतीय लोकसंगीत परंपरा का एक महत्वपूर्ण ताल वाद्य है और विशेष रूप से राजस्थान के कालबेलिया (जोगी) समुदाय के जीवन एवं संस्कृति में गहराई से रचा-बसा है। इसकी संरचना ढप के समान होती है, जिसमें एक गोलाकार फ्रेम पर चमड़ा मढ़ा जाता है, किंतु आकार में छोटा होने के कारण यह अधिक सुगम और चलायमान (portable) होता है। इसके भीतर या किनारों पर धातु की छोटी-छोटी प्लेटें या झंकार युक्त तत्व लगाए जाते हैं, जिनके कारण बजाने पर "झर-झर" एवं "झन-झन" जैसी विशिष्ट ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। यह ध्वनि केवल ताल देने का कार्य नहीं करती, बल्कि नृत्य की लय, गति और भाव को भी नियंत्रित करती है।

कालबेलिया समुदाय में यह वाद्य विशेष रूप से नृत्य के साथ जुड़ा हुआ है, जहाँ पुरुष वादक इसे तीव्र गति से बजाते हैं और स्त्रियाँ सर्प की भाँति लचकदार एवं आकर्षक नृत्य प्रस्तुत करती हैं। इस प्रकार यह वाद्य केवल एक संगीत उपकरण न होकर, कालबेलिया जीवन शैली, उनकी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और लोकपरंपरा

का जीवंत प्रतीक बन जाता है। इसके प्रत्येक स्वर में उनके जीवन, उत्सव, लोकविश्वास और सामाजिक अनुभवों की झलक मिलती है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो भारतीय उपमहाद्वीप से मध्यकालीन काल में रोमा (जिप्सी) समुदाय के पश्चिम की ओर प्रवास के साथ अनेक सांस्कृतिक तत्व, विशेषकर संगीत और वाद्ययंत्र, यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों विशेषकर बाल्कन—तक पहुँचे। इस प्रक्रिया में ढप के लघु रूप जैसे वाद्य भी वहाँ की लोकसंगीत परंपराओं का हिस्सा बन गए। यद्यपि समय और स्थान के अनुसार इनके स्वरूप में कुछ परिवर्तन हुए, तथापि इनके मूल गुण जैसे संरचना, ध्वनि और प्रयोग की विधि में उल्लेखनीय समानता बनी रही।

रोमा समुदाय में इस प्रकार के वाद्य का उपयोग लोकनृत्य के दौरान किया जाता है, जहाँ नर्तक या नर्तकी इसके साथ तालबद्ध होकर प्रदर्शन करते हैं। नृत्य के आरंभ से लेकर उसके चरम तक, वाद्य की ध्वनि और गति में निरंतर परिवर्तन होता रहता है, जो नृत्य की ऊर्जा और अभिव्यक्ति को सशक्त बनाता है। विशेष रूप से बाल्कन क्षेत्र के जिप्सी नृत्यों में यह वाद्य नृत्य की लय को बनाए रखने और वातावरण को सजीव बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

इस प्रकार, यह वाद्ययंत्र भारतीय कालबेलिया और रोमा दोनों समुदायों में नाम, आकार, ध्वनि तथा प्रयोग की दृष्टि से समान रूप से विद्यमान है। यह समानता केवल संयोग नहीं, बल्कि ऐतिहासिक सांस्कृतिक आदान-प्रदान का परिणाम है, जो मानव प्रवास के साथ विकसित हुआ। अतः यह वाद्य न केवल एक ताल उपकरण है, बल्कि यह भारतीय और रोमा समुदायों के बीच सांस्कृतिक संबंध, परंपरा की निरंतरता और लोककला की वैश्विक यात्रा का सशक्त प्रमाण भी प्रस्तुत करता है।

ढ़ोलक



ढ़ोलक, स्रोत: रिमझिम सिन्हा, 2021

ढोलक, ढोल का एक विकसित एवं लघु रूप है, जो भारतीय लोकसंगीत में अत्यंत महत्वपूर्ण ताल वाद्य के रूप में प्रतिष्ठित है। इसका निर्माण बेलनाकार लकड़ी के खोखले ढाँचे पर दोनों ओर चमड़ा मढ़कर किया जाता है। इन चमड़ों को डोरियों अथवा कड़ियों (रिंग्स) के माध्यम से कसकर स्वर नियंत्रित किए जाते हैं। ढोलक को दोनों हाथों से बजाया जाता है, जिसमें एक ओर से गंभीर (बेस) ध्वनि और दूसरी ओर से तीव्र (ट्रेबल) ध्वनि उत्पन्न होती है। इसकी यह द्विपक्षीय ध्वनि संरचना इसे अत्यंत बहुमुखी और लयात्मक बनाती है।

ऐतिहासिक दृष्टि से ढोलक का विकास प्राचीन भारतीय ढोल से हुआ माना जाता है, जिसका उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों, लोकनृत्यों और उत्सवों में किया जाता था। समय के साथ अधिक सुविधाजनक, पोर्टेबल और विविध लयों के अनुकूल वाद्य की आवश्यकता के कारण ढोलक का स्वरूप विकसित हुआ। मध्यकालीन काल तक यह उत्तर भारत, राजस्थान, पंजाब, महाराष्ट्र तथा अन्य क्षेत्रों में लोकसंगीत का अभिन्न अंग बन चुकी थी। कालबेलिया समुदाय में ढोलक का विशेष महत्व है, जहाँ यह नृत्य और गीतों के साथ ताल प्रदान करती है। कालबेलिया नृत्य की लचकदार गतियों और तीव्र लय को बनाए रखने में ढोलक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है।

रोमा (जिप्सी) समुदाय के संदर्भ में, इतिहासकारों का मत है कि उनका मूल भारतीय उपमहाद्वीप से जुड़ा हुआ है। मध्यकालीन काल में जब रोमा समुदाय का पश्चिम की

ओर प्रवास हुआ, तब वे अपने साथ संगीत परंपराएँ और वाद्ययंत्र भी लेकर गए। इसी सांस्कृतिक प्रवाह के परिणामस्वरूप ढोलक और उससे मिलते-जुलते वाद्य यूरोप और विशेष रूप से बाल्कन क्षेत्र तक पहुँचे। वहाँ इन वाद्यों ने स्थानीय संगीत परंपराओं के साथ मिलकर नए रूप ग्रहण किए।

यूरोपियन और बाल्कन संगीत में "दौलि" (Daouli) या "दवुल" (Davul) नामक ड्रम प्रचलित है, जो संरचना और उपयोग की दृष्टि से भारतीय ढोल के समान माना जाता है। यह बड़े आकार का द्विपक्षीय ड्रम होता है, जिसे छड़ी या हाथों से बजाया जाता है और यह लोकनृत्यों तथा उत्सवों में प्रमुख भूमिका निभाता है। रोमा संगीत में यह वाद्य ताल और ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। इसी प्रकार, मध्य-पूर्व और बाल्कन क्षेत्र में "दरबुका" (Darbuka) नामक एकल-मुखी ड्रम भी प्रचलित है, जिसे कुछ संदर्भों में जिप्सी कलाकारों द्वारा प्रयोग किया जाता है। यद्यपि दरबुका संरचना में ढोलक से भिन्न है, तथापि ताल और लय की दृष्टि से इसका उपयोग समान सांस्कृतिक संदर्भों में होता है।

रशियन जिप्सी और अन्य रोमा नर्तकों द्वारा ढोलक, तबला या दरबुका जैसे वाद्यों का प्रयोग नृत्य के साथ किया जाता है, जहाँ इनकी लय नृत्य की गति, भाव और अभिव्यक्ति को सशक्त बनाती है। यह परंपरा भारतीय कालबेलिया नृत्य के समान है, जहाँ ढोलक की ताल पर नर्तक-नर्तकियाँ अपने शरीर की गतियों को नियंत्रित करते हैं।

इस प्रकार, ढोलक केवल एक ताल वाद्य नहीं है, बल्कि यह भारतीय और रोमा दोनों समुदायों के बीच सांस्कृतिक निरंतरता और ऐतिहासिक संबंध का प्रतीक है। इसके रूप, ध्वनि और प्रयोग में जो समानताएँ दिखाई देती हैं, वे इस तथ्य को स्पष्ट करती हैं कि संगीत और वाद्ययंत्र मानव प्रवास के साथ विभिन्न संस्कृतियों में फैलते और विकसित होते हैं। ढोलक, ढोल, दौलि और दरबुका जैसे वाद्य इस सांस्कृतिक आदान-प्रदान के जीवंत उदाहरण हैं, जो आज भी लोकसंगीत और नृत्य परंपराओं में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

खड़ताल



ढ़ोलक, स्रोत: रिमझिम सिन्हा, 2021

खड़ताल भारतीय लोकसंगीत की एक प्राचीन और अत्यंत महत्वपूर्ण ताल वाद्य परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है, जिसका उपयोग विशेष रूप से भजन, कीर्तन और लोकगीतों में किया जाता रहा है। "खड़ताल" शब्द संस्कृत के "कर" (अर्थात् हाथ) और "ताल" (अर्थात् लय या ताली) से मिलकर बना है, जो इसके प्रयोग और स्वरूप को स्पष्ट करता है। यह वाद्य सामान्यतः लकड़ी या धातु की बनी पट्टियों अथवा प्लेटों से निर्मित होता है, जिन्हें हाथों से आपस में टकराकर बजाया जाता है। इन पट्टियों के बीच लगी धातु की डिस्क या झंकार उत्पन्न करने वाले तत्व "झन-झन" या "खन-खन" जैसी मधुर और लयात्मक ध्वनि पैदा करते हैं। यह ध्वनि केवल ताल प्रदान नहीं करती, बल्कि संगीत की गति, भाव और अभिव्यक्ति को भी सशक्त बनाती है।

खड़ताल का प्रयोग भारतीय लोक और भक्ति संगीत में अत्यंत व्यापक रहा है, जहाँ यह गायक और नर्तक के साथ लय बनाए रखने का कार्य करता है। इसकी सरल संरचना और प्रभावशाली ध्वनि इसे जनसाधारण के बीच लोकप्रिय बनाती है। विशेष रूप से राजस्थान, गुजरात और उत्तर भारत के अन्य क्षेत्रों में यह वाद्य लोकजीवन का अभिन्न अंग है, जहाँ इसके माध्यम से संगीत और भक्ति का सहज संप्रेषण होता है।

यूरोपीय संगीत परंपरा में खड़ताल के समरूप एक वाद्य "कैस्टनेट" (Castanet) पाया जाता है, जिसका उपयोग विशेष रूप से स्पेन के फ्लेमेंको नृत्य में किया जाता है। कैस्टनेट भी हाथों में पकड़कर बजाया जाने वाला एक ताल वाद्य है, जिसमें दो

छोटे खोल या प्लेटें होती हैं, जिन्हें उंगलियों से टकराकर लय उत्पन्न की जाती है। खड़ताल और कैस्टनेट के बीच संरचनात्मक और प्रयोगात्मक समानता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, यद्यपि दोनों की बनावट और ध्वनि की सूक्ष्मता में क्षेत्रीय भिन्नताएँ मौजूद हैं।

जब भारतीय और रोमा (जिप्सी) संगीत परंपराओं की तुलना की जाती है, तो यह स्पष्ट होता है कि दोनों में लय, ध्वनि और भावनात्मक अभिव्यक्ति का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। रोमा संगीत, जो ऐतिहासिक रूप से भारतीय उपमहाद्वीप से जुड़े प्रवास का परिणाम माना जाता है, यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में विकसित हुआ, किंतु उसमें भारतीय संगीत के कई मूल तत्व संरक्षित रहे। रोमा संगीत में भी ताल वाद्यों का प्रयोग नृत्य और गायन के साथ भाव और ऊर्जा को अभिव्यक्त करने के लिए किया जाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे भारतीय परंपरा में खड़ताल का उपयोग होता है।

भारतीय संगीत में "राग" और "ताल" की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण है, जहाँ प्रत्येक स्वर और लय का एक निश्चित भाव और संरचना होती है। इसी प्रकार, रोमा संगीत में भी लय और ध्वनि का विशिष्ट महत्व है, जहाँ प्रत्येक ताल नृत्य और अभिव्यक्ति से गहराई से जुड़ी होती है। दोनों परंपराओं में संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि भावनाओं, कथाओं और सांस्कृतिक अनुभवों की अभिव्यक्ति का माध्यम है।

अतः खड़ताल और कैस्टनेट जैसे वाद्ययंत्रों के बीच पाई जाने वाली समानताएँ केवल संरचनात्मक या ध्वन्यात्मक नहीं हैं, बल्कि वे एक व्यापक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संबंध को भी दर्शाती हैं। भारतीय और रोमा संगीत परंपराओं में जो समानताएँ दिखाई देती हैं—चाहे वह ध्वनि की गहराई हो, लय की जटिलता हो या भावनात्मक अभिव्यक्ति—वे इस तथ्य की पुष्टि करती हैं कि संगीत एक सार्वभौमिक भाषा है, जो भौगोलिक सीमाओं से परे जाकर विभिन्न संस्कृतियों को आपस में जोड़ती है।




Mancho kamburav,pirin pee,1985

रोमानी संगीत की संस्कृतियाँ

पूर्वी (ओरिएंटल) संगीत संस्कृति: तुर्की शासन के समय विकसित हुई, मेलों और उत्सवों में बजाई जाती थी।

मध्य यूरोपीय संगीत संस्कृति: हंगेरियन संगीत और धुनों का प्रभाव।

प्राचीन बाल्कन संगीत संस्कृति: अल्बानियाई, रोमानी याई, ग्रीक और दक्षिण स्लाव संगीत का मिश्रण।

जिप्सी संगीत संस्कृति: पारिवारिक और समूह आधारित गीत और लोक-कविता, जो निजी और सार्वजनिक दोनों वातावरण में गाए जाते थे।

रोमा कविता में आज भी करुणा के भाव देखने को मिलते हैं। कविता के भाव अत्यंत मार्मिक होते हैं।

Roma Anthem

OPRE ROMA

Gelem, gelem, lungone dromensa
Maladilern baktale Romensa
A Romale katar tumen aven
E tsarensa baktale dromensa
A Romale, a chavale

Vi man sas bari familija
Mudardas la e kali legija
Aven mensa sa lumniake Roma
Kai putaile e Romane droma
Ake viama, ushti Rom akana
Amen hutasa mishto kai akana
A Romale, a chavale

गेलेम, गेलेम लुंगोने द्रोमेंसा- मैं चला, मैं चला, लंबी राहों पर
अंदे मुरो इलो सास बारो दुख - मेरे दिल में गहरा दुख भरा था
दीख्ल्योम रोमानो चावोरे थाज छाजोरे - मैंने रोमा बच्चों और युवाओं को देखा
फिरेनास येखथाने, अंदे आशा- जो साथ-साथ चलते थे, उम्मीद लिए
सास आमेन बारे फ़ामिलिया-कभी हमारे बड़े-बड़े परिवार थे
त्रायो सास स्लोबोदो अंदे पत्रा - खुले मैदानों में आज़ादी से जीवन था
स्लोबोदिया सास आमारी फेन - आज़ादी हमारी बहन थी
मा ओया लुम्या मार्दा आमेन - लेकिन इस दुनिया ने हमें कुचल दिया
छोरदा आमारो नाम थाज त्रायो - हमारा नाम और जीवन छीन लिया
दुख, मारिपेन, अंधो रात - दुख, हिंसा और अंधेरी रातें
मा अकाना! अकाना आविलो व्रामा -लेकिन अब — अब समय आ गया है
ओप्रे रोमा! उश्तास येखथाने - उठो रोमा! एक साथ उठो!
ते ना मुखास आमारी चिब - अपनी भाषा को मत छोड़ो
ते ना भूलास आमारो द्रोम- अपना रास्ता मत भूलो
केरास नवो द्रोम, येखथाने- आओ, मिलकर नया रास्ता बनाएं
अंदे पाचिव, ज़ोर थाज स्लोबोदिया-सम्मान, शक्ति और आज़ादी के साथ
ओप्रे रोमा! ओप्रे युथाने-उठो रोमा! उठो नौजवानो!

यह गीत रोमा समुदाय के जीवन-संघर्ष की आत्मा है। यह केवल चलने-फिरने या भटकने की कहानी नहीं, बल्कि उस पीड़ा का दस्तावेज़ है जिसे रोमा लोगों ने पीढ़ियों तक झेला और आज भी संघर्षरत है। समय की लंबी नदी के किनारे, जहाँ स्मृतियाँ संगीत बन जाती हैं और इतिहास नृत्य करने लगता है, वहीं से रोमा कला की कथा शुरू होती है।

दशकों की यात्रा में इस परंपरा ने स्वयं को बार-बार गढ़ा, सँवारा और फिर नए रूप में प्रस्तुत किया। उस यात्रा में एक अनोखा दृश्य भी था—युगोस्लाविया के प्रसिद्ध गणितज्ञ मिहाइलो पेट्रोविच, जिन्हें लोग प्रेम से ‘मिका अलास’ कहते थे, वायलिन को कंधे से लगाकर मंच पर खड़े थे। गणित के सूत्रों के बीच से निकलकर उनकी उँगलियाँ लोकधुनों में बह जाती थीं। कभी चार सौ से अधिक गोल नृत्य लोकजीवन की धड़कन हुआ करते थे। समय ने उनमें से अधिकांश को अपने साथ बहा लिया, और बीसवीं सदी के तीसरे दशक तक सौ से भी कम नृत्य जीवित रह पाए। फिर भी जो बचे, वे साधारण नहीं थे। ओरा-नृत्य केवल कदमों की लय नहीं थे—वे स्मृति, समुदाय और आत्मा की अभिव्यक्ति थे। कोबान्स्को ओरा, वुजिचिनो कोलो, करामानोवो कोलो, स्वेती पावले—आज ये नाम जैसे किसी भूली हुई भाषा के शब्द हों, पर कभी इनसे जनसमूह में उत्साह की लहर दौड़ जाती थी।

रोमा संगीत ने कभी किसी सीमा को स्वीकार नहीं किया। वह युगोस्लाविया से निकलकर संसार भर में फैल गया। भारत में रेश्मा की आवाज़ ने लोगों के दुःख-सुख को अपना बना लिया। राया ने नृत्य को ऐसा रूप दिया कि मंच पर हर गति एक कथा बन गई। रोमा लोग केवल कलाकार नहीं थे—वे रंगों के कारीगर थे, रेखाओं के चित्रकार थे, और जीवन के सौंदर्य के सजग रक्षक थे।

मॉस्को का जिप्सी थिएटर “रोमेन” इस जीवित परंपरा का मंदिर था। वहाँ लोककथाएँ मंच पर साँस लेती थीं, गीत शब्दों से आगे निकल जाते थे और नृत्य समय को थाम लेता था। 1930 के दशक में शुरू हुआ यह थिएटर केवल मनोरंजन का स्थल नहीं रहा—वह एक सांस्कृतिक प्रयोगशाला बन गया। पहले गीत और नृत्य ही कथा थे, फिर इतिहास ने दस्तक दी। पुश्किन, गोरकी, कुप्रिन, विक्टर ह्यूगो—सब रोमा रंगों में

ढलकर मंच पर उतरे। *एस्मेराल्डा* केवल एक पात्र नहीं रही, वह रोमा स्त्री की आत्मा बन गई।

युद्ध से पहले, जब दुनिया भय की छाया में थी, उसी समय इस थिएटर ने गार्सिया लोर्का के नाटकों को मंच दिया। *ब्लड वेडिंग* में प्रेम और मृत्यु एक-दूसरे से लिपट गए, और द *प्रोडिजियस शोमेकर 'स वाइफ* में लोकजीवन की चंचलता चमक उठी। *कारमेन* का मंचन जैसे आग और संगीत का संगम था।

इस थिएटर की अभिनय शैली अनोखी थी। यहाँ कला के विभाग नहीं थे—यहाँ कला स्वयं एक देह थी। अभिनेता बोलते-बोलते गाने लगते, गाते-गाते नाच उठते। संवाद शब्दों तक सीमित नहीं रहते—वे लय में बदल जाते। साठ कलाकारों के दल में केवल सात रोमा थे, फिर भी पूरी आत्मा रोमा थी। ऑर्केस्ट्रा की हर धुन, गिटार की हर झंकार, उसी आत्मा से निकली थी।

थिएटर का विद्यालय नई पीढ़ी को केवल तकनीक नहीं सिखाता था, बल्कि संवेदना भी देता था। विद्यार्थियों को यह समझाया जाता था कि कला केवल मंच पर नहीं, बल्कि जीवन में भी होती है। रोमानी याई, हंगेरियन और स्पेनी रोमा संगीत यहाँ ऐसे गूँजता था, जैसे संसार एक ही गाँव हो। कभी-कभी मंच पर एक रूसी विदूषक आ जाता। वह हँसी में कला को छूने की कोशिश करता, और दर्शक समझ जाते कि जो सरल दिखता है, वह साध्य नहीं होता। अंत में, रूसियों और रोमा कलाकारों का हाथों में हाथ डालकर घूमना केवल एक नाटकीय दृश्य नहीं था—वह मनुष्यता की एक चुप घोषणा थी।

फिर भी, मंच की रोशनी से परे की दुनिया उतनी उदार नहीं थी। रोमा संस्कृति को लेकर अनगिनत भ्रांतियाँ फैली हुई थीं। प्रोफेसर हैनकॉक के शब्दों में—इनमें से आधी भ्रांतियाँ रोमा समाज की आत्म-रक्षा की प्रवृत्ति से जन्म लेती हैं, और आधी बाहरी समाज की कल्पनाओं से। लोग रोमा को देखते हैं और उन्हें अपनी धारणाओं में गढ़ लेते हैं, फिर उसी गढ़े हुए रूप को सत्य मान लेते हैं।

जबकि सच इससे कहीं अधिक गहरा और जीवंत है। रोमा केवल भटके हुए लोग नहीं हैं। वे स्मृति हैं, वे संगीत हैं, वे निरंतर गतिमान संस्कृति हैं। वे उस इतिहास का नाम हैं जो काग़ज़ों पर नहीं लिखा जाता—बल्कि गीतों में गूंजता है, नृत्यों में बहता है, और पीढ़ी दर पीढ़ी हृदयों में सहेज लिया जाता है।

देह, ध्वनि और समय : नृत्य और वाद्ययंत्र

नृत्य और वाद्ययंत्र को यदि केवल कलात्मक अभिव्यक्तियाँ माना जाए, तो वे अपने सबसे गहरे अर्थ से रिक्त हो जाते हैं। वे वस्तुएँ नहीं हैं, न ही मात्र कौशल; वे ऐसी प्रक्रियाएँ हैं जिनमें देह और समय एक-दूसरे में प्रवेश करते हैं। ध्वनि यहाँ सुनी नहीं जाती—वह घटित होती है। देह यहाँ चलती नहीं—वह स्मृति को रूप देती है।

वाद्ययंत्र किसी ध्वनि का स्रोत नहीं, बल्कि समय को बाँधने की तकनीक है। वह लय के माध्यम से क्षणों को क्रम देता है और इस क्रम में अतीत को वर्तमान में आमंत्रित करता है। जब कोई वाद्य बजता है, तो वह अकेले नहीं बजता; उसमें उन सभी देहों का अवशेष बोलता है जिन्होंने पहले उसे स्पर्श किया था। इस अर्थ में वाद्ययंत्र स्मृति का भौतिक रूप है—एक ऐसा माध्यम जिसमें इतिहास ध्वनि बनकर लौटता है।

नृत्य इस ध्वनि का अनुसरण नहीं करता; वह उसका प्रतिपक्ष है। नृत्य ध्वनि को चुनौती देता है, मोड़ता है, कभी उससे आगे निकल जाता है और कभी उससे पीछे रह जाता है। यह अंतराल—ध्वनि और देह के बीच का—ही अर्थ का वास्तविक स्थान है। नृत्य इसी अंतराल में जन्म लेता है।

यहाँ इम्प्रोवाइज़ेशन को स्वतंत्रता के रोमांटिक रूप में नहीं समझा जा सकता। इम्प्रोवाइज़ेशन नियंत्रण की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि स्मृति का गहनतम अनुशासन है। देह वही कर सकती है जो वह पहले से जानती है—पर यह ज्ञान न तो भाषा में है, न ही सिद्धांत में। यह ज्ञान देह में जम चुका है, समय की तरह।

इम्प्रोवाइज़ेशन इसलिए विचार का विरोध नहीं करता; वह विचार का एक अन्य रूप है। यह ऐसा चिंतन है जो शब्दों से पहले घटित होता है। जब देह “निर्णय” लेती है, तो वह तर्क के माध्यम से नहीं, बल्कि लय के माध्यम से लेती है। यह लय किसी

बाहरी संरचना से नहीं आती; वह देह और ध्वनि के ऐतिहासिक सहवास से उत्पन्न होती है।

नृत्य और वाद्ययंत्र के इस सहवास में पहचान स्थिर नहीं रहती। पहचान यहाँ कोई पूर्व-निर्धारित सार नहीं, बल्कि एक प्रक्रिया है—ऐसी प्रक्रिया जो केवल प्रदर्शन के क्षण में साकार होती है। मंच, अनुष्ठान या उत्सव पहचान को दर्शाते नहीं; वे उसे पैदा करते हैं। पहचान यहाँ होना नहीं, बनना है।

इस प्रक्रिया में सत्ता भी निहित है, पर वह स्पष्ट नहीं होती। वह चयन में है—कौन सी ध्वनि रखी जाए, कौन सी गति दोहराई जाए, और किस क्षण मौन को स्थान दिया जाए। मौन भी यहाँ रिक्त नहीं है; वह ध्वनि की राजनीति का हिस्सा है।

औपनिवेशिक दृष्टियाँ इस जटिलता को समझने में असफल रहीं, क्योंकि उन्होंने नृत्य और संगीत को वस्तु की तरह देखा—संरक्षित करने योग्य, वर्गीकृत करने योग्य, और "मूल" रूप में स्थिर करने योग्य। पर जो परंपरा इम्प्रोवाइज़ेशन पर जीवित है, उसे स्थिर करना ही उसका निषेध है। उसे लिखना, उसे बाँधना, उसे फ्रेम में रखना—यह सब उसके समय को छीन लेना है।

नृत्य और वाद्ययंत्र का सत्य किसी संग्रहालय में नहीं मिलता। वह केवल घटित होता है—हर बार अलग, हर बार अस्थायी, और हर बार पूर्ण। यही अस्थायित्व उसकी शक्ति है।

अंततः, नृत्य और ध्वनि हमें यह नहीं सिखाते कि संस्कृति क्या है। वे यह दिखाते हैं कि संस्कृति कैसे होती है—देह में, समय में, और उस क्षण में जहाँ स्मृति भविष्य का रूप लेने लगती है।

अध्याय - 7
रोमानी नृत्य में भारतीय तत्वों का समावेश

रोमानी (Gypsy) नृत्य में भारतीय तत्वों की उपस्थिति उनके समृद्ध इतिहास, जीवंत भाषा और रंगीन संस्कृति से गहराई से जुड़ी हुई है। रोमानी समुदाय मूल रूप से उत्तर भारत के राजस्थान, पंजाब और सिंध क्षेत्रों से लगभग 1000 साल पहले यूरोप की ओर प्रवास कर गए थे जैसा कि ऊपर स्पष्ट की गया है। इस प्रवास के दौरान उन्होंने अपने सांस्कृतिक मूल्यों और परंपराओं को पूरी तरह नहीं छोड़ा। नतीजतन, रोमानी नृत्य में आज भी भारतीय लोक और शास्त्रीय नृत्यों के प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

रोमानी नर्तकों के हाथों और पैरों की मुद्राएँ, उनके अभिव्यक्तिपूर्ण चेहरे के भाव, और तेज़ तथा सुरुचिपूर्ण घूमाव भारतीय शास्त्रीय नृत्यों जैसे कथक और लोक नृत्यों जैसे घूमर की याद दिलाते हैं। उनके नृत्य में ताल और लय का विशेष महत्व है, जिसमें पैरों की थाप और तालबद्ध गति दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर देती है।

रोमानी नृत्य की विशेषता इसका मुक्त और सहज रूप है। नर्तक भावनाओं को पूरी स्वतंत्रता के साथ व्यक्त करते हैं, खुशी, प्रेम, पीड़ा, और उत्साह सभी उनके शरीर और चेहरे के भावों में प्रकट होते हैं। रंग-बिरंगे परिधान, घेरदार स्कर्ट, चमकीले गहने और दुपट्टे नृत्य को और भी आकर्षक बनाते हैं। यह नृत्य केवल दृश्य मनोरंजन ही नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक कथा भी प्रस्तुत करता है, जो उनके भारतीय मूल और यूरोप में विकसित हुई परंपराओं का संगम है।

रोमानी नृत्य केवल एक नृत्य शैली नहीं है, बल्कि यह भारतीय सांस्कृतिक विरासत का दूरस्थ प्रतिबिंब है। यह दिखाता है कि कैसे समय और दूरी के बावजूद भी भारतीय कला और संस्कृति ने अपनी पहचान बनाए रखी, और यूरोप तक पहुँचकर भी अपनी मूल छाप छोड़ी। रोमानी नृत्य हमें यह भी याद दिलाता है कि कला, भाषा और

संस्कृति की धारा सीमाओं को पार कर सकती है और विश्वभर में अपनी सुंदरता और जीवन्तता बनाए रख सकती है।

भारतीय नृत्य परंपरा

नृत्य मानव समाज की प्राचीनतम कलाओं में से एक है, जो हर सभ्यता और संस्कृति में किसी न किसी रूप में विद्यमान है। इसकी प्राचीनता और उद्भव के संबंध में कहा जा सकता है कि मानव अपने हर्ष को अपरिमार्जित, अपरिष्कृत आंगिक क्रियाओं के माध्यम से व्यक्त करता था। कालांतर में, यह परिमार्जित, परिष्कृत होकर कला रूप में विकसित हुआ, इसके विधान और प्रारूप निर्धारित किये गये। स्पष्ट है कि नृत्य, मानव सभ्यता के प्रारंभिक काल से ही, भावनाओं, विचारों और जीवन के अनुभवों को व्यक्त करने का सहज, सरस और स्वाभाविक साधन रहा है। यह एक सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है, जो मानव के आंतरिक आनंद, उत्साह, और उमंग को आंगिक गतियों के माध्यम से प्रदर्शित/प्रकट करता है।

इसमें शारीरिक गति, ताल, संगीत और भावनाओं का संगम होता है, जिसके द्वारा विचार, भावनाएँ और मान्यताएँ अभिव्यक्त होती हैं। इस रूप में यह सांस्कृतिक और मानसिक अभिव्यक्ति का साधन है और आह्लाद की सबसे सहज, सरस और आदिम अभिव्यक्ति है। इसके माध्यम से व्यक्ति अपनी भावनाओं, विचारों, और जीवन के अनुभवों को शारीरिक रूप से भाव-भंगिमाओं, अंग, प्रत्यंग और उपांग के संचालन व परिचालन से प्रकट करता है। दूसरे शब्दों में, यह शारीरिक मुद्राओं, ताल और संगीत के साथ भावनाओं और कहानियों की अभिव्यक्ति का एक कलात्मक रूप है। यह एक सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक या व्यक्तिगत गतिविधि के रूप में प्राचीन काल से ही मानव समाज का अभिन्न अंग रहा है। नृत्य केवल एक कला रूप नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक प्रक्रिया भी है, जिसमें व्यक्ति अपनी आत्मा की गहराइयों से जुड़ता है; नृत्य न केवल व्यक्तिगत आनंद का साधन है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक एकजुटता का भी प्रतीक है।

नृत्य की ऐतिहासिकता और प्राचीनता पर विचार करें तो स्पष्ट होता है कि नृत्य का इतिहास लगभग उतना ही पुराना है जितना मानव सभ्यता का। कला रूप में विकसित होने के उपरांत, प्राचीन काल में, नृत्य न केवल मनोरंजन का साधन रहा, बल्कि यह धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक समारोहों का भी महत्वपूर्ण हिस्सा बना। भारत में नृत्य का प्राचीन इतिहास हमें कई पौराणिक कथाओं और ग्रंथों में मिलता है। 'नाट्यशास्त्र' में नृत्य के विभिन्न प्रारूपों और उनके महत्व का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसमें नृत्य को 'पंचम वेद' का दर्जा दिया गया है, जो इसके आध्यात्मिक और सांस्कृतिक महत्व को दर्शाता है। नृत्य के सामान्य वर्गीकरण पर विचार करें तो इसे दो वर्गों में बाँटा जा सकता है—लोक नृत्य और शास्त्रीय नृत्य।

लोक नृत्य

लोक नृत्य लोक का नृत्य है और इसमें लोक की सामूहिकता और साझी भावना होती है। इस कारण यह सामूहिक रूप से प्रदर्शित किया जाता है। इसमें लोक मुक्त होकर अपने भावों को कुछ निश्चित आंगिक क्रियाओं—अंग, प्रत्यंग, उपांगों संचालन के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इस पर स्थानीयता का प्रभाव होता है और इसी प्रभाव के कारण लोक नृत्य स्थान विशेष की पहचान के रूप में भी जाना जाता है। इसके लिए कोई विशेष विधान या औपचारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था नहीं है।

यह भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो हर क्षेत्र और समुदाय की विशेषताओं, रीति-रिवाजों और परंपराओं को व्यक्त करता है। भांगड़ा, गरबा, लावणी, बिहू, सपेरा या कोबरा जैसे लोक नृत्य लोगों की सामूहिकता और उनके उत्सवधर्मी जीवन को प्रदर्शित करते हैं। इन नृत्यों में एक सामूहिक ऊर्जा और सामुदायिक भावना होती है, जो लोगों को एक साथ जोड़ती है।

शास्त्रीय नृत्य

शास्त्रीय नृत्य परिमार्जित और परिष्कृत नृत्य है। इसमें भावों को लोक नृत्य की भाँति मुक्तावस्था में अंग, प्रत्यंग, उपांगों संचालन के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं किया जाता है। इसका निश्चित विधान और प्रक्रिया है तथा औपचारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इसका प्रदर्शन इसमें प्रशिक्षित नर्तक/नर्तकी ही कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, लोक इसमें शामिल होकर सामूहिक रूप से इसे प्रदर्शित नहीं कर सकता। इसमें सुर-ताल का विशेष महत्व है।

यह केवल शारीरिक क्रियाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें आत्मा की शुद्धता और ईश्वर के प्रति समर्पण की भावना भी होती है। शास्त्रीय नृत्य, जैसे भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी, कुचिपुड़ी, मणिपुरी आदि धार्मिक और आध्यात्मिक कथाओं का नृत्यात्मक प्रस्तुतीकरण है। इन नृत्यों में मुद्राओं और भावों के माध्यम से कहानियों का वर्णन किया जाता है, जो नर्तक और दर्शक के बीच एक गहरे भावनात्मक और आध्यात्मिक संबंध का निर्माण करता है।

यूरोप में रोमा जिप्सी नृत्य का आगमन

चौदहवीं शताब्दी में रोमा जिप्सी नृत्य का आगमन बाल्कन देशों में हुआ। जेलेना वोरोवि[xxi17] (2009: 9) बताती हैं कि 'सर्बिया में 'जिप्सियों' का आगमन 1348 में हुआ था। वहीं ओट्टोमन (उस्मानिया) शासन के अंतर्गत सर्बिया तथा अन्य दक्षिण स्लाविक में 'जिप्सियों' ने एक अलग जातीय समूह का गठन किया, जिसमें वे अलग-अलग मोहल्लों, कस्बों तथा गाँवों में रहने लगे। वोरोविक विश्वविद्यालय[18] के आधिकारिक आँकड़ों के अनुसार सर्बिया में लगभग 149000 रोमा रहते हैं, जो कुल सर्बियाई आबादी का 2% है। सिविल राइट डिफेंडेर्स द्वारा नवंबर 2017 में प्रकाशित 'The Wall of Anti Gypsyism Roma in Serbia: Roma in the

[17] Čvorović, Jelena. (2009). Serbian Gypsy Narrative: Between Preferred and True Identity. Oral History Review. 36. 10.1093/ohr/ohn058.

[18] https://pavaedu.com/en/roma-tre-university/

Republic of Serbia[19], शीर्षक रिपोर्ट बताती है कि 2011 की जनगणना के अनुसार सर्बिया में 147604 रोमा रहते हैं[20]। इसके साथ ही यह रिपोर्ट बताती है कि सर्बिया में रहने वाले रोमा की वास्तविक संख्या का निर्धारण कठिन है। इनकी वास्तविक संख्या 250000 से 600000 बीच है[21]। अन्य अनुमान बताते हैं कि अनौपचारिक बस्तियों में कम से कम 500000 अपंजीकृत रोमा रहते हैं और गौरतलब यह है कि इन्होंने आज भी भारतीय संस्कृति को सँजोए रखा है। यूगोस्लाविया के टूटने के बाद, पूर्वी छह गणराज्य कई अलग-अलग देशों में विभाजित हो गए, जिस कारण यहाँ जीवनयापन कर रहे जातीय अल्पसंख्यकों ने अपने आपको एक नई और कठिन सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थिति में पाया। यहीं से रोमा परिवारों का विस्थापन कई देशों में शुरू हुआ। फलस्वरूप, रोमा नृत्य, संगीत और संस्कृति अब बाल्कन क्षेत्र तक ही सीमित नहीं थे, बल्कि, उनकी कला और संस्कृति अब अन्य नए मेजबान देशों में विकसित होने शुरू हो गए। प्रो. मार्सल कौरथियदे[22,23] एक भाषा वैज्ञानिक हैं। उनका मानना है कि 1018 ई. में महमूद गजनी द्वारा रोमा लोगों को हजारों की संख्या में गुलाम बनाकर भारत से अफगानिस्तान लाया गया था, जिसमें शिल्पकार, मूर्तिकार, चित्रकार और नर्तकी/नर्तक शामिल थे और वे 15वीं शताब्दी तक के आस-पास यूरोप के विभिन्न देशों में पलायन कर गए। विचारणीय यह है कि कई शताब्दियों के बाद आज भी रोमा लोगों में भारतीय संस्कृति की झलक देखने को मिलती है, जैसे राजस्थानी जिप्सी लोक नृत्य, कालबेलिया, कथक की झलक रोमा जिप्सी नृत्य में देखने को

[19] https://crd.org/wp-content/uploads/2018/03/The-Wall-of-Anti-Gypsyism-Roma-in-Serbia.pdf

[20] Government of the Republic of Serbia, Answer to the Questionnaire of the UN Special Rapporteur on Minority Issues, Belgrade, April 2015

[21] Estimates on Roma population in European countries. Retrieved on February 14, 2023 from: http://www.coe.int/de/web/portal/roma

[22] Courthiade, Marcel. (2016). Knowledge Based on Sources and Historical Data Versus Knowledge Based on Clichés and Legends in the Indian Stage of Rromani History. Analele Universităţii Ovidius din Constanţa. Seria Filologie. Issue No. 2, pp. 237-282.

[23] Cortiade, Marcel. (2002). The Rromani People's Origins. Chronicles and Legends. Paris: INALCO.

मिलती है। **सईदा कासिम** एक रशियन (रूसी) जिप्सी अध्यापिका तथा कुशल नर्तकी हैं। वह Yagorri (The Gypsy Dance) कंपनी लंदन में चलाती हैं। वह बताती हैं कि रूस में जिप्सी नृत्य के आगमन का कोई लिखित दस्तावेज़ उपस्थित नहीं है। परंतु, **सईदा** का मानना है कि सर्वप्रथम जिप्सी नृत्य का आगमन मध्य पूर्वी देशों से प्रारंभ होकर यूरोप में विकसित हुआ और धीरे-धीरे पूरे यूरोप में जिप्सी नृत्य की लोकप्रियता बढ़ती चली गयी।

बेल्जियम संग्रहालय में सुसज्जित पेंटिग जिसे *'टुर्नाई टेपेस्ट्री'* के नाम से जाना जाता है, पहली जिप्सी नर्तकी की पेंटिंग है, जिसका प्रमाणित उल्लेख जियोर्जियोन की जिप्सी एंड सोल्जर की पेंटिंग (1510) एवं गारोफालो और कोरेंगियो की पेंटिंग (1525) में मिलता है। *टुर्नाई टेपेस्ट्री* पहली प्रसिद्ध जिप्सी नर्तकी है, जिसका साक्ष्य कई संग्रहालयों में उपलब्ध है।[24] कई प्रचलित इतिहासकारों एवं विद्वानों का मानना है कि जिप्सी नृत्य का मूल निवासी भारत से संबंधित था। मैडोना एक प्रसिद्ध नर्तकी हैं। वह 1530 के दस्तावेज[25] के आधार पर रोमा को भारतीय मानती हैं।



जिप्सी नर्तकी टुर्नाई टेपेस्ट्री 15वीं शताब्दी, स्रोत : गैस्बेक संग्रहालय, बेल्जियम

[24]जिप्सी नर्तकी टुर्नाई टेपेस्ट्री 15वीं शताब्दी, गैस्बेक संग्रहालय, बेल्जियम
[25]सैक्सोनी (फ्रैंकफर्ट) ने क्रांत्ज़, रेरम जर्मेनिकारम हिस्टोरिकी क्लेरिस पुस्तक।

अठारहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक रोमा समुदाय की स्त्रियाँ और पुरुष पेशेवर नर्तक के रूप में कार्य करते थे। इन्हें अभिजात वर्ग, राजदरबारों तथा सैन्य प्रतिष्ठानों में नियुक्त किया जाता था (And 1959, 1963–64: 26–28)। व्यावसायिक पुरुष नर्तकों को *köçek* (या *raqq*) कहा जाता था, जबकि स्त्री नर्तकियों को *çengi* कहा जाता था। यद्यपि व्यवहार में *çengi* शब्द का प्रयोग प्रायः दोनों लिंगों के कलाकारों के लिए किया जाने लगा (And 1976:138)।

समय के साथ *köçek* शब्द केवल नर्तक तक सीमित न रहकर एक विशिष्ट संगीत-शैली और वादन-संगति का द्योतक बन गया। आगे चलकर यही शब्द सम्पूर्ण बाल्कन क्षेत्र में प्रचलित एक लास्यमय एकल-नृत्य शैली के लिए प्रयुक्त होने लगा, जिसे आज *čoček* (बल्गेरियाई: *kyuchek*) नृत्य के नाम से जाना जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन *çengi* नृत्य-परम्परा ने आधुनिक स्त्री-प्रधान पेशेवर उदर-नृत्य (बेली डांस) पर गहरा प्रभाव डाला, जो आज मिस्र, तुर्की और बाल्कन क्षेत्रों में लोकप्रिय है। साथ ही, विभिन्न बाल्कन समुदायों में प्रचलित एकल *čoček* नृत्य-परम्परा भी इसी सांस्कृतिक धारा से प्रभावित प्रतीत होती है।

तुर्की के संदर्भ में Seeman का मत है कि पेशेवर *çengi* नर्तकियों ने मिस्री शैली की देह-गतियों तथा अधिक संयोजित नृत्य-विन्यासों को अपनाया, जिसके परिणामस्वरूप "ओरिएण्टल" नामक नृत्य-शैली का विकास हुआ। इस्तांबुल के रोमा-बहुल उपनगरों, जैसे सुलुकुले, में *çengi* स्त्रियों को विवाह-समारोहों और पर्यटक-प्रदर्शनों में नृत्य हेतु आमंत्रित किया जाता था (Seeman 1998:3–5; Potuoğlu-Cook 2006, 2007)। Seeman यह भी उल्लेख करते हैं कि 1980 के दशक में स्कोपिये में एक पेशेवर रोमा नर्तकी थी, जिसे पुरुषों के उत्सवों में प्रदर्शन के लिए बुलाया जाता था।

इसी प्रकार Petan के अनुसार, 1980 के दशक के पूर्वार्द्ध में कोसोवो के पेक क्षेत्र में यह प्रथा प्रचलित थी कि स्त्री वाद्य-कलाकार पुरुष अतिथियों के समक्ष संक्षिप्त प्रस्तुति देती थीं तथा वादकों में से कोई एक व्यक्ति नृत्य भी करता था (1996a:317)। बुल्गारिया में 1884 के एक उत्तरी बुल्गारियाई *panair* (नगर-

महोत्सव) के व्यय-विवरण में स्त्री कलाकारों द्वारा प्रस्तुत *kyuchek* नृत्यों से अर्जित आय का उल्लेख मिलता है (Peycheva 1999a:41)। बाद के समय में, 1970 के दशक के आरम्भ में, तुर्की-भाषी रोमा क्लैरिनेट वादक Ivo Papazov ने विवाह-समारोहों में प्रस्तुति देने वाली पेशेवर रोमा नर्तकी Zvezda Saliyeva के साथ भी कार्य किया।

एक ओर *çengi* नर्तकियाँ अपनी संगीत-कुशलता, नृत्य-कौशल और सौन्दर्य के कारण प्रशंसित थीं, वहीं दूसरी ओर उनके कथित उच्छृंखल आचरण के कारण समाज में उनकी आलोचना भी होती थी। अनेक अवसरों पर उन्हें वेश्याओं के समकक्ष समझा जाता था। तुर्की गणराज्य के प्रारम्भिक काल, विशेषतः 1920 के दशक में, उदर-नृत्य को "घृणित कला" माना जाता था और इसे "पतित स्त्रियों" से जोड़ा जाता था। किन्तु 1980 में पहली बार दूरदर्शन पर इसके प्रसारण के बाद इसे पुनः सामाजिक स्वीकृति मिलने लगी। वर्तमान समय में उदर-नर्तकियाँ नियमित रूप से पर्यटन-प्रचार सामग्री में दिखाई देती हैं तथा भोजनालयों और उपाहार-गृहों के लिए आकर्षण एवं आय का महत्त्वपूर्ण स्रोत बन चुकी हैं (Öztürkmen 2001:143)।

Sugarman के अनुसार, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पूर्वी रूढ़िवादी दक्षिणी स्लावों के राष्ट्रवादी आंदोलनों ने मुस्लिम संस्कृति के कथित नैतिक पतन के विरुद्ध अभियान चलाया, जिसमें *çengi* नर्तकियों को उस पतन का प्रतीक माना गया (2003:101–102)। इस नवोदित राष्ट्रवादी विमर्श में रोमा समुदाय के विरुद्ध दोहरे पूर्वाग्रह कार्यरत थे,उन्हें एक ओर "मुस्लिम" और दूसरी ओर "जिप्सी" होने के कारण संदेह और तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता था।

रोमा समुदाय के प्रति समाज में व्याप्त दुष्प्रतिष्ठा का एक महत्त्वपूर्ण कारण उनकी जातीय पहचान भी थी। उनकी "रोमा" अथवा "जिप्सी" के रूप में पहचान ने सामाजिक पूर्वाग्रहों को और अधिक गहरा किया। इससे उनके जीवन में एक गहन विडम्बना उत्पन्न हुई। समाज के सीमांत पर स्थित और आर्थिक दृष्टि से वंचित समुदाय होने के कारण मनोरंजन तथा नृत्य-व्यवसाय उन थोड़े-से आजीविका साधनों

में थे, जिन्हें वे अपनाने में सक्षम थे; किन्तु यही व्यवसाय आगे चलकर उनके सामाजिक बहिष्कार और अपमान का कारण बन गया।

उनके प्रति जो अशिष्टता, उच्छृंखलता अथवा अनैतिकता की धारणाएँ निर्मित हुई, उन्हें गैर-रोमा समुदायों ने तत्कालीन उत्तर-उस्मानी समाज की जटिल सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों तथा लैंगिक संरचनाओं के संदर्भ में समझने के स्थान पर सीधे उनके जातीय चरित्र से जोड़ दिया। फलतः सामाजिक समस्याओं और नैतिक आशंकाओं का भार रोमा समुदाय की सामुदायिक पहचान पर आरोपित कर दिया गया।

देह-प्रधान नृत्य की आलोचना उस व्यापक वैचारिक संरचना से जुड़ी हुई थी, जिसमें स्त्री-लज्जा, शील और संयम को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता था। यह दृष्टिकोण ऐतिहासिक रूप से सम्पूर्ण बाल्कन समाज में, धार्मिक भेदों से परे, किसी न किसी रूप में विद्यमान था; यद्यपि वर्तमान समय में यह विचारधारा मुस्लिम समुदायों में अपेक्षाकृत अधिक प्रबल दिखाई देती है।

पूर्वी रूढ़िवादी यूनानी-मकदूनियाई स्रोतों के आधार पर Jane K. Cowan लिखती हैं कि "नृत्य स्त्रियों के लिए एक समस्या बन जाता है, क्योंकि नृत्य-परिसर में स्त्री-यौनिकता के प्रति दो परस्पर-विरोधी दृष्टिकोण एक साथ उपस्थित रहते हैं, एक ओर उसे आकर्षण और आनन्द का स्रोत माना जाता है, तो दूसरी ओर वही भय और नैतिक आशंका का कारण भी बनती है" (1990:190)।

नृत्य की देहाधारित प्रकृति उसे स्वाभाविक रूप से स्त्री-यौनिकता से सम्बद्ध कर देती है। विशेषतः उदर-नृत्य जैसी शैलियों में स्त्री-देह की अभिव्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से देखा जाता है, जिसके कारण वह सामाजिक और धार्मिक विमर्शों में विवाद का विषय बन जाती है। मुस्लिम सांस्कृतिक दृष्टिकोण के संदर्भ में Karin van Nieuwkerk का मत है कि "स्त्री-देह आकर्षण और मोहकता का मूर्त रूप मानी जाती है; अतः उसका सार्वजनिक एवं उन्मुक्त प्रदर्शन नैतिक तथा धार्मिक आलोचना का विषय बन जाता है" (Nieuwkerk 2003:268)।

इस प्रकार, रोमा नर्तकियों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण केवल कला या मनोरंजन तक सीमित नहीं था, बल्कि उसमें जातीय पूर्वाग्रह, लैंगिक नैतिकता, धार्मिक मान्यताएँ और सामाजिक सत्ता-संबंध सभी परस्पर गुंथे हुए थे।

भूमध्यसागरीय समाजों में 'मान' और 'लज्जा' से संबंधित अध्ययन इस दृष्टि से विशेष महत्त्व रखते हैं कि वे पारिवारिक प्रतिष्ठा को स्त्री-यौनिकता के नियंत्रण से जोड़कर देखते हैं। किन्तु इस प्रकार के अध्ययन की यह कहकर आलोचना भी की गई है कि वे जटिल और निरन्तर परिवर्तित होती सामाजिक व्यवस्थाओं को अत्यधिक सरल द्वैतों में सीमित कर देते हैं। अनेक विद्वानों ने यह प्रतिपादित किया है कि संगीत और नृत्य के माध्यम से व्यक्त तथाकथित सर्व-भूमध्यसागरीय "सम्मान" की अवधारणा विभिन्न सांस्कृतिक समुदायों में भिन्न-भिन्न अर्थ ग्रहण करती है (Magrini 2003)।

बाल्कन के रोमा समुदायों में नैतिक व्यवस्था *pativ* (रोमानी: सम्मान) और *ladž* (रोमानी: लज्जा) की अवधारणाओं पर आधारित मानी जाती है। दक्षिण-स्लावी भाषाओं में इन्हें क्रमशः *čest* (सम्मान) और *sram* (लज्जा) कहा जाता है। जो वधू विवाह के समय कुँवारी होती है, उसे *česna* अर्थात् "पवित्र और सदाचारी" माना जाता है। इसके विपरीत, किसी पेशेवर उदर-नर्तकी के विषय में यह कहा जाता है कि उसमें *nema sram*—अर्थात् "लज्जा का अभाव"है।

परिवार की प्रतिष्ठा अतिथियों के सत्कार, वयोवृद्धों के प्रति सम्मान तथा पारिवारिक दायित्वों के लिंगानुसार निर्वहन के माध्यम से व्यक्त होती है। पुरुष का दायित्व परिवार का आर्थिक पालन-पोषण करना माना जाता है, जबकि स्त्रियाँ भी श्रम करती हैं और साथ ही भोजन-व्यवस्था, स्वच्छता, बाल-पालन तथा पुरुषों की सेवा का दायित्व भी निभाती हैं। सार्वजनिक जीवन में स्त्रियों से अपेक्षा की जाती है कि वे पुरुषों के प्रति विनीत, संयमित और आज्ञापालक रहें, क्योंकि औपचारिक रूप से पुरुष को "गृह-प्रधान" का स्थान प्राप्त होता है।

स्त्री को प्रत्यक्षतः यौनिकता से जोड़कर देखने की यह सामाजिक प्रवृत्ति पेशेवर नर्तकियों के प्रति विद्यमान कलंक को और अधिक सुदृढ़ करती है। पेशेवर नृत्य में एक ओर पारिश्रमिक देने वाले दर्शकों के साथ व्यावसायिक संबंध स्थापित होता है, और दूसरी ओर अपरिचित पुरुषों के समक्ष देह-प्रदर्शन भी सम्मिलित रहता है, जिसे स्त्री-लज्जा और मर्यादा के लिए संकटकारी माना जाता है। इसी कारण पेशेवर नृत्य को पेशेवर गायन की अपेक्षा अधिक अनैतिक समझा जाता रहा है (Silverman 2003)।

Esma Redžepova के उदाहरण द्वारा यह दर्शाया है कि एक सम्मानित गायिका के रूप में प्रतिष्ठा अर्जित करना उनके लिए कितना कठिन था, जबकि उनकी प्रस्तुतियों में प्रायः नृत्य भी सम्मिलित रहता था। इसी प्रकार बुल्गारियाई मुस्लिम रोमा संगीतज्ञ Yuri Yunakov ने यह टिप्पणी की थी कि वे अपनी पुत्री, जो अत्यन्त प्रतिभाशाली नर्तकी थी,को कभी पेशेवर नर्तकी बनने की अनुमति नहीं देते, क्योंकि यह व्यवसाय सामाजिक दृष्टि से अपमानपूर्ण माना जाता था।

धन अर्जित करने के उद्देश्य से नृत्य करना अपरिचित पुरुषों के समक्ष प्रदर्शन करना, अपनी यौनिकता का सार्वजनिक और व्यावसायिक रूप से प्रदर्शन करना, तथा इस प्रकार उसके सामाजिक मूल्य का अवमूल्यन करना माना जाता था। रोमा समुदाय में अव्यावसायिक अथवा सामुदायिक नृत्य भी पूर्णतः विवादमुक्त नहीं था; यद्यपि स्त्री-कला के रूप में नृत्य को प्राप्त सामाजिक महत्त्व इन तनावों को कुछ सीमा तक कम कर देता था।

यद्यपि औपचारिक रूप से पुरुष को परिवार का प्रधान माना जाता था, तथापि व्यवहारिक जीवन में पितृसत्तात्मक व्यवस्था स्त्रियों की वास्तविक शक्ति और प्रभाव के कारण आंशिक रूप से संतुलित हो जाती थी। आय-सृजन संबंधी गतिविधियों, आर्थिक निर्णयों, वैवाहिक व्यवस्थाओं, सामाजिक-संपर्क तंत्रों तथा अनुष्ठानिक जीवन में स्त्रियों की सक्रिय भूमिका उनकी अधीनस्थ स्थिति को पर्याप्त सीमा तक संतुलित करती थी।

यौनिकता के संदर्भ में स्त्रियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे आदर्श शील और मर्यादा के अनुरूप आचरण करें, क्योंकि स्त्री-यौनिकता को *ladž* अथवा *sram* (लज्जा, अपमान) का सबसे संभावित स्रोत माना जाता है। स्त्रियों के शारीरिक गठन, चाल-ढाल, बोलचाल, व्यवहार और सामाजिक उपस्थिति का सूक्ष्म निरीक्षण प्रायः अन्य स्त्रियों द्वारा निरन्तर किया जाता है।

उनके वस्त्र-विन्यास विशेषकर ऐसे परिधान जो शरीर की आकृति को उभारते हों, श्रृंगार, नेत्र-संपर्क, सामाजिक मेलजोल, संगति तथा घर के बाहर बिताए गए समय का मूल्यांकन शील और मर्यादा की कसौटी पर किया जाता है। स्त्री-यौनिकता के नियंत्रण और सामाजिक प्रतिष्ठा का सबसे संवेदनशील प्रतीक वधू की कौमार्य-परीक्षा मानी जाती है, जो आज भी बाल्कन क्षेत्र तथा प्रवासी रोमा परिवारों के अनेक समुदायों में प्रचलित है।

स्त्री-यौनिकता की सामाजिक शक्ति को समझाने के लिए एक प्रचलित सामाजिक-संरचनात्मक तर्क यह प्रस्तुत करता है कि पितृवंशीय और पितृस्थानीय समाजों में यदि कोई स्त्री अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष से सन्तान उत्पन्न करे, तो इससे न केवल पितृसत्तात्मक व्यवस्था संकट में पड़ जाती है, बल्कि सन्तान की वैध वंशानुगत पहचान भी संदिग्ध हो जाती है।

एक अन्य दृष्टिकोण यह मानता है कि स्त्री-देह को स्वभावतः यौनिक माना जाता है, जो पुरुष के तथाकथित "उत्पादक" शरीर से भिन्न समझी जाती है (Nieuwkerk 1995:154)। इसी प्रकार तीसरा मत इस्लाम की ऐसी व्याख्या प्रस्तुत करता है, जिसके अनुसार स्त्रियों को पुरुषों की तुलना में अधिक यौन-प्रवृत्त माना जाता है; इसलिए उन्हें नियंत्रित और संयमित रखना आवश्यक समझा जाता है (Mernissi 1975)।

यद्यपि ये सभी दृष्टिकोण रोमा समुदाय की सामाजिक परिस्थितियों को समझने में कुछ सीमा तक सहायक सिद्ध होते हैं, फिर भी वे इस जटिल सामाजिक वास्तविकता की सम्पूर्ण व्याख्या करने में पर्याप्त नहीं हैं।

बाल्कन के रोमा समुदायों में उन बच्चों की स्थिति निरन्तर चिंता और सामाजिक विमर्श का विषय बनी रहती है, जिन्हें विस्तृत पारिवारिक संरचना से पूर्णतः सम्बद्ध नहीं माना जाता। व्यभिचारजन्य संबंधों से उत्पन्न बच्चों के प्रति प्रायः सहानुभूति व्यक्त की जाती है, किन्तु उनकी माताओं को सामाजिक निन्दा और भर्त्सना का सामना करना पड़ता है। किसी स्त्री के "विचलित" यौन-आचरण को उसके नैतिक पतन का संकेत माना जाता है।

रोमा समाज में स्त्रियों को स्वभावतः यौनिक सत्ता के रूप में देखा जाता है, जबकि पुरुषों के संदर्भ में ऐसा दृष्टिकोण अपेक्षाकृत कम तीव्रता से अपनाया जाता है। पुरुषों को अपनी यौनिकता के सार्वजनिक मूल्यांकन अथवा सामाजिक परीक्षण की उतनी चिंता नहीं करनी पड़ती, जितनी स्त्रियों को। इसके विपरीत, स्त्रियों को रोमा समाज में एक "उत्पादक देह" के रूप में देखा जाता है,अर्थात् वे परिवार, श्रम और सामाजिक पुनरुत्पादन की केंद्रीय वाहक मानी जाती हैं। अधिकांश रोमा समुदाय इस मत से सहमत हैं कि स्त्रियाँ भावनात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर परिवार को एकसूत्र में बाँधे रखती हैं, और अनेक परिवार आर्थिक रूप से भी उनकी आय पर निर्भर रहते हैं।

यौनिक मर्यादा और सामाजिक शील के निर्वाह की एक महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्ति यह मानी जाती है कि नृत्य कहाँ, किन परिस्थितियों में और किन लोगों के समक्ष किया जाए, इसका कठोर सामाजिक नियमन हो। चूँकि नृत्य को अत्यन्त यौन-संवेदनशील क्रिया माना जाता है, इसलिए उसका प्रदर्शन केवल अपने समुदाय या पारिवारिक दायरे के भीतर ही स्वीकार्य समझा जाता है।

मैसिडोनियाई रोमा समुदायों पर Elsie Ivancich Dunin के अग्रणी नृवंशवैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार, 1970 के दशक तक स्त्री और पुरुष नृत्य का पृथक्करण सामान्य सामाजिक प्रथा था। स्त्रियाँ निजी गृह-परिसरों में स्त्री *dajre* वादिकाओं की संगति तथा स्त्री-गायन के साथ नृत्य करती थीं, जबकि पुरुषों के समक्ष स्त्रियों का नृत्य करना अशोभनीय और मर्यादाविरुद्ध माना जाता था (1971:324–325; 1973:195; 2000; 2006)। उल्लेखनीय है कि इसी प्रकार की सामाजिक व्यवस्था

पूर्वी रूढ़िवादी ईसाई समुदायों तथा बाल्कन के गैर-रोमा मुस्लिम समाजों में भी विद्यमान थी (Rice 1994; Sugarman 1997)।

Esma Redžepova ने 1950 के दशक के अपने बचपन को याद करते हुए कहा था—"स्त्रियाँ अलग कक्ष में रहती थीं, पुरुष अलग, और विवाह-समारोह भी पृथक रूप से आयोजित किए जाते थे।" 1968 में सम्पन्न उनके विवाह में 'वधू-स्नान' नामक एक विशेष स्त्री-अनुष्ठान आयोजित किया गया था, जिसमें केवल महिलाओं की भागीदारी थी। इस अवसर पर एक स्त्री-वाद्यवृन्द उपस्थित था, जिसमें एक वायलिन और दो *dajre* वादिकाएँ सम्मिलित थीं (Teodosievski and Redžepova 1984:108)।

1950 के दशक की विवाह-परम्पराओं का वर्णन करते हुए यह भी कहा गया है कि विवाहोत्सव के दौरान, विशेषकर शनिवार को जब वधू-पक्ष के घर में समारोह आयोजित होता था, तब एक पेशेवर स्त्री-वाद्यवृन्द बुलाया जाता था। इस दल में सामान्यतः दो वायलिन-वादिकाएँ, एक *dajre* वादिका और एक गायिका होती थी; कई बार गायिका स्वयं *dajre* भी बजाती थी।

इन उत्सवों में स्त्रियों और पुरुषों के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित होते थे। इसे सामान्यतः स्त्रियों के "अन्तःलोक" और पुरुषों के "बहिःलोक" की सांस्कृतिक अवधारणा के रूप में समझा जाता था। यह स्थानिक विभाजन केवल रोमा समुदाय तक सीमित नहीं था, बल्कि बाल्कन क्षेत्र के गैर-रोमा मुस्लिम समाजों में भी इसी प्रकार की व्यवस्था विद्यमान थी (Sugarman 1997; Ellis 2003)। उदाहरण के लिए, मेंहदी-अनुष्ठान का स्मरण करते हुए Esma कहती हैं,"स्त्रियाँ भीतर थीं, जबकि पुरुष *zurla* और *tapan* वाद्यों के साथ बाहर उपस्थित थे।"

हालाँकि Svanibor Pettan यह स्पष्ट करते हैं कि "भीतर" और "बाहर" की इन अवधारणाओं को केवल शाब्दिक अर्थों में नहीं समझना चाहिए। बाल्कन क्षेत्र के अनेक घरों के चारों ओर ऊँची दीवारों से घिरे आँगन होते हैं। इसलिए यदि स्त्रियाँ आँगन में प्रदर्शन करती थीं, तो वह तकनीकी रूप से 'बाहर' होते हुए भी सड़क की तरह पूर्णतः सार्वजनिक स्थान नहीं माना जाता था। आँगन को एक अर्ध-निजी और

सुरक्षित सांस्कृतिक क्षेत्र समझा जाता था, जबकि सड़क को पुरुष-प्रधान सार्वजनिक क्षेत्र माना जाता था (Pettan 1996a:316; 2003)।

उदाहरणस्वरूप, Šutka में आयोजित मेंहदी-समारोह वधू के घर अथवा आँगन के भीतर ही सम्पन्न होते थे। वर-पक्ष की स्त्रियाँ नृत्य करती हुई गलियों से होकर आती थीं और फिर वधू के आँगन को स्त्री-केन्द्रित सांस्कृतिक परिसर में परिवर्तित कर देती थीं। इसी प्रकार Lebabet के Belmont स्थित मेंहदी-अनुष्ठान में भी एक शहरी आँगन स्त्रियों के सांस्कृतिक उत्सव-स्थल में बदल गया था। इन दोनों ही परिस्थितियों में पुरुष केवल बाहरी परिधि पर दर्शक बने रहते थे; सक्रिय भागीदारी मुख्यतः स्त्रियों और संगीतज्ञों तक सीमित रहती थी।

इन विवरणों से यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि रोमा स्त्रियाँ केवल घर की चारदीवारी तक सीमित थीं। यद्यपि सांस्कृतिक दृष्टि से उन्हें पारिवारिक जीवन से जोड़कर देखा जाता था, फिर भी ऐतिहासिक स्रोतों और नृवंशवैज्ञानिक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि रोमा स्त्रियाँ सार्वजनिक जीवन में भी सक्रिय रूप से भाग लेती थीं। विशेष रूप से संगीत, नृत्य, मौसमी कृषि-कार्य तथा बाज़ारों में वस्तुओं के विक्रय जैसी आर्थिक गतिविधियों के माध्यम से वे समाज के सार्वजनिक क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण उपस्थिति बनाए रखती थीं।

Svanibor Pettan का मत है कि कोसोवो के गैर-रोमा मुस्लिम समुदायों की तुलना में रोमा स्त्रियों को अपेक्षाकृत अधिक सामाजिक और गतिशील स्वतंत्रता प्राप्त थी। उनके अनुसार, “कोसोवो के गैर-जिप्सी समुदायों और संगीतज्ञों की तरह जिप्सी पुरुष सार्वजनिक क्षेत्र की ओर अधिक उन्मुख रहते हैं, जबकि जिप्सी स्त्रियाँ मुख्यतः निजी क्षेत्र से जुड़ी रहती हैं; किन्तु उनका ‘निजी क्षेत्र’ अधिकांश गैर-जिप्सी स्त्रियों की तुलना में कहीं अधिक विस्तृत होता है” (Pettan 1996a:316)।

Pettan आगे स्पष्ट करते हैं कि यह स्थिति मुख्यतः स्थायी निवास वाले रोमा समुदायों के संदर्भ में लागू होती है। इसके विपरीत, घुमन्तू रोमा स्त्रियाँ भविष्य-कथन, जड़ी-बूटियों की औषधियों के विक्रय तथा भिक्षावृत्ति जैसे कार्यों के माध्यम से

सार्वजनिक जीवन में और भी अधिक सक्रिय रहती थीं (Pettan 1996a:316; Okely 1983)।

1930 के दशक में रोमा स्त्रियों की इस गतिशील स्वतंत्रता का उल्लेख ब्रिटिश यात्रिणी Catherine Brown ने भी किया है। वे लिखती हैं—

"इन जिप्सी स्त्रियों की सबसे उल्लेखनीय विशेषता उनकी अद्भुत स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता है, विशेषकर मैसिडोनिया की अन्य मुस्लिम स्त्रियों की तुलना में। जहाँ रूढ़िवादी गैर-रोमा मुस्लिम समुदायों में कभी-कभी पर्वों के अवसर पर पुरुषों के समूह गाँव में घूमते और छोटे तारवाद्यों पर धीमे स्वर में संगीत प्रस्तुत करते दिखाई देते हैं, वहाँ स्त्रियाँ उनके साथ प्रायः नहीं दिखतीं। स्त्रियों के उत्सव अलग होते हैं और हरम-परिसर तक सीमित रहते हैं। किन्तु यहाँ, रोमा समुदाय में, स्त्री और पुरुष दोनों स्वाभाविक उल्लास के साथ मिलकर उत्सव में भाग लेते हैं। पूरा दृश्य किसी विशाल नाट्य जैसा प्रतीत होता था" (C. Brown 1933:307)।

उच्चवर्गीय गैर-रोमा मुस्लिम स्त्रियों के विपरीत, रोमा स्त्रियाँ ऐतिहासिक रूप से घर के बाहर भी सक्रिय रही हैं। उन्होंने न केवल आर्थिक कार्यों में भाग लिया, बल्कि गैर-रोमा स्त्रियों और पुरुषों के साथ श्रम, व्यापार और सामाजिक जीवन में भी समान रूप से सहभागिता की।

बाल्कन रोमा समुदायों में चोचेक (Čoček)

चोचेक, जिसे मैसेडोनिया और कोसोवो में "चुचेक" तथा बुल्गारिया में "क्युचेक" कहा जाता है, रोमा समाज का एक बहुत प्रसिद्ध एकल नृत्य है। "चोचेक" शब्द केवल नृत्य के लिए ही नहीं, बल्कि उस संगीत के लिए भी इस्तेमाल होता है, जिस पर यह नृत्य किया जाता है। कई जगहों पर इसी संगीत पर समूह में किया जाने वाला लाइन डांस भी "चोचेक" कहलाता है।

यह नृत्य पूरी तरह कलाकार की अपनी कला और भावनाओं पर आधारित होता है। इसमें हाथों की सुंदर हरकतें, पेट और कमर की लयबद्ध चाल, कूल्हों और सिर की

कंपन जैसी गतियाँ, तथा पैरों की छोटी-छोटी चालें शामिल होती हैं। पुरुष और महिलाएँ दोनों यह नृत्य करते हैं, लेकिन इसे अधिकतर महिलाओं का नृत्य माना जाता है।

चोचेक का संबंध पुराने भारतीय दौर की नर्तकी परंपराओं से माना जाता है, क्योंकि भारतीय महिलाओं द्वारा इस नृत्य को किया जाता था। रोमा के प्रवासन के कारण नृत्य के नाम में बदलाव देखने को मिलता है, जैसे "köçek" तुर्की शब्द से इसका संबंध माना जाता है। हालांकि, रोमा समाज में इसका अपना अलग रूप विकसित हुआ, जो आधुनिक बेली डांस से कुछ अलग है। कहीं यह नृत्य बहुत सादा और मर्यादित रूप में किया जाता है, तो कहीं अधिक खुली और आकर्षक शैली में प्रस्तुत किया जाता है।

रोमा समाज में चोचेक केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि सामाजिक और पारिवारिक परंपराओं का महत्वपूर्ण हिस्सा है। शादी-ब्याह और अन्य रस्मों में महिलाओं का घंटों तक नृत्य करना सामान्य बात है। कई बार वे लगातार तीन-चार दिनों तक नाचती रहती हैं, चाहे वे कितनी भी थकी क्यों न हों। बीमारी या शोक के अलावा नृत्य न करना उचित नहीं माना जाता। यहाँ तक कि जो महिलाएँ अच्छी तरह नाच नहीं पातीं या शारीरिक रूप से कमजोर होती हैं, वे भी नृत्य में भाग लेती हैं।

पुरुष भी नृत्य करते हैं, लेकिन उन पर महिलाओं जितनी जिम्मेदारी नहीं होती। कुछ विशेष अवसरों पर पुरुषों का नृत्य करना आवश्यक माना जाता है, लेकिन सामान्यतः वे मनोरंजन और आनंद के लिए नृत्य करते हैं। कई पुरुष उत्साह और ऊर्जा के साथ कुछ समय तक नृत्य करते हैं और फिर विश्राम के लिए बैठ जाते हैं।

नृत्य समारोहों में छोटे बच्चे अपने बड़ों को देखकर नृत्य सीखते हैं, जबकि बुज़ुर्ग अपने अनुभव, कला और परंपरा का प्रदर्शन करते हैं। विवाह तथा सामूहिक नृत्यों में प्रायः महिलाओं की संख्या पुरुषों की तुलना में अधिक होती है। सामान्यतः तीन महिलाओं पर एक पुरुष दिखाई देता है।

इस प्रकार, चोचेक केवल एक नृत्य नहीं है, बल्कि रोमा समाज की संस्कृति, परंपरा, भावनाओं और सामुदायिक जीवन की एक महत्वपूर्ण पहचान है।

जो पुरुष प्रायः साथ नृत्य करते हैं, वे उत्सवों तथा समारोहों में एक-दूसरे को खोज लेते हैं और जटिल नृत्य-चरणों का अभ्यास करते हैं। वास्तव में, पुरुष अपनी शक्ति, उत्साह और मर्दानगी का प्रदर्शन एकल नृत्य की अपेक्षा पंक्ति-नृत्यों में अधिक करते दिखाई देते हैं। महिलाएँ और युवतियाँ भी अपने संबंधियों तथा सखियों के साथ नृत्य करना अधिक पसंद करती हैं। वे सामान्यतः समूहों अथवा जोड़ों में नृत्य-पंक्ति में सम्मिलित होती हैं और अकेले बहुत कम नृत्य करती हैं। किन्तु पुरुषों के विपरीत, महिलाएँ और युवतियाँ लगभग सम्पूर्ण आयोजन के दौरान नृत्य-स्थल पर उपस्थित रहती हैं।

इस अध्ययन के दौरान सामान्य रोमा महिलाएँ अत्यन्त सहज, स्वाभाविक तथा आत्मविश्वास से परिपूर्ण दिखाई दीं। सम्भवतः इसका कारण यह था कि वे लगभग प्रत्येक सप्ताह नृत्य करती थीं। वास्तव में, एकल नृत्य के रूप में चोचेक सभी अनुष्ठानों और सामाजिक अवसरों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह नृत्य प्रायः नृत्य-स्थल के मध्य भाग में, नृत्य-पंक्ति के अग्रभाग के समीप, प्रमुख महिलाओं द्वारा किया जाता है, जबकि नृत्य-पंक्ति उनके चारों ओर लहराती हुई घूमती रहती है।

उदाहरणार्थ, शुत्का (Šutka) में आयोजित "इग्रांका" समारोह में दुल्हन की निकट संबंधी महिलाएँ केंद्र में चोचेक नृत्य करती हैं, जबकि अन्य संबंधियों को नृत्य-पंक्ति का नेतृत्व करने के लिए आमंत्रित किया जाता है। कभी-कभी आमंत्रित परिवारों की कुछ महिलाएँ भी केंद्र में सम्मिलित हो जाती हैं, यद्यपि पुरुष ऐसा बहुत कम करते हैं। जैसे-जैसे नई धुनें बजती हैं और परिवार के नए सदस्यों को आमंत्रित किया जाता है, वैसे-वैसे नृत्य की शैली, गति और भाव भी परिवर्तित होते रहते हैं। यद्यपि महिलाएँ अनेक घंटों तक एक ही नृत्य करती प्रतीत होती हैं, तथापि उसकी प्रस्तुति निरन्तर बदलती रहती है—कभी तीव्र और उत्साहपूर्ण, तो कभी मन्द और गंभीर। कई बार नर्तक अपने उल्लास और उत्साह को प्रदर्शित करने के लिए मेज़ों अथवा

ऊँचे स्थानों पर चढ़कर भी नृत्य करते हैं। एक चित्र में खतना-जुलूस के दौरान एक महिला नर्तकी को कार की छत पर नृत्य करते हुए दर्शाया गया है।

यद्यपि अनुष्ठानों में नृत्य करना आवश्यक माना जाता है, तथापि मनोरंजन और आनंद के लिए नृत्य करना भी सामान्य बात है, विशेषकर उत्सवों के अनौपचारिक भागों में। न्यूयॉर्क में Esma Redžepova के सम्मान में आयोजित एक समारोह में पंक्ति-नृत्य तथा एकल चोचेक दोनों प्रस्तुत किए गए। एक उत्कृष्ट चोचेक नर्तकी को सम्पूर्ण समुदाय में सम्मान और प्रशंसा प्राप्त होती है तथा उसका परिवार गर्वपूर्वक उसकी कला का प्रदर्शन करता है।

शुत्का के एक विवाह समारोह में एक प्रतिभाशाली किशोर नर्तकी के पिता उससे अत्यन्त अप्रसन्न हो गए, क्योंकि जब उनके परिवार को नृत्य-पंक्ति का नेतृत्व करने के लिए बुलाया गया, तब वह वहाँ उपस्थित नहीं थी। उनके परिवार की कलात्मक प्रतिष्ठा बहुत सीमा तक उनकी पुत्री की नृत्य-कला पर निर्भर थी, जिसे परिवार की एक मूल्यवान सांस्कृतिक धरोहर माना जाता था। महिलाएँ और युवतियाँ कुशल नर्तकियों के रूप में मंच के केंद्र में रहती हैं और लोग उनकी कला को देखने तथा उसकी सराहना करने के लिए चारों ओर एकत्रित हो जाते हैं।

Esma Redžepova ने इस विषय में कहा था "सबसे सुंदर बात गरिमा और सौंदर्य का प्रदर्शन था। एक सास दूसरी सास से कह सकती थी—'मेरी बहू नृत्य करते समय अपना हाथ इस प्रकार उठाती है मानो वह सबको मोहित कर दे।' इससे यह स्पष्ट होता था कि वह कितनी कोमलता, नज़ाकत और सौंदर्य के साथ नृत्य करती थी। यही रोमा परंपरा की वास्तविक अभिव्यक्ति थी।"

परिवारों में लड़कियों को लड़कों की अपेक्षा नृत्य का अधिक प्रशिक्षण दिया जाता है। घरों में रिकॉर्ड किया गया संगीत चलाकर अनुभवी महिला नर्तकियाँ उन्हें विविध नृत्य-तकनीकें सिखाती हैं। अनेक अवसरों पर माताएँ अपनी पुत्रियों को मेज़ों पर खड़ा करके नृत्य करवाती हैं, जिससे वे आत्मविश्वास और कला का प्रदर्शन कर सकें।

महिला चोचेक नृत्य-कला का उल्लेख सैकड़ों लोकगीतों तथा गीतों में प्राप्त होता है। उदाहरणस्वरूप, "Romani Chaj Sijum" गीत में मैसेडोनियाई रोमा गायिका Džansever पेट को तीव्र गति से "झटकने" की विशेष नृत्य-चाल का उल्लेख करती हैं। इससे संकेत मिलता है कि यह गति अत्यन्त तीव्र, लयात्मक तथा आकर्षक होती है। यह शैली तुर्की रोमा समुदाय की एक विशिष्ट और प्रसिद्ध नृत्य-चाल मानी जाती है।

तुर्क और रोमा समुदायों में चोचेक नृत्य की परंपरा एक साझा सांस्कृतिक विरासत के रूप में दिखाई देती है। बुल्गारिया के रोमा समुदाय के अनुसार, पेट को तेज़ी से झटका देना (stomach flick) इस नृत्य की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है। विशेष रूप से 9/8 ताल पर प्रस्तुत किया जाने वाला चोचेक अधिक प्रभावशाली और ऊर्जावान माना जाता है। न्यूयॉर्क में बसे मैसेडोनियाई रोमा समुदायों की नववर्ष सभाओं में भी आधी रात के समय 9/8 ताल का संगीत बजाना एक विशेष परंपरा के रूप में देखा जाता है।

रोमा परिवार अपनी अविवाहित लड़कियों की नृत्य-कला को गर्व के साथ प्रस्तुत करते हैं, किन्तु इसके साथ मर्यादा और सामाजिक सीमाओं का भी ध्यान रखा जाता है। कुछ प्रस्तुतियाँ साहसी और खुली मानी जाती हैं, जबकि कुछ अवसर और वातावरण के अनुसार संयमित रूप में की जाती हैं।

शुत्का की एक शादी का उदाहरण उल्लेखनीय है, जहाँ एक माँ ने अपनी सोलह वर्षीय बेटी को मेज़ पर खड़ा कर नृत्य करवाया। उसकी बहन, पति और अन्य रिश्तेदार उसके चारों ओर नृत्य करते हुए उसकी कला की प्रशंसा कर रहे थे। उत्कृष्ट नर्तकों के प्रति सम्मान व्यक्त करने के लिए लोग तालियाँ बजाते हैं और उन्हें धनराशि भी भेंट करते हैं।

महिला नर्तकियों के निकट सामान्यतः उनके अपने रिश्तेदार ही उपस्थित रहते हैं, जबकि अन्य लोग दूर से प्रदर्शन देखते हैं। यह व्यवस्था केवल सामाजिक सुरक्षा का रूप नहीं, बल्कि विवाह योग्य युवतियों की कला और व्यक्तित्व को समाज के सामने प्रस्तुत करने का माध्यम भी है। रिश्तेदारों की उपस्थिति यह सुनिश्चित करती है कि

नृत्य को सम्मानजनक दृष्टि से देखा जाए और किसी प्रकार के अनुचित आरोप न लगें।

मैसेडोनिया के रोमा समुदायों में चोचेक केवल एकल नृत्य तक सीमित नहीं है, बल्कि समूह नृत्य के रूप में भी अत्यंत लोकप्रिय है। विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों में इसकी शैली और ताल में विविधता दिखाई देती है। 9/8 और 7/8 ताल वाले नृत्य अपेक्षाकृत कम प्रचलित होते हैं, जबकि 2/4 ताल अधिक सामान्य है। फिर भी 9/8 ताल का संगीत प्रायः रात के बाद के समय में बजाया जाता है, क्योंकि यह वातावरण में अधिक उत्साह और ऊर्जा उत्पन्न करता है।

मैसेडोनिया, कोसोवो और दक्षिणी सर्बिया में "ओरो (Oro)" नामक लाइन डांस सबसे अधिक लोकप्रिय माना जाता है। इसकी विशेषता तीन भागों में विभाजित चाल और जटिल फुटवर्क है। कई बार इसे 7/8 ताल में भी प्रस्तुत किया जाता है।

बाल्कन के रोमा समुदायों ने अपने आसपास के गैर-रोमा समाजों के नृत्यों को भी अपनाया और उन्हें अपनी शैली में ढाला। अनेक लाइन डांस धीरे-धीरे आरंभ होकर अंत तक तीव्र गति पकड़ लेते हैं, जो मैसेडोनियाई नृत्य शैली की प्रमुख पहचान मानी जाती है।

न्यूयॉर्क और शुत्का के रोमा समुदायों में कई पारंपरिक और लोकप्रिय नृत्य आज भी जीवित हैं, जिनमें "Bugarsko", "Lesno", "Čačak", "Bitolska or Romska Gaida", "Eleno Mome", "Jeni Jol" तथा अनेक 9/8 ताल वाले नृत्य शामिल हैं।

इसी प्रकार "Beranče" अथवा "Ibraim Odža" भी एक अत्यंत लोकप्रिय लाइन डांस है, जिसे विशेष रूप से बिटोला के रोमा समुदाय में पसंद किया जाता है। पुराने और गंभीर शैली वाले नृत्यों का नेतृत्व प्रायः बुज़ुर्ग रोमा कलाकार या अत्यंत प्रतिभाशाली युवा करते हैं। ये नृत्य सामान्यतः 2/4 अथवा 7/8 ताल पर आधारित होते हैं, किन्तु आधुनिक पीढ़ी के अनेक युवा अब इन पारंपरिक शैलियों से पूर्णतः परिचित नहीं रह गए हैं।

चोचेक : रोमा समाज की सांस्कृतिक पहचान

चोचेक, जिसे मैसेडोनिया और कोसोवो में "चुचेक" तथा बुल्गारिया में "क्युचेक" के नाम से जाना जाता है, रोमा समुदाय का एक अत्यंत प्रसिद्ध और विशिष्ट एकल नृत्य है। "चोचेक" शब्द केवल नृत्य तक सीमित नहीं है, बल्कि उस संगीत शैली के लिए भी प्रयुक्त होता है, जिसकी धुनों पर यह नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। कई क्षेत्रों में इसी संगीत पर किए जाने वाले सामूहिक लाइन डांस को भी "चोचेक" कहा जाता है।

यह नृत्य कलाकार की व्यक्तिगत अभिव्यक्ति, भावनाओं और सहज रचनात्मकता का सुंदर उदाहरण है। इसमें हाथों की कोमल मुद्राएँ, पेट और कमर की लयात्मक गतियाँ, कूल्हों तथा सिर की कंपन भरी चालें, और पैरों की सूक्ष्म लेकिन प्रभावशाली हरकतें सम्मिलित होती हैं। यद्यपि पुरुष और महिलाएँ दोनों इस नृत्य में भाग लेते हैं, फिर भी चोचेक को मुख्य रूप से महिलाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाता है।

चोचेक की जड़ें उस्मानी (Ottoman) काल की नर्तकी परंपराओं से जुड़ी मानी जाती हैं। इसका नाम तुर्की शब्द "köçek" से विकसित हुआ माना जाता है। समय के साथ रोमा समाज ने इसे अपनी सांस्कृतिक संवेदनाओं और जीवन शैली के अनुरूप एक विशिष्ट रूप प्रदान किया, जिसके कारण यह आधुनिक बेली डांस से अलग पहचान रखता है। कुछ स्थानों पर यह नृत्य अत्यंत संयमित और मर्यादित शैली में प्रस्तुत किया जाता है, जबकि कहीं-कहीं इसमें अधिक खुलापन और आकर्षण दिखाई देता है।

रोमा समाज में चोचेक केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक और पारिवारिक परंपराओं का अभिन्न अंग है। विवाह और अन्य पारंपरिक समारोहों में महिलाओं का घंटों तक नृत्य करना सामान्य माना जाता है। कई अवसरों पर वे लगातार तीन या चार दिनों तक नृत्य करती रहती हैं, चाहे वे कितनी भी थकी क्यों न हों। बीमारी या शोक जैसी परिस्थितियों को छोड़कर नृत्य से अनुपस्थित रहना

उचित नहीं समझा जाता। यहाँ तक कि जो महिलाएँ शारीरिक रूप से कमजोर होती हैं या नृत्य में दक्ष नहीं होतीं, वे भी इस परंपरा में भाग लेती हैं।

पुरुषों की भागीदारी महिलाओं की तुलना में अपेक्षाकृत कम अनिवार्य होती है। कुछ विशेष अवसरों पर पुरुषों का नृत्य करना आवश्यक माना जाता है, किन्तु अधिकांशतः वे मनोरंजन और उत्साह के लिए नृत्य करते हैं। वे समूह में थोड़े समय के लिए अत्यधिक ऊर्जा और जोश के साथ नाचते हैं और फिर विश्राम कर लेते हैं।

नृत्य समारोहों में छोटे बच्चे बड़ों को देखकर नृत्य सीखते हैं, जबकि बुज़ुर्ग अपने अनुभव और कला का प्रदर्शन करते हैं। विवाह समारोहों में समूह नृत्य के दौरान महिलाओं की संख्या प्रायः पुरुषों से अधिक होती है। सामान्यतः तीन महिलाओं पर एक पुरुष दिखाई देता है।

इस प्रकार, चोचेक केवल एक नृत्य शैली नहीं, बल्कि रोमा समाज की सांस्कृतिक चेतना, पारिवारिक परंपराओं, भावनात्मक अभिव्यक्ति और सामुदायिक जीवन का जीवंत प्रतीक है।

भारतीय सपेरा (कोबरा) नृत्य और क्यूचेक (चोचेक)

राजस्थान अपनी बहुवर्णी संस्कृति, लोकपरंपराओं तथा विशिष्ट नृत्य-शैलियों के कारण विश्वपटल पर विशिष्ट पहचान रखता है। यहाँ के लोकनृत्यों में केवल मनोरंजन का तत्त्व ही नहीं, अपितु समाज का इतिहास, जीवन-दर्शन, लोकआस्था तथा जनमानस की भावनात्मक संवेदनाएँ भी प्रतिफलित होती हैं। इन्हीं समृद्ध लोकपरंपराओं में कालबेलिया समुदाय का "कोबरा नृत्य" अत्यंत महत्वपूर्ण एवं आकर्षक लोकनृत्य के रूप में प्रतिष्ठित है। यह नृत्य केवल कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि राजस्थान की सांस्कृतिक चेतना, लोकजीवन तथा सामुदायिक स्मृतियों का सजीव प्रतीक है।

भारतीय कालबेलिया नृत्य तथा यूरोपीय रोमा नृत्य के मध्य गहन सांस्कृतिक साम्य पर अनेक शोधकर्ताओं ने विचार व्यक्त किए हैं। उनके अनुसार हस्तमुद्राओं, कटि-प्रदेश की लयात्मक लचक, वृत्ताकार भ्रमण-शैली तथा मुखाभिनय में अद्भुत

समानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। यह साम्यता इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि रोमा समुदाय की सांस्कृतिक जड़ें भारतीय लोकपरंपराओं से अनुप्राणित रही हैं।

कालबेलिया समुदाय परंपरागत रूप से सर्प-पालन, सर्प-पकड़ने तथा उनसे संबंधित कौशल-प्रदर्शन के लिए विख्यात रहा है। कालांतर में इस समुदाय ने अपनी परंपरागत जीवन-पद्धति को कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए उसे लोकनृत्य का स्वरूप दिया। "कोबरा नृत्य" उसी सांस्कृतिक विकास का सजीव एवं कलात्मक रूप है। इस नृत्य में नर्तकियाँ अपने शरीर की लचक, ताल-संयोजन तथा गतियों के माध्यम से सर्प, विशेषतः कोबरा की चपलता, लय एवं फुर्ती का प्रभावशाली प्रदर्शन करती हैं। उनकी कटि की तरंगित चाल, हस्तों की गोलाकार मुद्राएँ तथा तीव्र घूर्णन-शैली दर्शकों को विस्मय-विभोर कर देती है।

कोबरा नृत्य की प्रमुख विशेषता उसकी लयात्मकता तथा देह-लचक में निहित है। नर्तकियाँ प्रायः कृष्णवर्णीय पारंपरिक घाघरा-चोली धारण करती हैं, जिन पर रंग-बिरंगी कढ़ाई, दर्पणकारी शिल्प तथा चमकीले धागों का अलंकरण किया जाता है। कृष्णवर्ण वस्त्र कोबरा के प्रतीकात्मक स्वरूप का बोध कराते हैं। इसके साथ वे रजताभूषण, पायल, बाजूबंद तथा अन्य पारंपरिक आभूषण धारण करती हैं, जो नृत्य की सौंदर्याभिव्यक्ति को और अधिक प्रभावपूर्ण बना देते हैं। जब नर्तकियाँ तीव्र गति से घूमती हैं, तब उनके घाघरे की वृत्ताकार लय तथा शरीर की तरंगित गति ऐसा आभास उत्पन्न करती है मानो कोई नाग फण फैलाकर नृत्य कर रहा हो।

इस नृत्य के साथ लोकसंगीत का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। कोबरा नृत्य में प्रायः पुंगी, खंजरी, ढोलक तथा बीन जैसे वाद्ययंत्रों का प्रयोग किया जाता है। विशेषतः बीन की ध्वनि इस नृत्य की आत्मा मानी जाती है, क्योंकि उसका संबंध सर्प एवं सपेरा परंपरा से अत्यंत गहरा है। जैसे ही बीन की मधुर तान वातावरण में गूँजती है, नर्तकियाँ उसी लय और ताल के अनुरूप अपने शरीर को तरंगित करने लगती हैं। संगीत और नृत्य का यह समन्वय दर्शकों के अंतर्मन में रोमांच एवं आकर्षण की अनुभूति उत्पन्न करता है।

कोबरा नृत्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, अपितु कालबेलिया समुदाय की सांस्कृतिक अस्मिता का द्योतक भी है। यह नृत्य उनके जीवन-संघर्ष, परंपराओं तथा सामुदायिक अस्तित्व की कथा को अभिव्यक्त करता है। पूर्वकाल में यह नृत्य ग्राम्य मेलों एवं स्थानीय उत्सवों तक सीमित था, किंतु वर्तमान समय में यह राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय मंचों तक पहुँच चुका है। राजस्थान के लोकमहोत्सवों, पर्यटन-आयोजनों तथा सांस्कृतिक समारोहों में कोबरा नृत्य विशेष आकर्षण का केंद्र बन चुका है। विदेशी पर्यटक भी इस नृत्य को अत्यंत उत्सुकता से देखते हैं तथा इसके माध्यम से राजस्थान की लोकसंस्कृति को समझने का प्रयास करते हैं।

यूनेस्को द्वारा कालबेलिया नृत्य को विश्व की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहरों में सम्मिलित किए जाने के उपरांत इस कला को वैश्विक स्तर पर नवीन पहचान प्राप्त हुई। इससे न केवल कलाकारों को सम्मान प्राप्त हुआ, बल्कि नवीन पीढ़ी में भी इस लोककला के प्रति जागरूकता एवं गौरव-बोध उत्पन्न हुआ। आज अनेक युवा कलाकार इस नृत्य को सीखकर अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित एवं संवर्धित करने का कार्य कर रहे हैं।

कोबरा नृत्य में केवल शारीरिक कौशल ही नहीं, बल्कि भावाभिनय का भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। नर्तकियाँ अपनी दृष्टि, हस्तमुद्राओं तथा मुखाभिव्यक्तियों के माध्यम से सर्प की चंचलता, रहस्यमयता एवं गतिशीलता का सजीव चित्र प्रस्तुत करती हैं। अनेक अवसरों पर वे इतनी लचीली मुद्राएँ धारण करती हैं कि दर्शक आश्चर्यचकित रह जाते हैं। यही विशिष्टता इस नृत्य को अन्य लोकनृत्यों से पृथक एवं अद्वितीय बनाती है।

आधुनिक युग में परिवर्तित जीवनशैली तथा पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण अनेक लोककलाएँ लुप्तप्राय होती जा रही हैं, तथापि कोबरा नृत्य आज भी अपनी लोकप्रियता बनाए हुए है। इसका प्रमुख कारण यह है कि यह नृत्य केवल परंपरा नहीं, बल्कि राजस्थान की जीवंत सांस्कृतिक आत्मा का प्रतीक है। कलाकार अपनी कला के माध्यम से यह संदेश देते हैं कि लोकसंस्कृति का संरक्षण एवं संवर्धन सम्पूर्ण समाज का सामूहिक दायित्व है।

अंततः कहा जा सकता है कि कोबरा नृत्य राजस्थान की लोकसंस्कृति की अमूल्य धरोहर है। इसमें संगीत, लय, सौंदर्य, परंपरा तथा रोमांच का अद्भुत समन्वय दृष्टिगत होता है। यह नृत्य केवल एक कला नहीं, बल्कि कालबेलिया समुदाय के जीवन, संघर्ष एवं सांस्कृतिक अस्मिता का सजीव प्रतीक है। राजस्थान की धरा से उद्भूत यह लोककला भविष्य की पीढ़ियों को भी अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं से जोड़ने का कार्य निरंतर करती रहेगी।





रहीस भारती अपनी टीम के साथ पेरिस

कालबेलिया जिप्सी नृत्य

कालबेलिया नृत्य राजस्थान के कालबेलिया समुदाय का प्रसिद्ध लोकनृत्य है। यह समुदाय पारंपरिक रूप से सपेरों का समुदाय माना जाता है और साँपों को अपना मित्र समझता है। इसी कारण कालबेलिया नृत्य में साँप की चाल, लचक, अठखेलियों और विभिन्न मुद्राओं का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इसके प्रमुख रूपों में सपेरा या कोबरा नृत्य विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

यह नृत्य वर्षा, जन्म, दीक्षा, प्रेम, विवाह तथा अंत्येष्टि जैसे अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवसरों पर प्रस्तुत किया जाता है। नृत्य के समय पुरुष कलाकार वाद्ययंत्र बजाकर संगीत प्रदान करते हैं। वर्ष 2010 में UNESCO ने कालबेलिया नृत्य को अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की सूची में शामिल किया।

कालबेलिया नृत्य को अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाने में गुलाबों सपेरा का महत्वपूर्ण योगदान रहा। उनके अनुसार प्रारंभिक समय में यह नृत्य केवल पुरुषों द्वारा किया जाता था और महिलाओं के लिए इसकी प्रस्तुति वर्जित थी। किंतु उन्होंने सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती देकर इस नृत्य को नई पहचान और ऊँचाई प्रदान की।

कालबेलिया नृत्य की सबसे आकर्षक विशेषता इसकी सर्पवत लचक और शरीर की लोचपूर्ण गतियाँ हैं। नर्तकियाँ कमर को पीछे झुकाते हुए, हाथों की विशिष्ट मुद्राएँ बनाते हुए तथा विभिन्न संतुलनकारी क्रियाओं के माध्यम से साँप की गतियों का अनुकरण करती हैं। वस्त्रों में काले रंग के घाघरे और चोली का विशेष महत्व है, जिन पर शीशों, मोतियों और रंगीन कढ़ाई का कार्य किया जाता है। काला रंग कालबेलिया समुदाय की संघर्षशीलता, आत्मविश्वास और विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक माना जाता है।



बर्ना कर्ट, हजीरन (2007) क्यूचेक जिप्सी नृत्य (कुल्तूर और सियासेट फेमिनिस्ट याक्लैसिमलर डेरगिसिनिन निशिंदा यायनलानसीलर), स्रोत : www.feministiklasimlar.org

यूरोपियन क्यूचेक जिप्सी नृत्य

यूरोपियन क्यूचेक जिप्सी नृत्य रोमा जिप्सी समुदाय द्वारा किया जाने वाला एक लोकनृत्य है। यह मुख्यतः एकल नृत्य है, जिसमें नर्तक या नर्तकी पैरों की लयबद्ध गतिविधियों के साथ ओरिएंटल शैली की कूल्हों की गतियों का समन्वय करते हैं। यह नृत्य जटिल 2/4 बीट की लय पर आधारित होता है और अपनी उत्सवधर्मिता तथा ऊर्जा के लिए प्रसिद्ध है। रोमा समुदाय में इसे दावतों, विवाहों तथा अन्य सामाजिक अवसरों पर विशेष रूप से प्रस्तुत किया जाता है। क्यूचेक को 'ओर' नाम से भी जाना जाता है।

प्रारंभिक काल में यह नृत्य मुख्यतः खुले स्थानों, नुक्कड़ों और भीड़भाड़ वाले क्षेत्रों में किया जाता था। इसका उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं था, बल्कि लोककथाओं का

प्रचार-प्रसार करना तथा धार्मिक और सामाजिक परंपराओं को जीवित रखना भी था। समय के साथ इसकी प्रस्तुति में परिवर्तन आया और आज यह मंचीय रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है।

क्यूचेक नृत्य की एक विशेषता इसकी कलाबाजियाँ हैं। नर्तक या नर्तकी आँखों की पलकों से वस्तु उठाना, मुँह से पैसे या अंगूठी उठाना तथा विभिन्न प्रकार की चकरियाँ और संतुलनकारी क्रियाएँ प्रस्तुत करते हैं। अपनी आंगिक अभिव्यक्तियों और भाव-भंगिमाओं के माध्यम से कलाकार दर्शकों के साथ एक विशेष भावनात्मक संबंध स्थापित कर लेते हैं। इस नृत्य की शुरुआत सामान्यतः धीमी गति से होती है और अंत तक पहुँचते-पहुँचते इसकी गति तीव्र हो जाती है।

नृत्य के दौरान संगीत प्रायः पुरुष कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। गीतों और धुनों के विषय जनसामान्य की समस्याओं, सामाजिक एवं राजनीतिक विसंगतियों तथा आदर्श सामाजिक व्यवस्था की कल्पना से जुड़े होते हैं।

प्रारंभ में क्यूचेक नृत्य केवल पुरुषों द्वारा प्रस्तुत किया जाता था, क्योंकि उस समय स्त्रियों के सार्वजनिक रूप से नृत्य करने को समाज में स्वीकार्यता प्राप्त नहीं थी। यह एक सामाजिक वर्जना थी। किंतु समय के साथ परिस्थितियाँ बदलीं और आज यह नृत्य स्त्री एवं पुरुष दोनों द्वारा समान रूप से प्रस्तुत किया जाता है।

रोमानी और भारतीय नृत्य में साम्य

रोमानी और भारतीय नृत्य परंपराओं के अध्ययन से दोनों के बीच अनेक समानताएँ दिखाई देती हैं। रोमा समुदाय का भारतीय मूल से संबंध माना जाता है और उनके नृत्यों में भारतीय सांस्कृतिक प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। क्यूचेक और कालबेलिया नृत्य इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

दोनों नृत्यों में प्रारंभिक अवस्था में पुरुषों की प्रमुख भूमिका थी तथा महिलाओं की भागीदारी सीमित थी। समय के साथ दोनों समुदायों की महिलाओं ने सामाजिक बंधनों को चुनौती दी और नृत्य परंपराओं को नई पहचान प्रदान की।

वेशभूषा की दृष्टि से भी दोनों नृत्यों में समानता दिखाई देती है। रंग-बिरंगे घाघरे और चोली दोनों नृत्य शैलियों का महत्वपूर्ण अंग हैं। इनका उद्देश्य केवल सौंदर्य प्रदर्शन नहीं, बल्कि दर्शकों का ध्यान आकर्षित करना भी है।

नृत्य मुद्राओं के स्तर पर दोनों में उल्लेखनीय साम्य है। दोनों शैलियों में अंग, प्रत्यंग और उपांगों का संचालन समान प्रकार से किया जाता है। हाथों की मुद्राएँ, कमर को पीछे झुकाने की शैली, मुँह से वस्तु उठाने जैसी कलात्मक क्रियाएँ तथा साँप की चाल और गति का अनुकरण दोनों नृत्यों में समान रूप से दिखाई देता है।

प्रसिद्ध बुल्गारियाई रोमानी सैक्सोफोन वादक Yuri Yunakov ने भी स्वीकार किया है कि भारतीय संगीत उनकी संगीत शैली के अत्यंत निकट है। उनके अनुसार राजस्थान की कुछ धुनें क्यूचेक संगीत से अत्यधिक साम्य रखती हैं। बाल्कन क्षेत्र, अल्बेनिया, बुल्गारिया और तुर्की में प्रचलित क्यूचेक संगीत शैली पर भारतीय संगीत, विशेषकर भारतीय फिल्मी धुनों का प्रभाव देखा जा सकता है। मैसिडोनिया और सर्बिया के अनेक रोमानी संगीतकारों ने भारतीय संगीत और धुनों को अपनाया है, जिससे दोनों संस्कृतियों के बीच गहरे सांस्कृतिक संबंधों का पता चलता है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि क्यूचेक और कालबेलिया नृत्य न केवल अपनी संरचना और प्रस्तुति में समान हैं, बल्कि उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, नृत्य मुद्राओं, संगीत और अभिव्यक्ति में भी गहरा साम्य विद्यमान है।

उपसंहार

रोमा की भाषा रोमानी का उद्भव संस्कृत एवं उससे उत्पन्न प्राकृत भाषाओं से संबंधित है। संस्कृत, हिंदी, पंजाबी, डोमरी आदि भारतीय भाषाओं की शब्द संपदा रोमानी भाषा में विद्यमान है। उदाहरण के लिए 'पानी' के लिए रोमानी भाषा में 'पानी' तथा 'खाना' के लिए 'खाना' शब्द है जो संस्कृत के 'जल' व 'खाद्य' और हिंदी के 'पानी' व 'खाना' से आया है।

ऐतिहासिक तथ्य भी इसे समर्थित करते हैं कि रोमा भारत से प्रवासित हुए। ध्यातव्य है कि भारत से प्रवास के इतने लंबे अंतराल के बाद भी उनकी भारतीय सांस्कृतिक पहचान उनके नृत्य में आज भी सुरक्षित है और वे अपनी कलाओं के माध्यम से इसका प्रदर्शन और प्रकटीकरण कर रहे हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि रोमा की भाषा, सांस्कृतिक व्यवहार और कला रूपों में भारतीयता जीवित है। उनमें आज भी भारतीय सांस्कृतिक परंपराएँ और कलाएँ स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती हैं तथा रोमानी कला एवं संस्कृति में आज भी भारतीय लोक नृत्य और चित्रकला के प्रभाव विद्यमान हैं।

रोमा समुदाय की भाषा, सांस्कृतिक व्यवहार और कला रूपों की भारत से गहरी समीपता है, जो उनके ऐतिहासिक मूल और सांस्कृतिक विरासत से जुड़ी है। रोमा समुदाय की उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप से मानी जाती है। ऐतिहासिक तथ्यों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि महमूद गजनी द्वारा रोमा को प्रव्रजित किया गया। उनके प्रव्रजन का मूल कारण उनकी कलाएँ एवं कौशल था। उन्हें मनोरंजन के लिए अफगानिस्तान ले जाया गया, विशेषकर कन्नौज क्षेत्र से।

भाषिक दृष्टि से रोमानी भाषा का उद्भव संस्कृत और प्राचीन भारतीय भाषाओं से हुआ है। यह भाषा इंडो-आर्यन भाषा परिवार से आती है, जो हिंदी, पंजाबी, गुजराती और राजस्थानी जैसी भाषाओं से संबंधित है। रोमानी भाषा की शब्द संपदा में

संस्कृत, हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के पर्याप्त शब्द शामिल हैं। यद्यपि रोमानी भाषा के विभिन्न रूप (डायलेक्ट्स) यूरोप में उनके प्रवास के कारण बदल गए हैं, लेकिन मूल भाषाई जड़ें भारतीय हैं। इसको समझने के लिए नीचे दी गई सारणी का अवलोकन किया जा सकता है—

संस्कृत	हिंदी/भारतीय भाषाएँ	रोमानी भाषा
जननी	माँ	दाई (dai)
द्वार	दरवाज़ा	दुर (dur)
अक्षि	आँख	आख (ak)
जल	जल, पानी	जल (jal)
पाद	पैर	पाय (paj)
दन्त	दांत	दांत (dant)
अश्व	घोड़ा	अस्व (asva)
अन्ध	अंधा	अंधारो (andaro)
एक	एक	एकह (ekah)
द्वि/द्वा	दो	दुई (dui)

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि रोमानी भाषा भारतीय भाषाओं, विशेष रूप से संस्कृत और उससे उत्पन्न प्राकृत भाषाओं से गहरा संबंध रखती है। इसकी संरचना और कई शब्दों की ध्वनियाँ संस्कृत और आधुनिक भारतीय भाषाओं, जैसे हिंदी के शब्दों से मेल खाती हैं। इस कारण दोनों भाषाओं के बीच गहरी समानता देखी जा

सकती है। विशेष रूप से संबंधों और संख्याओं से संबंधित शब्दों में स्पष्ट समानताएँ हैं, जो रोमानी समुदाय की भारतीय जड़ों की पुष्टि करती हैं।

रोमा भारत से प्रवासित हुए। वे अपनी सांस्कृतिक गठरी अपने साथ ले गए। अलग-अलग काल-खंडों में वे जहाँ भी प्रवासित हुए, वहाँ की संस्कृति से प्रभावित हुए, किंतु उन्होंने अपनी मूल सांस्कृतिक पहचान किन्हीं रूपों में सुरक्षित रखी। इसी कारण संस्कृति और सांस्कृतिक व्यवहार की दृष्टि से रोमा समुदाय के पारंपरिक रीति-रिवाजों और सामाजिक ढाँचे में भारतीय संस्कृति की झलक मिलती है। उदाहरण के लिए, शादी की रस्मों में संगीत, नृत्य और समुदाय की भागीदारी, देवी-देवताओं की पूजा, उनका चित्र बनाना आदि भारतीय संस्कृति के निकट है। परिवार और समुदाय में बड़े-बुजुर्गों का सम्मान, पारिवारिक संरचना और अपने समूह के साथ गहरे संबंध भारतीय सामाजिक व्यवस्था की तरह ही है। यात्रा और खानाबदोश जीवन शैली भी भारतीय इतिहास में कई समुदायों से जुड़ी है, जैसे बंजारा। रोमा समुदाय का खानाबदोश जीवन भारत में बंजारों की तरह ही था, जो आज भी यात्रा करते हैं और अपना जीवन-यापन करते हैं।

रोमा समुदाय की संगीत और नृत्य की परंपरा में भारतीयता परिलक्षित होती है। रोमानी संगीत में भी ताल, सुर और वाद्ययंत्रों का उपयोग भारतीय शास्त्रीय और लोक संगीत से मिलता-जुलता है। रोमा जिप्सी नृत्य और लोक संगीत भारतीय लोकनृत्य जैसे राजस्थानी कालबेलिया और अन्य जिप्सी नृत्यों के समान है। रोमा जिप्सी नृत्य की शैलियाँ तथा उनमें गति के साथ शारीरिक क्रियाओं—अंग, प्रत्यंग और उपांग— का संचालन भारतीय नृत्य रूपों से प्रेरित है।

रोमा समुदाय का भारत से गहरा सांस्कृतिक संबंध उनकी भाषा, रीति-रिवाजों और कला में परिलक्षित होता है। उनका खानाबदोश जीवन, संगीत परंपरा और भारतीय भाषाओं से संबंध यह दर्शाता है कि उनकी जड़ें भारतीय उपमहाद्वीप से जुड़ी हुई हैं, और यह संबंध आज भी उनके व्यवहार और कला रूपों में विद्यमान है।

नृत्य की मुद्राओं के भाव, ऊर्जा और उद्देश्य को पहचानना ज़रूरी है। इनका अर्थ प्रायः प्रतीकात्मक, सांस्कृतिक और रागात्मक होता है। उदाहरण के लिए, भारतीय

लोकनृत्य में कालबेलिया नृत्य के दौरान नर्तकी के नंगे पैरों का स्थिर मुद्रा में होना, चेहरे पर कांति, आँखों में काजल, होठों पर मुस्कुराहट, गालों पर लालिमा का होना तथा उसका अंग, प्रत्यंग और उपांग संचालन को थोड़ा स्थिर करते हुए एक हाथ को कमर पर रखकर ठहराव की मुद्रा में दर्शकों की ओर देखना, भाव-भंगिमाओं से उन्हें मंत्रमुग्ध करने, अपनी ओर आकर्षित करने और कमनीयता का प्रतीक हो सकता है। इसी प्रकार, शास्त्रीय नृत्य की एक मुद्रा में उठे हुए हाथ और झुका हुआ सिर भक्ति या आत्मसमर्पण का प्रतीक हो सकता है।

प्रत्येक नृत्य में मुद्रा (हाथ, पैरों, आँखों आदि की स्थिति) का गहरा सांस्कृतिक, संवेगात्मक और प्रतीकात्मक अर्थ होता है, जो अनुभवात्मक होता है। इसमें माध्यम की विविधता हो सकती है। इन मुद्राओं को भाषिक प्रतीक व्यवस्था में अनूदित करने के लिए उनके सांस्कृतिक, संवेगात्मक और प्रतीकात्मक अर्थ को ग्रहण करना आवश्यक है। इसी के उपरांत उनका ठीक-ठीक अनुवाद एवं निर्वचन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 'कटाक्ष' (नजरों के तीव्र इशारे) को प्रेम या शरारत के संकेत के रूप में समझा जाता है।

नृत्य की गति, लय और शक्ति को अनूदित करते समय "तेज़ी से घूमते कदम" या "धीमे, कोमल हाथों की हरकतें" जैसी भाषा का उपयोग किया जा सकता है, जिससे पाठक या दर्शक उस संवेदना को महसूस कर सके जो नृत्य में होती है।

रोमा इतिहास के काल-खंड विशेष में विषम परिस्थितियों में भारत से प्रवासित हुए। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है। इस कारण उनकी कलाएँ वस्तुतः भारतीय हैं। विभिन्न देशों में प्रवासित होने के बाद, वहाँ की संस्कृतियों और कलाओं से प्रभावित होने के बाद भी रोमा की नृत्य मुद्राओं और भारतीय नृत्य मुद्राओं के बीच कई समानताएँ हैं, जो उनके सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संबंधों को दर्शाती हैं। रोमा समुदाय की जड़ें भारतीय उपमहाद्वीप से होने के कारण उनकी नृत्य शैलियों और मुद्राओं में भारतीय नृत्य परंपराओं की छवि दिखती है। उदाहरण के लिए हस्त मुद्राओं, शारीरिक गति—अंग, प्रत्यंग और उपांग संचालन, लय, पैरों की चपलता और ताल, घुमावदार और गोलाकार गतियाँ, नृत्य का भाव, प्रदर्शन का ढंग, नृत्य में

पाद-टिप्पणियाँ

i Munster, S. (1544 in German & 1550 in Latin). Cosmographia Universalis. (Trans. R. Eden [1521-1576], from Latin to English).

ii Cesare Vecellio (1521-1601 CE), an Italian painter and engraver of the Renaissance, wrote the book De gli habiti antichi et moderni di diuerse parti del mondo libri dve, written in Italian language in 1590.

iii Vecellio, C. (1590). De gli habiti antichi et moderni di diuerse parti del mondo libri dve. Venetia: Presso Damian Zenaro.

iv Matras, Yaron. (1999). Johann Rüdiger and the Study of Romani in 18th Century Germany. In: JGLS, 5th series, 9:89-116.

v Paspati, Alexandre G. (1870). [1973] Études sur les Tchinghianés ou Bohémiens de l'Empire Ottoman. Osnabrück: Biblio.

vi Pott, August F. (1844-1845). Die Zigeuner in Europa und Asien. Halle: Heynemann

vii Miklosich, Franz. (1874). Beiträge zur Kenntnis der Zigeunermundarten. Vienna.

viii Borrow, George Henry. (1905). The Romany Rye: A Sequel to "Lavengro". New York: G.P. Putnam's Sons.

ix https://www.rromanes.org/pub/alii/Turner%20R.L.%20The%20Position%20of%20Romani%20in%20Indo-Aryan.pdf

x Vályi István को रोमानी समुदाय की भारतीय उत्पत्ति की खोज का प्रथम प्रवर्तक माना जाता है।

xi Johann Christian Christoph Rüdiger, 1782 — रोमानी–भारतीय तुलनात्मक भाषाविज्ञान का आधारभूत कार्य।

xii Wiener Anzeigen (1763) रोमानी की भारतीय उत्पत्ति का प्रथम प्रकाशित स्रोत है।

xiii https://www.iwraw-ap.org/romani-womens-struggle-for-human-rights/

xiv https://fra.europa.eu/sites/default/files/fra_uploads/fra-2014-roma-survey-dif-women-2_en.pdf

xv https://www.museuvirtualgitano.cat/en/art/the-roma-and-music/

xvi Hancock, I. (2002). The development of Romani linguistics in Languages and culture.

xvii Fonseca, I.(1996).Bury Me Standing .The Gypsies and their Journey:New York: Random House.

xviii यह राग भगवान शिव के स्वरूप भैरव से जुड़ा है। इस राग में कोमल स्वरों का प्रयोग ज़्यादा होता है, जिससे यह शांत और मधुर लगता है, इस राग में रे, ग, ध, और नि कोमल लगते हैं और म को वादी और स को संवादी स्वर माना गया है।

xix नैवेद्य का मतलब 'प्रयोजन' भी होता है ।

xx धनुष से बजाई जाने वाली पारंपरिक तार वाली वीणा जैसी वाद्य।

xxi यह एक धनुष से बजाया जाने वाला तंतु वाद्ययंत्र है।

References

- Borde, Andrew. The Fyrst Boke of the Introduction of Knowledge. London, N. Trubner & Co., 1870.
- Cortiade, Marcel. The Rromani People's Origins: Chronicles and Legends. Paris, INALCO, 2002.
- Courthiade, Marcel. "Knowledge Based on Sources and Historical Data Versus Knowledge Based on Clichés and Legends in the Indian Stage of Rromani History." Analele Universităţii Ovidius din Constanţa. Seria Filologie, no. 2, 2016, pp. 237–282.
- Eco, Umberto. A Theory of Semiotics. Bloomington, Indiana University Press, 1979.
- Fine, Elizabeth C. The Folklore Text: From Performance to Print. Bloomington, Indiana University Press, 1984.
- Fraser, Angus. The Gypsies. USA, Blackwell, 1992.
- Hancock, Ian. We Are the Romani People. UK, University of Hertfordshire Press, 2002.
- Shashi, S. S. Roma: The Gypsy World. Delhi, Sundeep Prakashan, 1990.
- Silverman, Carol. Romani Routes: Cultural Politics and Balkan Music in Diaspora. New York, Oxford University Press, 2012.
- Pârlog, Aba-Carina. Intersemiotic Translation: Literary and Linguistic Multimodality. Switzerland, Palgrave Macmillan, 2019.
- Aguiar, D., and J. Queiroz. "Modeling Intersemiotic Translation: Notes toward a Peircean Approach." Applied Semiotics, no. 24, 2010, pp. 68–81.
- "Semiosis and Intersemiotic Translation." Semiotica, vol. 196, 2013, pp. 283–292.
- Aguiar, D., P. Atã, and J. Queiroz. "Intersemiotic Translation and Transformational Creativity." Punctum, vol. 1, no. 2, 2015, pp. 11–21.

- Barthes, Roland. “La rhétorique de l’image.” Communications, no. 4, 1964, pp. 40–51.
- “Éléments de Sémiologie.” Communications, no. 4, 1964, pp. 91–135.
- Clüver, Claus, and Burton Watson. “On Intersemiotic Transposition.” Poetics Today, vol. 10, no. 1, 1989, pp. 55–90.
- Aguiar, D., and J. Queiroz. “From Gertrude Stein to Dance: Repetition and Time in Intersemiotic Translation.” Dance Chronicle, vol. 38, no. 2, 2015.
- Deely, John. What Distinguishes Human Understanding? South Bend, St. Augustine’s Press, 2002.
- Díaz-Cintas, Jorge. “Audiovisual Translation Today: A Question of Accessibility.” Translating Today, no. 4, 2005, pp. 3–5.
- “Audiovisual Translation.” The Bloomsbury Companion to Language Industry Studies, edited by Erik Angelone, Maureen Ehrensberger Dow, and Gary Massey, Bloomsbury, 2019.
- Edeline, Francis. “La plasticité des catégories.” La sémiotique visuelle: nouveaux paradigmes, edited by Michel Constantini, L’Harmattan, 2010, pp. 205–224.
- Fabbri, Paolo. Le tournant sémiotique. Paris, Lavoisier, 2008.
- Firdusi, A. Q. Shahnama. Tehran, Gotestan Palace Library, 1010.
- Greimas, Algirdas, and Joseph Courtés. Sémiotique: Dictionnaire Raisonné de la Théorie du Langage. Paris, Hachette, 1993.
- Greimas, Algirdas-Julien. Structural Semantics: An Attempt at a Method. Lincoln, University of Nebraska Press, 1983.
- Hancock, Ian. The Pariah Syndrome. Ann Arbor, Karoma, 1987.
- Some Aspects of Gypsies and Gypsy Nationalization Land of Pain Five Centuries of Gypsy Slavery. London, 1989.
- “The Development of Romani Linguistics.” Languages and Culture, 2002.
- Hjelmslev, Louis. Prolegomena to a Theory of Language. Edited by F. Whitfield, University of Wisconsin Press, 1943.

- Jakobson, Roman. “On Linguistic Aspects of Translation.” On Translation. Harvard University Press, 1959.
- Kanica, B. Romani Music Gypsy Criminality. Cornell University Press, 2004.
- Kochanowski, Vania de Gila. Gypsies. Romania, Vaniya De Geel, 2005.
- Leland, G. The Gypsy. Moscow, Tsygane, 1882.
- Liégeois, J. P. Gypsies Group. London, 1986.
- Martinez, N. Les Tsiganes. Paris, Oxford Group, 1986.
- Matras, Yaron. Romani: A Linguistic Introduction. Cambridge University Press, 2002.
- Metz, Christian, and Raimond Bellour. “Entretien sur la sémiologie du cinéma.” Semiotica, vol. 4, no. 1, 1971, pp. 1–30.
- Navarro, Joe, and Marvin Karlins. What Every Body Is Saying. HarperCollins, 2008.
- Nida, Eugene A. Toward a Science of Translating. Leiden, E. J. Brill, 1964.
- Nunes, O. O Povo Cigano. Romaniya, Oporto, 1981.
- Paspati, A. G. Observations on the Language of the Gypsies. Paris, Archaeologia, 1863.
- Pott, A. Dialects of Gypsies. Bucharest, Contributiuni la istoricul, 1884.
- Rudiger, J. C. C. El Cante Jondo. London, Granada, 1982.
- Sampson, John. The Dialect of the Gypsies of Wales. London, Gypsy Lore Society, 1926.
- Monogenesis Theory. Romania, Zurich, 1926.
- Solis, J. The Greek Gypsies at Liverpool. Romania, Chamber’s Journal, 1961.
- Steiner, George. After Babel: Aspects of Language and Translation. Oxford University Press, 1976.
- Tarnar, S. R. Die Roma Rumaniens. Vienna, The Rodi Norway, 1927.
- Thomas, A. The History of Gypsies. London, Staged, 2005.

- Toporov, Vladimir. “Translation: Sub Species of Culture.” Meta, vol. 37, no. 1, 1992, pp. 29–49.
- Torop, Peeter. “Translation as Translating as Culture.” Sign System Studies, vol. 30, no. 2, 2002, pp. 593–605.
- “Translation and Semiotics.” Sign System Studies, vol. 36, no. 2, 2008, pp. 253–257.
- “Culture and Translation.” Estonian Approaches to Culture Theory, edited by Valter Lang and Kalevi Kull, vol. 4, Tartu University Press, 2014, pp. 36–63.
- Van Leeuwen, Theo. The Language of Colour: An Introduction. Routledge, 2011.
- Vekerdi, József. “The Gypsies and the Gypsy Problem in Hungary.” Hungarian Studies Review, 1988, pp. 13–26.
- Yurik, R. Roma Magenag. London, Lavengro, 1987.
- Zograf, G. A. East European Gypsies in Western Europe: The Social and Cultural Adaptation of the Xoraxane. Paris, Nomadic Peoples, 1976.
- Achim, Viorel. *The Roma in Romanian History*. Central European University Press, 2004.
- Acton, Thomas. "Has Rishi Gone Out of Style? Academic and Policy Paradigms in Romani Studies." 2005.
- Aizpurua-Iraola, J., et al. "Founder Lineages in the Iberian Roma Mitogenomes Recapitulate the Roma Diaspora and Show the Effects of Demographic Bottlenecks." *Scientific Reports*, vol. 12, 2022, article 18720. https://doi.org/10.1038/s41598-022-23349-9.
- Anwar, Zameer. *Introductory Survey to Demonstrate the Kinship between Romani and Indo-Aryan Languages*. Academia.edu, 2021.
- Avraham, Sándor. *The True Origin of Roma and Sinti*. The Romanestan Webring, 2004.
- Bartosz, Adam. "Carpathian Gypsies and the Rural Community." *Ethnologia Polona*, 1981.
- ---. "Na Wielkim Postoju." *Pożegnanie Taboru*, edited by A. Polakowski, Brama Grodzka–Teatr NN, 1967, pp. 83–86.

- Borrow, George Henry. *The Romany Rye: A Sequel to Lavengro*. G. P. Putnam's Sons, 1905.
- Burton, Richard F. "The Indian Affinities of the Gipsies." *The Academy*, vol. 7, 1875, pp. 324–325.
- ---. *The Jew, the Gypsy and El Islam*. The Angriff Press, 1898.
- Courthiade, Marcel. *The Rromani People's Origins: Chronicles and Legends*. INALCO, 2002.
- ---. "Knowledge Based on Sources and Historical Data Versus Knowledge Based on Clichés and Legends in the Indian Stage of Rromani History." *Analele Universităţii Ovidius din Constanţa. Seria Filologie*, no. 2, 2016, pp. 237–282.
- Crowe, David M. *A History of the Gypsies of Eastern Europe and Russia*. St. Martin's Press, 1994.
- Čvorović, Jelena. "Serbian Gypsy Narrative: Between Preferred and True Identity." *Oral History Review*, vol. 36, no. 1, 2009. https://doi.org/10.1093/ohr/ohn058.
- Drużyńska, Joanna. *Ostatni Tabor: Jak Władza Ludowa Zakazała Cyganom Wędrowania*. Rebis, 2015.
- Ficowski, Jerzy. *Cyganie na Polskich Drogach*. Wydawnictwo Literackie, 1965.
- ---. *Cyganie Polscy*. Państwowy Instytut Wydawniczy (PIW), 1995.
- Fonseca, Isabel. *Bury Me Standing: The Gypsies and Their Journey*. Alfred A. Knopf, 1996.
- Fraser, Angus. *The Gypsies*. Blackwell, 1992.
- Ganguly, D. C. "The Struggle for Empire." *The Struggle for Empire*, edited by R. C. Majumdar, Bharatiya Vidya Bhavan, 1957.
- Hancock, Ian. "The Emergence of Romani as a Koïné Outside of India." *Scholarship and Gypsy Struggle: Commitment in Romani Studies*, edited by Thomas Acton, University of Hertfordshire Press, 1987.
- ---. "The Development of Romani Linguistics." *Languages and Cultures: Studies in Honor of Edgar C. Polomé*, edited by Ali Jazayery and Werner Winter, Mouton, 1988, pp. 183–223.

- ---. "On the Migration and Affiliation of the Rom, Lom and Dom Gypsy." *Romani in Contact*, edited by Yaron Matras, John Benjamins Publishing Company, 1995, pp. 25–51.
- ---. "The Emergence of Romani as a Koïné Outside of India." *Scholarship and the Gypsy Struggle*, edited by Thomas Acton, University of Hertfordshire Press, 2000.
- ---. *We Are the Romani People: Ame Sam e Rromane Džene*. University of Hertfordshire Press, 2002.
- ---. *On Romani Origins and Identity*. Romani Archives and Documentation Center, University of Texas at Austin, 2006.
- Harriot, J. S. "Observations on the Oriental Origin of the Romnichal, or Tribe Miscalled Gypsey and Bohemian." *Transactions of the Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland*, vol. 2, no. 2, 1830, pp. 518–558. https://doi.org/10.1017/S0950473700000562.
- Kenrick, Donald. *Gypsies: From the Ganges to the Thames*. University of Hertfordshire Press, 2004.
- Kochanowski, Vania de Gila. "Aryan and Indo-Aryan Migrations." *Diogenes*, no. 149, 1990, pp. 122–145.
- ---. *Parlons Tsigane: Histoire, Culture et Langue du Peuple Tsigane*. L'Harmattan, 1994.
- Leland, Charles Godfrey. *The Gypsies*. Houghton, Mifflin and Co., 1882.
- Matras, Yaron. "Johann Rüdiger and the Study of Romani in Eighteenth-Century Germany." *Journal of the Gypsy Lore Society*, 5th ser., vol. 9, 1999, pp. 89–116.
- Miklosich, Franz. *Beiträge zur Kenntnis der Zigeunermundarten*. Vienna, 1874.
- Mróz, Lech. "O Problemie Cygańskim." *Etnografia Polska*, vol. 10, 1966, pp. 178–195.
- ---. "Wozy Cygańskie." *Polska Sztuka Ludowa*, vol. 23, nos. 3–4, 1979, pp. 77–94.
- ---. "On Philistines, Gypsies Alias Wałęsas: An Outline History of Romani Studies in Poland." *Lud*, vol. 79, 1995, pp. 241–256.
- Münster, Sebastian. *Cosmographia Universalis*. 1544.

- Nyka, Lucyna, and Jakub Szczepański. "Travelling Architecture: Vanishing Heritage of Gypsy Caravans in Poland." *Journal of the International Society for the Study of Vernacular Settlements*, vol. 6, no. 2, 2019, pp. 50–58.
- Paspati, Alexandre G. *Études sur les Tchinghianés ou Bohémiens de l'Empire Ottoman*. Biblio, 1973.
- Polakowski, A. *Pożegnanie Taboru: Fotografie*. Wydawnictwo Teatr NN, 1967.
- Pott, August F. *Die Zigeuner in Europa und Asien*. Heynemann, 1844–45.
- Raoy, B. *Travelling Art: Gypsy and Canal Barges*. The History Press, 1996.
- Reynolds, James. *The Kitab-i-Yamini*. London, 1858.
- Sampson, John. *The Dialect of the Gypsies of Wales*. Clarendon Press, 1926.
- Shashi, S. S. *Roma: The Gypsy World*. Sundeep Prakashan, 1990.
- Silverman, Carol. *Romani Routes: Cultural Politics and Balkan Music in Diaspora*. Oxford University Press, 2012.
- Soulis, George C. "The Gypsies in the Byzantine Empire and the Balkans in the Late Middle Ages." *Dumbarton Oaks Papers*, vol. 15, 1961, pp. 141–165.
- Turner, Ralph L. *The Position of Romani in Indo-Aryan*. Gypsy Lore Society, 1927.
- Vaux de Foletier, François de. "Their World, Their Homeland – Gypsies." *UNESCO Courier*, Oct. 1984.
- Vecellio, Cesare. *De gli habiti antichi et moderni di diverse parti del mondo libri due*. Presso Damian Zenaro, 1590.
- Vekerdi, József. "The Gypsies and the Gypsy Problem in Hungary." *Hungarian Studies Review*, vol. 15, no. 2, Fall 1988, pp. 13–26.
- Woolner, C. A. *Introduction to Prakrit*. University of the Punjab, 1928.
- Zograf, G. A. "Novye Indoarijskie Jazyki." *Jazyki Azii i Afriki*, vol. 1, edited by N. I. Konrad et al., Nauka, 1976, pp. 141–270.